

## अ०मं०१ सू०१२० ।

अश्विनौदेवते, औशिजोदैर्घतमसः कक्षीवानृषिः ।

विनियोगः—

१—९ । आदितो नखों घर्माभिष्टवे विनियुक्ताः (भा० धा६३)

शिष्टाणां लैङ्गिकः ।

सूक्त का भाषार्थ ।

हे अश्विनो ! आप को कौनसा यज्ञ रचना है ? कौन (ऐसा भाग्यशाली है जो) आप को प्रसन्न करने में तत्पर है, (मुझ जैसा) भक्त कैसे आप की सेवा करे ? १ । महानी इन्हीं विद्वान् (अश्विनों) से (स्तुति और पूजा करने की विधि को) पूछे, इनसे दूसरा (अर्थात् मनुष्य) भक्त है, सचमुच मरणधर्मी (मनुष्य) के लिये यही कोट (की न्याईं आश्रय दाता) हैं । २ । ऐसे विद्वानों को हम चुलाते हैं, वे आप हम को स्तुति का भजन बतावें \* आप का भक्त हवि देता हुआ आप को अत्यन्त नमस्कार करता है । ३ । हे तेजस्वी (अश्विनो ! ) मैं बालक की न्याईं देवताओं से भद्भूत घपट्कार से † किये हुए (होम का तत्त्व) पूछता हूँ, (हे देवो ! ) आप दोनों (हम से) अधिक बलवाले से हमारी रक्षा करें, प्रचण्ड (शत्रु) से हमें बचावें । ४ । हे अश्विनो ! जो पाणो भृगु जैसे (महार्मा)

\* अर्थात् स्तुति को भजन बनाने की शक्ति हम को दें, जैसे मंत्रद्रष्टा ऋषियों को दी थी ।

† दुर्ग पीर्णमास आदि इष्टियों में मंत्र पढ़ कर अन्त में 'बोश्पट्' ऐसा बोल कर अग्नि में गाड़ति डाली जाती है । इसका नाम घपट्कार है ॥

घोषा के पुत्र \* में सजती है और जिस घाणी से पञ्चवंशी (कक्षीवान) आप को पूजता है, वह बाणी सफल हो, जैसे उद्योगी विद्वान (सफलमनोरथ होता है) १५। हे अश्विनो! आप मुझ पंछी † के स्तोत्र को सुनो, सबगुण में ही आप के लिये कूका हूँ, हे सौन्दर्य के स्वामी ! आप (अन्धों को) आँखें देने वाले हो । १६। आप ही महत्त्व के देने वाले हो, आप ही महत्त्व के छीनने वाले हो, हे धन वालो, ऐसे आप हमारे सुरक्षक बनो और पाप चीतने वाले चोर से हम को बचाओ । १७। हमें किसी चैरी क ताई मत सींरो, स्तनों द्वारा पालने वाली हमारी गौएँ बछड़ों से वियुक्त होकर घर से बाहर किसी अयोग्य स्थानमें न जावें । १८। आपके भक्त अपने मित्र-वर्ग के पोषण के लिये आपको दाहन करें, आप हमें बल युक्त धन (का प्राप्त) के लिये योग्य करें, आप हमें गौओं से युक्त भूत (की प्राप्ति) के लिये योग्य बनावें । १९। मैंने बहुत अन्न के स्वामी अश्विनो के रथ को जो बिना घोड़ों के चलता है पालिया है, मैं उस (रथ) से बहुत कामनाएँ प्राप्त करूँगा । २०। हे धन से पूर्ण (रथ) ! तू मुझे विस्तारयुक्त कर, इस सुख के मंडार रथ को (अश्विनदेव) मनुष्यों की भोर सोम पीने के स्थान में ले जाते हैं । २१। अब मैं (दुष्ट) स्वप्न से विन्म हूँ और उस धनी से जो भोग नहीं करता, ये दोनों शीघ्र नष्ट होंगे ॥ २२॥

\* घोषा कक्षीवान को पुत्री और अ० १०।३९, ४० की द्रष्टा कृपि है, घोषा या पुत्र सुहस्र्य अ० १०, ४१ का द्रष्टा है ।

† पक्षीघ्न अपने आप को पंछी कहते हैं, जिस को कक यह स्तोत्र है ।

अश्विनौदेवते निचृद्गायत्रीछन्दः । ८। ७। ८

का॒रा॒ध॒हो॒त्राऽश्वि॒ना॒वा॒ को॒वा॒

जोष॑उ॒भयोः॑ । क॒थावि॒धा॒त्यप्र॑चेताः

॥ १ ॥

का	कः	कौन
रा॒ध॒त्	रोचते (लेटघडागमः)	भाता है
हो॒त्रा	यज्ञः (निघं० ३।१७)	यज्ञ
अ॒श्वि॒ना	ह अश्विनौ !	हे अश्विदेवो...
वा॒म्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
कः	कः	कौन
वा॒म्	युवयोः	तुम्हारे
जोषे	प्रीणने	प्रसन्न करने में

उभयोः	उभयोः	दोनों के
कथा	कथम् (प्रकारवचने या प्रत्ययः किमःकादेशश्च)	कैसे
विधाति	परिचरेत् (निघं०३।५,लेटघडागमः)	सेवा करे
अप्रचेताः	अज्ञः	न जानने वाला

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनो ! को यज्ञः युवाभ्यां रोचते ? उभयो-  
र्युवयोः प्रीणने कः (तत्परः?, ) अज्ञः (युवाम् ) कथं  
परिचरेत् ? ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! कौनसा यज्ञ आपको भाता है ?  
आप को प्रसन्न करनेमें कौन (तत्पर है ? ) न जानने  
वाला कैसे (आप की) सेवा करे ? ॥१॥

अश्विनोदेवते विराट्ककुपुलन्दः । ८।११।७

विद्वांसाविद्वुरःपृच्छे दविद्वानि-



तथाऽपरो अचेताः । नूचिन्ननुमर्ते

अक्रौ ॥ २ ॥

विद्वांसौ	विद्वांसौ	दोनों विद्वानों को
इत्	एव	ही
दुरः	द्वाराणि, स्तुति- परिचरणयो- रुपायान् इत्यर्थः	द्वारों को अर्थात् स्तुति और पूजा के उपायों को
पृच्छेत्	पृच्छेत्	पूछे
अविद्वान्	अजानन्	न जानता हुआ
इत्था	आभ्याम्	इन दोनों से
अपरः	अन्यः	दूसरा
अचेताः	अज्ञः	अज्ञ
नु	नु+	-

चित्	नु+चित्, किं न	क्या नहीं
नु	खलु	सचमुच
मर्ते	मरणधर्मणे (क्विप्)	मरण धर्मी के लिये
अक्रौ	प्राकारौ (निघं०४।३)	कोट ८

संस्कृतार्थः ।

अजानन् ( मनुष्यः एतौ ) विद्वांसौ एव स्तुति-  
पूजनयोरुपायान् पृच्छेत्, आभ्याम् अन्यः अज्ञः  
(अस्ति,) किम् (एतौ) मरणधर्मणे प्राकारौ न ? ॥२॥

भाषार्थः ।

न जानता हुआ ( मनुष्य इन ) विद्वानों से ही  
स्तुति और पूजा के उपायों को पूछे इनसे  
दूसरा अज्ञानी ( है, ) क्या ( ये ) मरणधर्मी के  
लिये कोट नहीं ( हैं ? ) ॥ २ ॥

अश्विनौदेवते काविराट्छन्दः । १।१२।९

ताविद्वांसाह्वामह्वेषां तानोवि-

द्वा॒ंसा॒म॒न्म॑वोचे॒त॒म॒द्य । प्रा॒र्च॒द्दय॑-  
मा॒नो॒यु॒वा॒कुः ॥ ३ ॥

ता	तौ	उन दोनों को
वि॒द्वां॒सा॑	विद्वांसौ (विभक्तेरात्वम्)	विद्वानों को
ह॒वा॒म॒ह॒	आह्वयामः	हम बुलाते हैं
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
ता	तौ	वे दोनों
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
वि॒द्वां॒सा॑	विद्वांसौ	विद्वान
म॒न्म॑	स्तुतिगीतम् (भा० को०)	स्तुति के भजन को
वो॒चे॒त॒म्	कथयतम्	बताओ

अद्य	अद्य	आज
प्र	प्र +	—
आर्चत्	प्र + आर्चत्, सुतरां नमस्करोति (लङ्येलङ्)	अत्यन्त नमस्कार करता है
दयमानः	(हविः) ददानः	(हवि) देता हुआ
युवाकुः	युवां कामयमानः (कमेर्ङुः, प्रत्ययः अविभ- कावपि व्यत्ययेन युवा- देशः आत्वंच)	आपकी कामना करता हुआ

संस्कृतार्थः ।

विद्वांसौ तौ युवाम् (वयम्) आह्वयामः, तौ विद्वांसौ  
(युवाम्) अम्मभ्यं स्तुतिगीतं कथयतम्, अद्य  
युवयोरभिलाषुकः (हविः) प्रयच्छन् (सन्) सुतरां  
नमस्करोति ॥३॥

भाषार्थः ।

— उन आप विद्वानों को हम बुलाते हैं, वे विद्वान  
आप हमारे लिये स्तुति के गीत को बनावें, आज  
आपका अभिलाषी (हवि) देता हुआ खूब  
नमस्कार करता है ॥ ३ ॥

अश्विनौदेवते नष्टरूपाछन्दः । १ । १० । १३ ।

वि॒पृ॒च्छामि॒पा॒क॒या॒श्न॒दे॒वान्

व॒षट्कृत॑स्याऽद्भु॒तस्य॑दस्त्रा । पा॒तं॒च

स॒ह्य॒सी॒यु॒वं॒च॒र॒भ्य॒सी॒नः ॥ ४ ॥

वि	वि+	-
पृ॒च्छामि॒	वि+पृच्छामि	पूछता हूं
पा॒क॒या॒	बालः (सुपामिति विमकोर्डा)	बालक
न	इव	की न्याई
दे॒वान्	देवान्	देवताओं को
{ व॒षट्कृत॑- ते॒स्य	वषट्कृतस्य	वषट्कार किये हुए के
अ॒द्भु॒तस्य॑	अद्भुतस्य	अद्भुत के

दस्त्रा	हे उग्रौ !	हे उग्रो
पातम्	रक्षतम्	वचाओ
च	(पूरणः)	—
सह्यसः	चलवत्तरात्	अधिकबलवानसे
युवम्	युवाम्	तुम दोनों
च	च	और
रभ्यसः	प्रचण्डात्	प्रचंडःसे
नः	अस्मान्	हम को

संस्कृतार्थः ।

हे उग्रौ ! ( अश्विनौ ! ) अहं देवान् घाल इव  
अद्भुतस्य वपट्कृतस्य (होमस्य विषये) पृच्छामि,  
युवाम् अस्मान् चलवत्तरात् प्रचण्डाच्च ( मनुष्यात् )  
रक्षतम् ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे उग्र ( अश्विनौ ! ) मैं देवताओं से घालक

की न्याईं अद्भुत वषट्कार किये हुए (होम के विषय में) पूछता हूं, आप हम को अधिक बल-वाले से और प्रचंड (मनुष्य) से बचावें ॥ ४ ॥

यज्ञ में जो वषट्कार उच्चारण करके हवि दी जाती है, उसका रहस्य बालक बन कर देवताओं से पूछने से ही समझ में आ सकता है। युक्तियों से नहीं।

अश्विनौदेवते तनुशिराछन्दः । ११ । ११ । ६

प्रयाघोषेभृगवाणेनशोभे यथा  
वाचायजतिपजियोवाम् । प्रैषयुर्न  
विद्वान् ॥ ५ ॥

प्र	प्र-(गच्छतु)	आगे बढ़े
या	या	जो
घोषे	घोषायाः पुत्रे (सा० भा०)	घोषा के पुत्र में
भृगवाणे	भृगुरिवाऽऽचरणं कुर्वाणे (स्मिपिसति न्याययेन छटःशानच्)	भृगुकी न्याईं आ- चरण करनेवालेमें

न	इव	मानो
शोभे	शोभते (‘लोपस्तः’ इति तलोपः)	शोभता है
यया	यया	जिस से
वाचा	वाचा	वाणी से
यजति	यजति	यजन करता है
पज्जियः	पज्जवंशीयः	पज्जवंशी
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
प्र	(पूरणः)	—
दूषयुः	उद्युक्तः	उद्योगी
न	इव	की न्याईं
विद्वान्	विद्वान्	विद्वान्

संस्कृतार्थः ।

या (वाणी) भृगुरिवाऽऽस्वरणं कुर्वाणे घोषायाः



पुत्रे शोभते इव, यया (च) वाचा पञ्चवंशीयो युवां  
यजति, (सा वाणी) उद्युक्तो विद्वान् इव प्र-(भवतु)  
॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

जो (वाणी) भृगु की न्याईं आचरण करने वाले  
घोषा के पुत्र में मानो शोभित होती है (और) जिस  
वाणी से पञ्चवंशी आपका यजन करता है (वह  
वाणी) उद्योगी, विद्वानकी न्याईं प्रभाव युक्त हो ॥ ५ ॥

पञ्चवंशी कक्षीयान कहते हैं कि जैसे उद्योगी विद्वान  
अपने कर्मों में छतकृत्य होता है इसी प्रकार मेरी वाणी सिद्ध-  
मनोरथ हो ।

अश्विनो देवते, अक्षरसङ्ख्योऽष्टिः ॥ १० ॥ १० ॥

श्रुतं गायत्रं तक्वानस्या ऽहं चि-

हिरिरेभाश्विनावाम् । आक्षी शुभ-

स्पतीदन् ॥ ६ ॥

श्रुतम्		श्रुणुतम् (श्रुतिकरणस्य लुक्)		सुनो
---------	--	----------------------------------	--	------

गा॒य॒त्रम्	स्तोत्रम् (सा० भा० )	स्तोत्र को
त॒क॒वा॒न॒स्य	पक्षिणः (भा० को०)	पंछी के
अ॒हम्	अहम्	में
चि॒त्	एव	ही
हि	खलु	सचमुच
रि॒रे॒भ	कूजितवानस्मि (रेभृशब्दे)	कूका हूं
अ॒ग्नि॒व॒ना	हे अश्विनो !	हे अश्विदेवो
वा॒म्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
आ	खलु	सचमुच
अ॒क्षी०	चक्षुषी	नेत्रों को
शु॒भः	सौन्दर्यस्य (क्षिप)	सौन्दर्य के

प॒त्नी०

हे स्वामिनौ !

हे स्वामियो

दन्

दातारौ

देने वाले

संस्कृतार्थः ।

हे सौन्दर्यस्य स्वामिनौ ! अश्विनौ ! (युवाम्)  
पक्षिणः (मम) स्तोत्रं शृणुतम्, अहमेव युवाभ्यां  
कूजितवानस्मिखलु, (युवामन्धेभ्यः) चक्षुषी दातारौ  
खलु (स्थः) ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे सौंदर्य के स्वामी अश्विनो ! आप (मुझ) पक्षी  
के स्तोत्र को सुनो, सचमुच मैं ही आपके लिये कूका  
हूँ, आप सचमुच (अंधों को) आंखें देने वाले हो  
॥ ६ ॥

अश्विनौदेवते विष्टारधृहतीछन्दः । ८।१०।१०।८

यु॒वं॒ह्या॒स्तं॑म॒हो॒रन् यु॒वं॒वा॒यन्नि॒-  
र॒त॒तं॑स॒तम् । तानो॑व॒सू॒सु॒गो॒पा॒स्था॑तं  
पा॒तं॑नो॒वृ॒का॑द॒घ्रा॒योः ॥ ७ ॥

युवम्

युवाम्

तुम दोनों

हि

खलु

सचमुच

आस्तम्

आस्तम्  
(असम्भुवि)

हुए हो

महः

महत्त्वस्य

महत्त्व के

रन्

रातारौ

देने वाले

(रादाने 'दन्' इतिव-  
दस्य प्रक्रिया, सुषामि-  
ति विभक्तेःसुः)

युवम्

युवाम्

तुम दोनों

वा

वा

अथवा

यत्

यौ

जो

(सुषामिति विभक्ते-  
लुक्)

{ निःऽअततं  
सतम्

निराकर्तारौ  
आस्तम्

(तसि कम्पने धा०को०)

हटाने वाले हुए  
हो

ता	तौ (विभक्तेरात्वम्)	वे दोनों
नः	अस्माकम्	हमारे
वसु०	हे धनवन्तौ! (आ० को०)	हे धनवालो
सु०गोपा	सुरक्षकौ (विभक्तेरात्वम्)	अत्यन्त रक्षक
स्यातम्	भवतम्	हों
पातम्	रक्षतम्	रक्षा करो
नः	अस्मान्	हम को
वृकात्	चौरात् (निघं ६।२४]	चोर से
अघ०योः	पापमिच्छतः (क्यचि सत्युःप्रत्ययः)	पापकी कामना वाले से

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन्तौ ! अश्विनौ ! (यौ) युवां महत्त्वस्य दातारौ खलु आस्तम्, यौ वा युवां निराकर्तारौ आस्तम्, तौ (युवाम्) अस्माकं सुरक्षकौ भवतम्, पापमिच्छतः चौरात् (च) अस्मान् रक्षतम् ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे धनवाले (अश्विनो!) (जो) आप सचमुच महत्त्व के देने वाले हो, अथवा जो आप हरने वाले हो, वे आप हमारे अत्यन्त रक्षक बनो (और) हमें पापी चोर से बचाओ ॥ ७ ॥

अश्विनौदेवते कृतिश्छन्दः । १२।१२।८

माकस्मै॑धातम॒भ्यमि॒त्रिण॑ नी

माकु॑चानि॒गृहे॑भ्यो॒धेन॑वोगुः । स्त॒ना-

भुजो॒अशि॑श्रुवीः ॥ ८ ॥

मा	मा	मत
कस्मै॑	कस्मै	किसा के लिये
धा॒तम्	अभि+धातम्, अवस्थापयतम्	सौंपो
अभि	अभि+	-

अ॒मि॒त्रि॒णो॑	शत्र॒वे	शत्रु॒ के ताई
नः॑	अस्मान्	हम॒ को
मा	मा	मत
अ॒कु॒त्र॑	अयोग्यस्थानम्	अयोग्य स्थान को
नः॑	अस्माकम्	हमारी
गृ॒हेभ्यः॑	गृहेभ्यः	घरों से
धे॒नवः॑	गावः	गौएँ
गुः॑	गच्छन्तु (लोडरों लुडघडमायः)	जावें
स्त॒न॒ऽभुजः॑	स्तनैर्भुज्जन्ति पालयन्तीति ता (भुजपाटने स्त्रिय्)	स्तनों से पालने वाली
अ॒शि॒र॒वीः॑	शिशुभिर्वियुक्ताः (सत्यः) (मात्स्वर्णीय ईकार)	बछड़ों से विछड़ी (हुई)

संस्कृतार्थः।

(हे अश्विनौ ! युवाम्) अस्मान् कस्मैचिद्  
शत्रवे माऽवस्थापतम्, स्तनैः पालयिष्योऽस्मदीयाः  
गावो वत्सैर्वियुक्ताः ( सत्यः ) गृहेभ्यः ( अन्यत्र )  
अयोग्यस्थानं मा गच्छन्तु ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

हे (अश्विनो ! ) आप हमें किसी शत्रु के ताई  
मत सौंपो, स्तनों से पालने वाली हमारी गौएँ वछड़ों  
से विछड़ कर घरोंसे (दसरी जगह ) अयोग्य स्थान  
में न जावें ॥ ८ ॥

अश्विनौदेवते विराट्छन्दः । ११।११।११

दु॒ही॒यन्मि॒त्र॒धित॒येयु॒वाकु॑रा॒यै  
च॒नोमि॒मीतं॑वाज॒वत्यै॑ । दू॒षेच॑नो  
मि॒मीतं॑धेनु॒मत्यै॑ ॥ ९ ॥

दु॒ही॒यन्	दुह्युः (दुहेलिङि ऋस्यरन्, छान्दोग्यो देवस्ययकारः)	दोहन करें
-----------	--	-----------



मि॒त्रऽधि॑तये	मि॒त्राणां॑ पोषणा- र्थम् (दुधाञ् धारणपोष- णयोः)	मि॒त्रों के पालने के लिये
यु॒वाक् रा॒ये	यु॒वां काम॑यमाना- (सु॒पा॒मिति॑ वि॒मर्केर्लुक्) ध॒नाय	तुम्हारी कामना करने वाले धन के लिये
च	च	और
नः	अ॒स्मान्	हम को
मि॒मी॒तम्	यो॒ग्यान् कुरु॑तम्	योग्य करो.
वा॒जऽव॑त्यै	ब॒ल॒यु॒क्ताय	बल से युक्त के लिये
दू॒षे	अ॒ग्नाय	अन्न के लिये
च	च	और
नः	अ॒स्मान्	हम को

मिमीतम्	योग्यान्कुरुतम्	तैय्यार करा
धेनुऽमृत्यै	गोभर्यक्ताय	गौओं से युक्त के लिये

संस्तुतार्थः ।

(हे अश्विनौ ! ) युवांकामयमानाः (स्तोतारः)  
मित्राणां पोषणार्थम् ( युवाम् ) दुह्यः, ( युवाम् )  
अस्मान् बलयुक्ताय धनाय योग्यान्कुरुतम्, अस्मान्  
गोभिर्युक्तायाऽन्नाय (च) योग्यान्कुरुतम् ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

(हे अश्विनौ ! ) आपकी कामना करने वाले  
(स्तोता) मित्रों के पालने के लिये (आपको) दोहन  
करें, आप हमें बल से युक्त धन के लिये योग्य कर,  
(और) हमें गौओं से युक्त अन्न के लिये योग्य  
करें ॥ ९ ॥

अश्विनौ देवते गायत्री छन्दः । ८। ८। ८

अश्विनो रसनरथं मनः प्रववाजि-

नीवतोः । तेनाहं भूरि चाकन ॥ १० ॥

अश्विनोः	अश्विनोः	अश्विनो के
असनम्	प्राप्तवानस्मि	मैंने पा लिया है
रथम्	रथम्	रथ को
अनूवम्	अश्वैर्विनैव गन्तुं समर्थम्	घोड़ों के बिना ही चलने वाल को
{ वाजिनी- ऽवतोः	बहुलान्नयोः	बहुत अन्नवालों के
तेन	तेन	उसके द्वारा
अहम्	अहम्	मैं
भूरि	प्रभूतम्	बहुत को
चाकन	कामये (कनीकान्तो छिटिरूपम्)	कामना करता हूँ

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) बहुलान्नयोरश्विनोः अश्वैर्विनैव गन्तुं

समर्थ) रथं प्राप्तवानस्मि, तेनाऽहं प्रभूतम्(धनम्)  
कामये ॥ १० ॥

मायार्थः ।

मैंने बहुत अन्न वाले अश्विनो के घोड़ों से  
बिना ही चलने वाले रथ को पा लिया है, उसके  
द्वारा मैं बहुत (धन) की कामना करता हूँ ॥ १० ॥

जो अश्विनो का प्रकाशमय रूप है वही रथ है, उस को  
मैंने पा लिया है अर्थात् उसका सहारा पकड़ लिया है ।

अश्विनोदेवते गायत्रीछन्दः । ८। ८। ८

अयं समहमातनू ह्यातेजनां अनु ।

सोमपेयसुखोरथः ॥ ११ ॥

अयम्

अयम्

यह

समह

हे धनसहित !  
(यस्य ह्ययं छान्दसम्)

हे धन से युक्त

मा

माम्

मुझ को

तनु	विस्तारय	विस्तार युक्त कर
उच्चाते	प्राप्यते (यह प्रापणे कर्मणि लेट्याडागमः, दीर्घ- इच्छान्दसः)	प्राप्त कराया जाता है
जनान्	जनान्	मनुष्यों को
अनु	प्रति	की ओर
सोमऽपेयम्	सोमपानयोग्यं स्थानम्	सोम पीने योग्य स्थान को
सुखः	सुखरूपः	सुखरूप
रथः	रथः	रथ

संस्कृतार्थः ।

हे धन सहित ! (रथ ! ) अयम् ( त्वम् ) मां विस्तारय,  
( अयम् ) सुखरूपो रथः ( अङ्घ्रिभ्याम् ) जनान् प्रति  
सोमपानयोग्यं स्थानं नीयते ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे धन से युक्त ( रथ ! ) यह ( तू ) मुझे विस्तार

युक्त कर (इस) सुखरूप रथ को (अश्विन) मनुष्यों की ओर सोम पीने के योग्य स्थान में ले जाते हैं ॥ ११ ॥

अश्विनौदेवते गायत्रीछन्दः । ८८८ ।

अध॒स्वप्न॑स्य॒निर्वि॑दे ऽभु॑ञ्जत-  
प्रच॒रेव॑तः । उ॒भाता॑वस्त्रि॒नप्र॑यतः ।  
१२ ॥

अध	अथ	अव
स्वप्नस्य	स्वप्नात् (पञ्चम्यर्थे पठ्ठी)	स्वप्न से
निः	निः+	-
विदे	निः+विदे, निर्वि एगोऽस्मि	विन्न हूं
अभुञ्जतः	अभुञ्जतः	भोग न करने वाले से
च	च	और

रेवतः	धनव्रतः	धनवान से
उभा	उभौ	दोनों
ता	तौ	वे
वस्त्रिम्	क्षिप्रम् (सा०भा०)	शीघ्र
नश्यतः	नश्यतः	नष्ट होंगे

भाषार्थः ।

( अहम् ) इदानीं स्वप्नाद्, अभुङ्क्षुतो धनिः ।  
नश्च निर्विण्णोऽस्मि तावुभौ क्षिप्रं नश्यतः ॥ १२ ॥

संस्कृतार्थः ।

मैं अब स्वप्न से और भोग न करने वाले  
धनी से खिन्न हूँ वे दोनों शीघ्र नष्ट होंगे ॥ १२ ॥  
इति विशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ॥

# अ०मं०१सू०१२१।

इन्द्रोदेवता कक्षीवानृषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भाषार्थ।

हम अगिरावशियों की स्तुति को हमारे रक्षक इन्द्र कब सुनेंगे ? जब हम घर के सघ मनुष्य उन का ध्यान करेंगे तब वह अवश्य हमारी पूजा को स्वीकार करने के लिये लंगे कदमों से पधारेंगे। १। वही यशस्वीवीर ऊपरके आकाश को धामे हुए है, वही पृथिवी को साँच कर अन्न पशु और धन को हमारे लिये उत्पन्न करते हैं, ये मनुष्य पशु वृक्ष आदि प्रजा को और सूर्य की पत्नी हमारी माता पृथिवी को उत्पन्न करके वृषावष्टि से देख रहे हैं। २।

मातृ समय के राजा आलस्य रहित इन्द्र अगिरावश के प्राचीन पुरुषों के बुलाने पर प्रतिदिन पहुँचते थे, ये सौ अरब हीरे जो आकाश में जगमगाते हैं उसी ने बनाए हैं और उसी ने पशु और मनुष्यों के लिये आकाश को धामा हुआ है। ३। हे इन्द्र ! जब आप मकों के अर्पण किये हुए सोम से मद्य युक्त होकर तीन भोक वाले अपने घञ्ज से मनुष्यों के साथ द्रोह करने वाले अन्धकार ऋषी गुफा के द्वारों को तोड़कर खोलते हो तब सृष्टिक्रम के चलाने के लिये रांमती हुई दिनरूपी गौर्य एक एक करके बाहर निकलती हैं। ४। हे इन्द्र ! जब सघ के माता पिता आकाश और पृथिवी ने आपको सृष्टि का असीम बल भेंट किया और मनुष्या ने अग्निहोत्र द्वारा अमृत के दोहन करने वाली गौ का पवित्र दूध आप के प्रति अर्पण किया। ५। तब उषा का प्रकाश बढ़ने २ सूर्य का उदय हुआ, शब हम देवताओं की इस विजय पर हवित दों, इस सूर्य की किरणरूपी



दवियों को ही छुवे से साँवते हुए चन्द्रमा \* भक्तों के पास प्राप्त होते हैं । ६। हे इन्द्र ! यह आप ही के पुरुषार्थ का फल है कि देव-ताओं के यह के निमित्त पशु बांधने का यूप बनाने के लिये वम-कीली धार वाली कुल्हाड़ी चल रही है, गाडीवान रात्रि से पहिले घर पहुँचने के लिये बैलों को हाँक रहे हैं, गोपाल गौमाँ को चरारहे हैं और कर्मठ लोग शीघ्रता से अपना काम कर रहे हैं जिससे अन्ध-कार के फैलने से पहले कार्य समाप्त होजाए, इन सब कर्मों की सम्माधना इसीलिये है कि आप प्रतिदिन दिन को उत्पन्न करते हो । ७। हे इन्द्र ! जब चार महीने लंबी रात्रि रूप कूप ने प्रकाश को गड्ढप कर लिया† तब आप उससे युद्ध करते हुए महान आ-काश से प्रकाश के आठ महीने रूप आठ घोड़ों को लाए, और आप का अनुमोदन करने के लिये मनुष्यों ने सुनहरी रंग का सोम निचोड़ा और उस को दूध से प्रयत्न करके आपके ताई अर्पण किया । ८। हे इन्द्र ! कर्मकुशल त्वष्टा के दिये हुए विद्युतरूपी लोहे के वज्र को जब आपने अपने भक्त कुत्स की रक्षा के लिये आकाश से छोड़ा, तब अनावृष्टिरूप असुर चारों ओर से शस्त्रों से घिर गया, ओर प्रजा के हितकारी कुत्स के लिये घृष्टि हुई । ९। हे वज्रधारी इन्द्र ! जलों के चोर उस वृत्र की ओर सूर्य के छिपने से पहिले विद्युत रूपी वज्र को फेंको, और अनावृष्टि रूप शुष्ण के जमे हुए बल को उखाड़ कर आकाश से निकालो । १०। हे इन्द्र ! अत्यन्त बल वाले आकाश और पृथिवी भी जो बिना पहियों के चलते हैं आपके इस कर्म पर प्रफुल्लित

---

\* चन्द्रमा की किरणें सूर्य की ही किरणें हैं जो चन्द्रमा पर गिर कर फिर हमारे पास पहुँचती हैं ।

† यह पृक्षांत उस समय का है कि जब आर्य्यजाति उत्तरमेघ के समीपस्थ देशों में रहती थी ।

होते हैं कि आपने उस सूअर वृत्र को जो नदियों में रहता था वज्र से मार कर सुला दिया। ११। हे गनुप्यों के हितकारी इन्द्र ! आप अत्यन्त वेग वाले घायु के घोड़ों से जुड़े हुए रथ पर सवार हों, ओर जो कवि के पुत्र उशना ऋषि ने स्तुति के बल से आप के लिये घज्र घडा है उस को वृत्र पर चलाने के लिये तीक्ष्ण करो १२। हे इन्द्र ! जब आपने अपने मत्तपतश के लिये युद्धमें लंबा दिन करने के निमित्त सूर्य के घोड़ों को थाम दिया था तब सूर्य का घोड़ा पहिये को न चला सका, फिर आप ने एनश के यशहीन शत्रुओं का नग्ने नदियों के पार गढे में जा पटसा १३। हे वज्री ! इन्द्र ! आप इस दरिद्रता से हम लोगों को छुड़ाये यह जो पाप का रूप हमारे समीप बना रहता है, आप हमें रथ छोड़े और धन से युक्त बल को दें जिससे हम अन्नपान यशस्वी ओर सच्ची वाणी वाले बनें १४। हे बल प्रताप और धन के मूल ! इन्द्र ! आप की यह दयाबुद्धि जो हम पर थी क्षीण न हो, अन्न हमारे चारों ओर हो, हे स्वामी ! हम को गाँवों में सांझा दो जिस से हम स्तुति के योग्य बन कर आप के साथ मोद करने वाले बनें १५।

---

‡ अर्थात्, शरद्वृत्र में धूलिरूप वृत्र को सुला कर नदियों का जल स्वच्छ किया ।

इन्द्रोदेवता निघृत्त्रिष्टुष्टन्दः ॥१०॥११॥११॥११॥

कदितथानूःपाचदेवयतां श्रवद्

गिरोअङ्गिरसांतुरययन् । प्रयदानड्

विशआहम्यस्योरुक्रंसतेअध्वरेय-

जत्रः ॥ १ ॥

कत्	कदा	कथ
इत्था	खलु (भा० को०)	सचमुच
नून्	नरान्	नरों को
पाचम्	पाता (पारक्षणे, ताडलीलि- वस्तुन्, द्यत्ययेन सोरमादेशः)	रक्षा करने वाला
देवऽयताम्	देवकामानाम्	देवभक्तों की
श्रवत्	श्रोष्यति (छेदघडागमः)	सुनेगा

गिरः	स्तुतीः	स्तुतियों को
अङ्गिरसाम्	अङ्गिरसाम्	अंगिराओं की
तुरणयन्	त्वरान्कुर्वन् (तुरण त्वरायाम्)	शीघ्रता करताहुआ
प्र	प्र +	--
यत्	यदा	जब
आनट्	प्र + आनट् व्याप्नोति (निघ० २।१८)	व्याप्त होता है
विशः	प्रजाः	प्रजाओं को
आ	सर्वतः	सब ओर से
हर्म्यस्य	गृहिणः (हर्म्यशब्दादर्शभादि- त्वादच्)	गृहस्थ की
उरु	विपलुम्	चौड़े

क्रंसते	क्रमते (लेट्याडागमेसिप्)	कदम उठाता है
अध्वरे	यज्ञे	यज्ञ में
यजत्रः	यष्टव्यः	पूजनीय

संस्कृतार्थः ।

नराणां रक्षकः (इन्द्रः) त्वरयन् (मन्) कदाचलु  
देवकामानाम् अङ्गिरसां स्तुतीः श्रोष्यति ? यष्टव्यः  
(सः) यदा गृहिणः प्रजाः सर्वतो व्याप्नोति (तदा)  
यज्ञे विपुलतया कामति ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

नरों के रक्षक (इन्द्र) शीघ्रता करते हुए सचमुच  
कवदेवभक्त अंगिराओंकी स्तुतियों को सुनेंगे ?  
(वह) पूज्य जब गृहस्थ की प्रजाओं को सब ओर-  
से व्याप्त हो जाएंगे (तब) यज्ञ में चौड़े कदम  
उठाएँगे ॥ १ ॥

मंत्रके पूर्वार्द्ध में प्रश्न है कि इन्द्र हम अंगिरावंशियों की स्तुति  
को क्या सुनेंगे, उत्तरार्द्ध में उत्तर है कि जब वह पूज्य घर के सारे  
मनुष्यों के मन में व्याप्त हो जाएँगे, तब चौड़े कदम से शीघ्र यज्ञ  
में आएँगे और हमारी स्तुतियों को सुनेंगे ॥

क०मं०१सू०१२२ मं०२ ( ३२३२ )

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११।

स्तम्भीहृद्यासधरुणंप्रुषाय

हृभुर्वाजायद्रविणंनरीगोः । अनु

स्वजांमहिषश्चक्षत्रां मेनामश्वस्य

परिमातरंगोः ॥ २ ॥

स्तम्भीत्	स्तब्धवान्	थांभा है
हृ	(पूरणः)	—
द्याम्	द्युलोकम्	द्युलोक को
सः	सः	उस ने
धरुणम्	धारयितारम् (पृथि- वीलोकम्)	पृथिवीलोक को
प्रुषायत्	सिक्तवान् (प्रुषसेवने लट्प्रडाग- मः, दना प्रत्ययस्य शायभादेशदण्डः)	सींचा

कृ॒भुः	मे॒धावी (निघं० ३।१५)	वु॒द्धि॒मान
वा॒जाय	अ॒न्नाय	अ॒न्न के लि॒ये
द्र॒वि॒णम्	ध॒नाय (सु॒षामि॒ति वि॒भक्तेः सुः)	ध॒न के लि॒ये
न॒रः	वी॒रः	वी॒र
गोः	ग॒वे (चतुर्थ्यै पठ्ठी)	गौ के लि॒ये
अ॒नु	अ॒नु +	—
स्व॒ऽजा॒म्	स्व॒त उत्प॒न्नाम्	अ॒पने आ॒प से उत्प॒न्न हुई को
म॒हि॒षः	म॒हान् (निघं० ३।३)	म॒हान्
च॒क्ष॒त	अ॒नु + चक्ष॒त, अ॒नु- कम्प॒या दृष्ट॒वान् (चष्टिः पश्यतिकर्मा निघं० ३।११)	कृ॒पा से दे॒खा
ब्रा॒म्	प्र॒जाम्	प्र॒जा को

मेनाम्	पत्नीम्	पत्नी को
अश्वस्य	अश्वस्य	घोड़े की
परि	परितः	संब ओर से
मातरम्	मातरम्	माता को
गोः	पृथिवीम् (द्वितीयाथे पण्ठी)	पृथिवी को

संस्कृतार्थः ।

मेधावी स वीरः द्युलोकं स्तब्धवान् अन्नार्थं  
गवामर्थं धनार्थम् (च) पृथिवीलोकं सिक्तवान्, महान्  
(सः) स्वतः उत्पन्नां प्रजाम् अश्वस्य पत्नीरूपां  
मातरं पृथिवीम् (च) अनुकम्पया दृष्टवान् ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

धुडिमान उस वीर ने द्युलोक को थांभा (और)  
अन्न के लिये, गौओं (और) धन के लिये पृथिवी  
लोक को भीचा, (उस) महान ने अपने आप से  
उत्पन्न हुई प्रजा को (और) अश्व की स्त्रीरूप पृथिवी  
माता को कृपादृष्टि से देखा ॥ २ ॥

‘अश्व’ सूर्य है और उसकी स्त्री पृथिवी है जो हम सब की माता है ॥



इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

नक्षत्रवमरुणीः पूर्व्यैराट् तुरोविशाम-  
ङ्गिरसामनुदून् । तक्षद्वजंनियुतं  
तस्तम्भदद्यां चतुष्पदेनय्यायद्वि-  
पादे ॥ ३॥

नक्षत्र	प्राप्तवान् (नक्षगती)	पहुंचताथा
हवम्	आह्वानम्	पुकार को
अरुणीः	उपसाम् (पूर्वसवर्णदीर्घः)	उपाओं का
पूर्यम्	पुरातनम्	प्राचीन को
राट्	राजा (राजतेःङिप्)	राजा
तुरः	अनलसः	आलस्य से रहित

विशाम्	प्रजानाम्	प्रजाओं के
अङ्गिरसाम्	अङ्गिरसाम्	अंगिराओं के
अनु	अनु+	-
दन्	अनु+द्युन्, अनुदिनम्	प्रतिदिन
तक्षत्	निर्मितवान् (भडमावः)	बनाया
वज्रम्	हीरकान् (सुषामिति विमलैः सुः)	हीरों को
निऽयुतम्	शतार्बुदम् (आ०को०)	सौ अरब को
तस्तम्भत्	स्तम्भितवान्	थांभा
द्याम्	द्युलोकम्	द्युलोक को
चतुःपदे	चतुष्पदे	चुपाए के लिये
नट्याय	मानुषाय	मानुष के लिये

द्विऽपादे | द्विपदे | दुपाए के लिये

संस्कृतार्थः ।

उषसां राजा अनलसः (इन्द्रः) प्रतिदिनम् अङ्गिरोवंशीयानां प्रजानां पुरात्ममाह्वानम् (प्रति) प्राप्तवान्, (सः) शतार्बुदं हीरकान् निर्मितवान् चतुष्पदे मानुषाय द्विपदे(च) द्युलोकं स्तम्भितवान् ॥३॥

भाषार्थः ।

उषाओं के राजा आलस्यहीन (इन्द्र) प्रति-दिन अंगिरावंशी प्रजाओं के पूर्वकाल में बुलाने पर पहुँचते थे, (उसने) सौ अरब हीरे बनाए (और) चुपायों (और) मानुष दुपाओं के लिये द्युलोक को थाँभा ॥ ३ ॥

सौ अरब हीरे अर्थात् तारागण ।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११११११११११

अस्यमदेस्वय्यदाचृताया ऽपी-

वृत्तमुस्त्रियाणामनीकम् । यद्धप्रसर्गेचि-

ककुम्भिवर्तं दपद्रुहोमानुषस्यदुरो-  
वः ॥ ४ ॥

अस्य	अस्य	इस के
मदं	मदे	मद में
स्वर्ग्यम्	रेभमाणम् (सृष्ट शब्दे, यत् प्र- त्ययः संज्ञापूर्वकस्य विधेरनित्यत्वाद् पुरुषभावः)	रामतें हुए को
दाः	दत्तवानसि (भङ्गभावः)	तूने दिया है
ऋताय	ऋताय	ऋत के लिये
अपिऽवृतम्	निगूढम्	छिपे हुए को
उस्त्रियाणाम्	गवाम् (निघं० २।११)	गौओं के
अनीकम्	समूहम्	झुंड को

यत्	यदा	जव
ह	खलु	सचमुच
प्रऽसर्गे	आघाते	प्रहार में
त्रिऽककुप्	त्रिशिखरोपेतः	तीन नोक वाला
निऽवर्तत्	नितरां वर्तते (लेटघडागमः)	प्रवृत्त होता है
अप	अप+	-
द्रुहः	द्रोहकर्त्रीणि	द्रोह करनेवालोंको
मानुषस्य	मनोः सम्बन्धिनः	मनु संबंधी के
दरः	द्वाराणि	द्वारों को
वः०	अप + वः, अपावृ णोति, उद्घाट- यतीत्यर्थः (लङ्ये लुङघडमाघः छलेर्लुक्, गुणे हल् उघा दिबोपः)	खोल देता है

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र ! त्वम्) अस्य (सोमस्य) मदं ऋताय  
रेभमाणं निगूढं गवां समूहं दत्तवानसि, यदा खलु  
त्रिशिखरोपेतः (वज्रः) आघाते प्रवर्तते (तदा सः)  
मनोः सम्बन्धिन्याः (प्रजायाः) द्रोहकर्त्रीणि द्वाराणि  
उद्धाटयति ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

( हे इन्द्र ! ) आपने इस (सोम) के मद में ऋत  
के लिये गौओं के झुंड को दिया है, जब तीन, नोक  
वाला (वज्र) सचमुच वध करने में प्रवृत्त होता है  
(तब वह) मनु की (प्रजाओं) के साथ द्रोह करने  
वाले द्वारों को खोल देता है ॥ ४ ॥

रामती हुई गौयँ दिन हैं जिन को पनि छिपा कर रखता है,  
इन गौओं को इन्द्र ऋत अर्थात् सृष्टिक्रम के चलाने के लिये अपने  
तीन नोक वाले वज्र से पनि की गुफाओं के द्वारों को तोड़ कर  
निकालते हैं और शीतऋतु की लम्बी रात्रि के पश्चात् फिर दिन  
रूपी गौयँ एक एक करके बाहर निकलती हैं ॥

इन्द्रो देवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११११११११११११

तुभ्यं पयो यत्पितरावनीतां राधः ।

सुरेतस्तुरणे भुरग्यू । शुचियत्तेरेकण-

आयजन्त सवर्द्धायाःपयउस्त्रि-

यायाः ॥ ५ ॥

तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
पयः	बलम् (भा० का०)	बल को
यत्	यदा	जब
पितरौ	पितरौ	माता (और) पिता
अनीताम्	आनीतवन्तौ (लटिशपोलक)	लाए
राधः	उपहारम् (भा० को०)	भेट को
सुदरेतः	सुवीर्ययुक्तम्	सुन्दर वीर्य से युक्त को
तुरणौ	त्वारोपेताय (तुरण त्वरायां क्तिप्)	शीघ्रकारी के लिये
भरण्यु०	धारयिष्यौ (भुरण धारणे, ग्रीणा- दिक उपस्यपः)	धारण करने वाले

शुचि <sup>१</sup>	शुद्धम्	पवित्र को
यत्	यदा	जब
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
रेक्णः <sup>१</sup>	धनम् (निघं०२।१०)	धन को
आ	आ +	-
अयजन्त <sup>१</sup>	आ + अयजन्त, अर्पितवन्तः	अर्पण किया
{ सवःऽदु- घायाः	अमृतस्य दोग्ध्याः <sup>१</sup> (सा०भा०)	अमृत के दोहने वाली के
पयः <sup>१</sup>	पयः	दूध को
उस्त्रियायाः <sup>१</sup>	गोः	गौ के

सरकृतार्थः ।

( हे इन्द्र ! ) क्षिप्रकारिणे तुभ्यं यदा धारयिष्यो  
( यावापृथिव्यौ ) सुवीर्योपेतं बलरूपम् उपहारम्



आनीतवन्तौ, यदा (च मनुष्याः) अमृतस्य दोग्ध्याः गोः  
पवित्रं पयोरूपधनं तुभ्यम् अर्पितवन्तः ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

( हे इन्द्र ! ) शीघ्रकारी आप के लिये जब धारण करने वाले माता (और) पिता (दो और पृथिवी) सुन्दर वीर्य से युक्त बलरूप भेट को लाए (और) जब (मनुष्यों ने) अमृत के दोहने वाली गौ के पवित्र दुग्धरूप धन को आप के ताई अर्पण किया ॥ ५ ॥

इस का संबंध अगले मंत्र के साथ है ।

मंत्र के उत्तरार्द्ध में अग्निहोत्र की ओर सूचना है, सृष्टि की आसुरी शक्तियाँ जगत में अन्धकार को फैलाना चाहती हैं, और देवता मनुष्य के हितकारक प्रकाश को उत्पन्न करना चाहते हैं, देवताओं के इस प्रयत्न में मनुष्य भी अग्निहोत्र द्वारा सहायता कर सकता है ॥

इन्द्रो देवता त्रिष्टुप् छन्दः । ११ । ११ । ११ । ११ ।

अध॒प्रज॑ज्ञे॒तर॑णि॒र्मम॑त्तु प्र॒रोच्य॑-  
स्या॒उष॑सी॒नसू॑रः । इन्द्र॒र्येभि॑रा॒ष्टस्वे॑-  
दु॒हव्यैः॑ सु॒वेण॑सि॒ञ्चन्॑ ज॒रणा॑भि-  
धाम ॥ ६ ॥

अध	तदानीम्	तत्र
प्र	प्र+	-
जज्ञे	प्र+जज्ञे, प्रादुर्भव	प्रकट हुआ
तरणिः	शीघ्रगामी (निघं० २।१५)	शीघ्रगामी
ममत्तु	मादयतु (मदीहर्षेभन्तर्भावित- ण्यर्थादस्माद् विकर- णस्य इलुइछान्दसः)	हर्ष से युक्त करे
प्र	प्र+	-
रोचि	प्र+रोचि, प्रदीप्तो- ऽभूत् (रुचि दीप्तौ लुङि व्यययेन क्लेशविना- देशः)	प्रदीप्त हो गया
अस्याः	अस्याः	इस से
उषसः	उषसः	उषा से

न	इव	मानो
सूरः	सूर्यः	सूर्य
इन्द्रः	सोमः	सोम
येभिः	यैः	जिन से
आष्ट	प्राप्नोति	प्राप्त होता है
{ स्वऽइन्द्र- हव्यैः	स्वतोदीप्तैर्हव्यैः (अग्निन्धीदीप्तौ, पृषो- दरादित्यादृक्पसिद्धिः)	अपने आप चम- कतीहुई हवियों से
स्रुवेण	स्रुवेण	स्रुव के द्वारा
सिञ्चन्	सिञ्चन्	सींचता हुआ
जरणा	स्तोतृणाम् (अरतिःस्तुतिकर्मा निघं० ३।१४ विमर्कैरा- त्वम्)	स्तुति करने वालों के
अभि	प्रति	की ओर

धाम	स्थानम्	स्थान को
-----	---------	----------

संस्कृतार्थः ।

तदा शीघ्रगामी सूर्यः अस्या उपसः प्रदीप्त इव प्रादुर्भव (अयमस्मान्) मादयतु, यैः स्वतः प्रदीप्तेः हव्यैः स्तुवेण सिञ्चन् सोमः स्तोतृणां स्थानं प्रति प्राप्नोति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

तब शीघ्रगामी सूर्य मानो इस उपा से प्रदीप्त होकर प्रकट हुआ (यह हमें) हर्षित करे, जिन स्वयं चमकती हुई हवियों से स्तुव के द्वारा सींचता हुआ चन्द्रमा भक्तों के स्थान को प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

इस की पूर्ति पिछले मंत्र से है ।

सूर्य का उदय होना देवताओं की विजय का सूचक है, इस लिये हमें प्रत्येक सूर्य उदय पर हर्षित होना चाहिये ।

स्वयं चमकती हुई हवियाँ सूर्य की किरणें हैं जो चन्द्रमा पर गिर कर चन्द्ररश्मिरूप से हमारे पास आती हैं, मानो इन को स्तुव से सींचता हुआ चन्द्रमा हमारे स्थान को प्राप्त होता है ।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

स्वि॒ध॒मा॒य॒द्व॒न॒धि॒ति॒र॒प॒स्या॒त

सूरो॑ अ॒ध्व॒रे प॒रि रो॒ध ना॒गोः । य॒ज्ञ प्र॒-  
भा॒सि॒कृ॒तव्यं॑ अ॒नु॒द्य नम॑र्वि॒शे प॒त्रि॒व-  
पे॒तुराय॑ ॥ ७ ॥

सऽद्व॒ध॒मा	सुदी॒प्यमा॑ना	खूब॑ चमकतीहुई
यत्	यत्	जो
व॒नऽधि॑तिः	वृ॒क्षादनी॑ (आ० को०)	कुल्हाड़ी
अ॒प॒स्यात्	क॒र्मोद्यु॑क्ताभवति (अप॑इति कर्म नाम निघ० २।१ प॒थचि सति॑ छेदघडागमः)	क॒र्ममें॑ तत्पर होती है
सू॒रः	विदु॒षः (प॒ण्ठघाःसुः)	विद्वान॑ के
अ॒ध्व॒रे	यज्ञे	यज्ञ॑ में

परि	परि+	-
रोधना	परि+रोधना, चन्ध- नाय (चतुर्थ्याः डा)	वांधने के लिये
गोः	पशोः	पशु के
यत्	यत्	जो
ह	खलु	सचमुच
प्रभासि	अनु+प्रभासि, अनुदिनं प्रदी- पयसि (अस्तर्भावितण्यर्थ)	तू प्रतिदिन प्रका- शित करता है
कृतव्यान्	कर्मयोग्यान् (कृत्वीति कर्मनाम निर्घ० २११ तत्रसा- धुरितियत्)	कर्म करने में योग्यों को
अनु	अनु +	-
द्यन्	दिवसान्	दिनों को

अनर्विशे	अनसा शकटेन प्रविशते (विशतेऽकिपिसति 'अहरादीनां'-इति वार्तिकेन सकारस्य रेफादेशः)	गाडीवान केलिये
पशुऽङ्घ्रि	पशूनां प्रेरकाय (रपगतौ, अन्तर्माधि- तण्यथादस्मात् क्तिप्)	पशुओं के हांकने वाले के लिये
तुराय	त्वरमाणाय	शीघ्रता करते हुए के-लिये

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! यद् विदुषो यज्ञे पशोर्वन्धनाय सुदी-  
प्यमाना वृक्षादनी कर्मोद्युक्ता भवति, यत् (च) खलु  
शकटेन प्राप्नुवते, पशुवाहकाय, त्वरमाणाय (च)  
कर्मयोग्यान् दिवसान् अनुदिनं प्रदीपयास (तत्  
तवैव वीर्यस्य फलम्) ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! जो विद्वान के यज्ञ में पशु के बांधने  
के लिये खूब चमकने वाली कुल्हाड़ी अपना काम  
करती है, (और) जो सचमुच गाडीवान के लिये,  
पशु हांकने वाले के लिये (और) शीघ्रता करने वाले

के लिये काम करने योग्य दिनों को प्रतिदिन प्रका-  
शित करते हो(वह आपके ही वीर्यका फल है)॥७॥

कुलहाड़ी अपना काम करती है अर्थात् यूप बनाने के लिये  
वृक्ष को काटती है ॥

इन्द्रोदेवता भुरिक्त्रिष्टुप्लन्दः ११२।११।११।११

अष्टामहोदिवआदोहरीदूह

द्युम्नासाहमभियोधानउत्सम्। हरिं

यत्तेमन्दिनंदुक्षन्वधे गोरभसुमद्रि-

भिर्वाताप्यम् ॥ ८ ॥

अष्टा	अष्टौ (विमक्तेरात्वम्)	आठ
महः	महतः	महान से
दिवः	द्युलोकात्	द्युलोक से
आदः	आनीनवानसि (आ०को०)	तू लाया है



हरी०	अश्वान् (वचनव्यत्ययः)	घोड़ों को
इह	इह	यहाँ
युष्मन्ऽसहम्	प्रकाशस्याऽभिभ- वितारम्	प्रकाश के दबाने वाले को
अभि	प्रति	की ओर
योधानः	युध्यमानः	युद्ध करता हुआ
उत्सम्	कूपम्	कूप को
हरिम्	हरिद्वर्णम्	सुनहरी रंग वाले को
यत्	यदा	जब
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
मन्दिनम्	मदकारकम्	मद करने वाले को
धुक्षन्	अधुक्षन् (मदभावः)	दोहा

वृधे	वृद्धये	वृद्धि के लिये
गोऽरभसम्	पयसा प्रवलीकृतम्	दूध से बल युक्त किये हुए को
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
वाताप्यम्	सोमरसम् (आ०को०)	सोमरस को

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र ! त्वम्) प्रकाशस्य अभिभवितारं कूपं-  
प्रति युध्यमानः (सन्) महतो व्युलोकाद् अष्टाश्वान्  
आनीतवानसि, यदा (मनुष्याः) तुभ्यं हरिद्वर्णं, पयसा  
प्रवलीकृतं, मदकारकम् (च) सोमरसं पाषाणैः दुग्ध-  
वन्तः ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र ! ) प्रकाश के दवाने वाले कूप के प्रति  
युद्ध करते हुए आप महान व्युलोक से आठ घोड़ों  
को लाए जब ( मनुष्यों ने ) आप के लिये  
सुनहरी रंगवाले, दूध से बल युक्त किये हुए (और)  
मदकारक सोमरस को पत्थरों से दोहा ॥ ८ ॥

(१) प्रकाश के दवाने वाला कूप उत्तर देशों की चार महीने की  
लंबी शीतकाल की रात्रि है ॥

(२) आठ घोड़े प्रकाश के आठ महीने हैं ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

तवमायसंप्रतिवर्तयोगो दिवोअ-  
प्रमानमुपनीतमृभ्वा । कतसायय-  
चपुरुहूतवन्वञ् चक्षुषामनन्तःप-  
रियासिवधैः । ६ ।

तवम्	त्वम्	तू ने
आयसम्	लोहमयम्	लोहे वाले को
प्रति	प्रति+	-
वर्तयः	प्रति+वर्तयः, विसृष्टवानसि (लङ्घ्यङमावः)	फैंका
गोः	गवादिपशूपल- क्षितस्य चर्मणः	चमड़े के
दिवः	द्युलोकात्	द्युलोक से

अप्रमानम्	वज्रम्	वज्र को
उपनीतम्	प्रापितम्	लाए हुए को
कृभ्वा	कर्मकुशलेन (त्वष्ट्रा)	काम में चतुर (त्वष्टा) के द्वारा
कुत्साय	कुत्साय	कुरस के लिये
यच्च	यस्मिन् (काले)	जब
पुरुहूत	हेवहुभिराहूत !	हे बहुतों से बुलाए हुए
वन्वन्	रक्षांकुर्वन् (यास्कः)	रक्षा करता हुआ
शुष्णम्	शुष्णम्	शुष्ण को
अनन्तैः	अनन्तैः	अनेकों से
परियासि	परिगतवानसि (लङ्घ्येत्)	तूने घेर लिया है
वधैः	हननसाधनैः (आयुधैः)	शस्त्रों से

संस्कृतार्थः ।

हे बहुभिराहूत ! ( इन्द्र ! ) त्वं कर्मकुशलेन  
( त्वष्ट्रा ) आनीतं लोहमयं वज्रं चर्मणः ( सकाशेन )  
द्युलोकाद् विसृष्टवानसि यदा कुत्साय रक्षां कुर्व-  
न् अनन्तैरायुधैः शुष्णं परिगतवानसि ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

हे बहनों से बुलाए हुए ( इन्द्र ! ) आपने काम  
में चतुर ( त्वष्टा ) से लाए हुए लोहे के वज्र को  
चर्म के द्वारा द्युलोक से फँका जब कुत्स के लिये  
रक्षा करते हुए आपने शुष्ण को अनेक शस्त्रों से  
घेर लिया ॥ ९ ॥

(१) वज्र को छोड़ने के लिये हाथ में चर्म पहना जाता है ॥

(२) शुष्ण पृथिवी को सुकाने वाला अनायुष्टि रूप असुर है।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

पु॒राय॑त्सूर॒स्तम॑सो॒अपी॑ते॒ स्तम॑-  
द्वि॒वःफ॑लि॒गंहे॒तिम॑स्य । शु॒ष्णस्य॑  
चि॒त्परि॑हितं॒यदो॑जो॒ दि॒वस्परि॑सु-  
ग्र॑थितं॒तदा॑दः । १० ।

पूरा	पूर्वम्	पहिले
यत्	यावत्	जवतक
सूरः	सूर्यस्य (पण्डयाः सः)	सूर्य के
तमसः	अन्धकारेण (तृतीयार्थे पण्डो)	अंधकार के द्वारा
अपिऽद्वतेः	लयात् (भा०को०)	लय से
तम्	तम्	उस को
अद्रिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी
फलिऽगम्	धृत्रम् (प्रति) (निघं० १११०)	धृत्र (की ओर)
हेतिम्	वज्रम् (निघं० २१२०)	वज्र को
अस्य	प्रक्षिप (भसुक्षेपणे)	फेंको
शुष्णस्य	शुष्णस्य	शुष्ण का

चित्	(पूरणः)	—
परिऽहितम्	व्याप्तम्	व्याप्त
यत्	यत्	जो
ओजः	बलम्	बल
दिवः	द्युलोकस्य	द्युलोक के
परि	उपरि	ऊपर
सुऽग्रथितम्	संघट्टितम्	गठा हुआ
तत्	तत्	उस को
आ	आ+	—
अदः०	आ+अदः, सर्वतो- विदारय (द्विविदारणे; लोट्यर्थे लङि विकरणस्य लुक्)	सब ओर से तोड़ो

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! ( इन्द्र ! ) अन्धकारेण सूर्यस्य

अ०मं०सू०१२१ मं०११ ( ३२५८ )

लयात्पूर्वं यावत् ( तावत् ) तं वृत्रम् ( प्रति ) वज्रं  
प्रक्षिप, दिव उपरि यद् संघट्टितं शुष्णस्य व्याप्तं बलम्  
( चाऽस्ति ) तत् सर्वतो विदारय ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे वज्रधारी ( इन्द्र ! ) अन्धकार द्वारा सूर्य  
के लय होने से पहले२ उस वृत्र की ( ओर )  
वज्र को फेंको, ( और ) द्यौ के ऊपर जो गठा हुआ  
शुष्ण का व्याप्त बल ( है ) उसको सब ओर से  
तोड़ो ॥ १० ॥

फलिग, शुष्ण, ये दोनों अनाद्युष्टि रूप असुरों के कल्पित नाम हैं ।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११ । ११ । ११ । ११ ।

अनु॑त्वाम॒हीपाज॑सी॒अच॒क्रे द्या-  
वा॒क्षामा॑मदतामिन्द्र॒कर्मन् । त्वं  
वृ॒त्रमा॑शयान॑सिरासु॑ म॒हीवज्रै॑णसि-  
ध्व॒पोव॒राहु॑म् । ११ ।



अनु <sup>१</sup>	अनु-(सृत्य)	साथ २
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मही०	महत्यौ (सुषामिति विमर्केःसुः)	वड़ीं
पाजसी०	प्रलवत्यौ	बल वालीं
अचक्रे०	चक्ररहिते	पहियों से रहित
द्यावाक्षामा <sup>१</sup>	द्यावापृथिव्यौ	द्यौ (और) पृथिवी
मदताम्	मदयुक्तेऽभवताम् (व्यत्ययेन शप्, भङ्- भावः)	मद से युक्त हुई हैं
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
कर्मन् <sup>१</sup>	कर्मणि (सुषामिति सप्तम्यालुक्)	कर्म में
त्वम्	त्वम्	तू ने
वृत्रम्	वृत्रम्	वृत्र को

आश्रयानम्	निवसन्तम् (आ०को०)	रहने वाले को
सिरासु	नदीपु (निर्घ० १।१३)	नदियों में
महः	महता (तृतीयार्थे पण्ठी)	महान से
वज्रेण	वज्रेण	वज्र से
सिस्वपः	स्वापितवानसि (अडमापः)	सुलादिया है
वराहम्	वराहसदृशम्	वराह जैसे को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! (तव) कर्मणि चक्ररहिते महर्षौ बलवत्यौ  
द्यावापृथिव्यौ त्वामनुसृत्य मदयुक्तेऽभवताम्, त्वं  
नदीपु निवसन्तं वराहसदृशं धृत्रं महता वज्रेण  
(हत्वा) स्वापितवानसि । ११ ।

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! (आप के) कर्म पर विना पहियों वाले  
घड़े बलवान द्यौ (और) पृथिवी आप के साथ मद  
से युक्त हुए हैं, आपने नदियां में रहने वाले वराह  
तुल्य धृत्र को महान वज्र से (मारकर) सुलादिया है। ११।

इन्द्रोदेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः । १०।११।११।११

तवमिन्द्रन॒ट॒र्यो॒याँअ॒वो॒नून् ति-  
 ष्ठा॒वा॒त॒स्य॒सु॒यु॒जो॒व॒हि॒ष्ठान् । य॒न्ते  
 का॒व्य॒उ॒श॒ना॒म॒न्दि॒न॒दाद् वृ॒च॒ह॒णं  
 पा॒ठ्य॑न्त॒तक्ष॒व॒ज॑म् ॥ १२ ॥

तवम्

इन्द्र

नट॒र्यः

यान्

अवः

नून्

त्वम्

हे इन्द्र !

नृ॒भ्यो॒हितः

यान्

रक्ष॑सि  
(छेद्यडागमः)

न॒रान्

तू

हे इन्द्र

मनु॒ष्यों के लिये  
हित॑कारी

जिन को

रक्षा॑ करते हो

नरों को

तिष्ठ	आरोह (भाडोलोपदछान्दसः)	चढो
वातस्य	वायोः	वायु के
सुयुजः	सुयुक्तान्	सुन्दर जुड़े हुआँको
वहिष्ठान्	अतिवाढून्	खूब लेचलने वा- लों को
यम्	यम्	जिस को
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
काव्यः	कवेःपुत्रः	कवि के पुत्र ने
उशना	उशना	उशना ने
मन्दिनम्	मदकरम्	मदकारी को
दात्	दत्तवान् (अडमायः)	दिया है
वृत्रहन्	वृत्रस्य हन्तारम्	वृत्रकेमारनेवालेक।

पाठ्यम्	(शत्रूणाम्)पारणे- ऽतिक्रमणे स- मर्थम्	(शत्रुओं के) उलां- घने में समर्थ को
ततश्च	तनूकुरु (लोड्येलिट्)	पैनाओ
वज्रम्	वज्रम्	वज्र को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! नृभ्यो हितस्त्वं यान्नरान् रक्षसि (तान्)  
अतिवोढून्, वायोः सुयुक्तान् (अश्वान्) आरोह,  
(अपिच) कवेः पुत्रः उशना वृत्रस्य हन्तारम् (शत्रून्)  
अतिक्रमितुं समर्थं मदकरं यं वज्रं तुभ्यं दत्तवान्  
(तम्) तनूकुरु । १२ ।

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! मनुष्यों के हितकारी आप जिन  
नरों की रक्षा करते हो (उन) खूब ले चलने वाले  
वायु के सुन्दर जुड़े हुए (घोड़ों) पर चढ़ो (और)  
कवि के पुत्र उशना ने जो वृत्र के मारने वाला  
(और शत्रुओं के) उलांघने में समर्थ मदकारी वज्र  
आप को दिया है (उस को) पैनाओ । १२ ।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

त॒वंसू॒रो॒ह॒रि॒तो॒रा॒मयो॒नून् भ॒र-  
च॒क्र॒मे॒त॒शो॒नाय॒मिन्द्र॑ । प्रा॒स्य॒पा॒रं  
न॒व॒ति॒ना॒व्या॒ना म॒पि॒क॒र्त॒मव॒र्त॒योऽ-  
य॒ज्यन् ॥ १३ ॥

त्वम्

त्वम्

तू ने

सूरः

सूर्यस्य  
(पठ्याः सुः)

सूर्य के

हरितः

हरिद्वर्णान्

सुनहरीरंग वालों  
को

रमयः

उपरमितवानसि  
(अडभावउपसर्गा-  
भावश्च)

रोका है

नून्

नरान्

नरों को

भरत्

बोहुमशकत्  
(अडभावः)

लेचलसका

चक्रम्	चक्रम्	पहिये को
एतशः	एतशः	एतश
न	न	नहीं
अयम्	अयम्	यह
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
प्रऽअस्य	प्रक्षिप्य	फेंक कर
पारम्	पारम्	पार
नवतिम्	नवतिम्	नव्वे को
नाव्यानाम्	नावातार्याणाम् (नदीनाम्)	नदियों के
अपि	अपि	भी
कर्तम्	कर्तम् (गस्यकत्वं छान्दसम्)	गढे को
अवर्तयः	प्रापितवानसि	पहुंचाया है

अय॑ज्य॒न् | य॒ज॒न॒र॒हि॒तान् | य॒ज्ञ॒न॒ कर॑ने॒वा॒लों  
को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! त्वं सूर्यस्य हरिद्वर्णानश्वान् उपर-  
मितवानसि, अयम् एतशः (सूर्यरथस्य) चक्रं वोढुं  
नाऽशकत् (त्वम्) यजनरहितान् नवतेर्नदीनां पारे  
प्रक्षिप्य गतं प्रापितवानसि ॥ १३ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र! आपने सूर्य के सुनहरी घोड़ों को रोक  
दिया, यह एतश (सूर्य के रथ के) पहिये को न ले  
चल सका, आपने यज्ञ न करने वालों को नन्वे  
नदियों के पार फेंक कर गढे में पहुंचाया है ॥१३॥

एतश सूर्य के घोड़े का नाम है, ओर इन्द्र के उस भक्त का  
नाम भी है जिस के लिये इन्द्र ने सूर्य के रथ को डैरा कर युद्ध के  
लिये दिन को लंघा कर दिया था देखो २।१२।५

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

त्वं॑ नो॒ अ॒स्या॒ इन्द्र॑ दु॒ह॒णा॒याः प्रा॒  
हि॒व॒ज्जि॒वो॒दु॒रि॒ता॒द॒भी॒क॑ । प्र॒नो॒वा-



जान॑द्यो॒ ३ अ॒प्र॒व॒बु॒ध्या नि॒षेय॑न्धि  
 अ॒व॒से॒स॒नु॒तायै॑ ॥ १४ ॥

तव॑म्	त्वम्	तू
नः॑	अस्मान्	हम को
अ॒स्याः	अस्याः	इस से
इन्द्र॑	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
दुः॒ऽह॒नायाः॑	दुःखेन॑ हन्तव्यायाः (दरिद्रतायाः) (हन्तेः कर्मणि खल् प्रत्ययः)	दरिद्रता॑ से
पा॒हि	पाहि	रक्षा कर
व॒जि॒ऽवः॑	हे वज्रिन् !	हे वज्र॑वाले
दुः॒ऽह॒तात्	पापात्	पाप से

अभीके	समीपे	समीप में
प्र	प्र+	-
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
वाजान्	वलानि	बलों को
रथयः	रथयुक्तानि (छन्दसिग्रनिपौ, इति मत्पर्योयईकारः)	रथ सहितों को
{ अप्रवऽ बुध्यान्	अश्वाः (विद्यमान त्वेन) बोद्धव्या- येषुतानि अन्तार्थम्	जिनमें घोड़ों का होना निश्चित हो उन को अन्न के लिये
इषे		
यन्धि	प्र+यन्धि, प्रयच्छ (विकरणस्यलुक्)	दे
अवसे	यशसे	यश के लिये
सुनतायै	प्रियसत्यात्मि- कायै वाण्यै	प्यारी (और) सच्ची वाणी के लिये

( ३२६९ ) क्र०मं०१सू०१२१मं०१५

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! इन्द्र ! त्वमस्मान् समीपे (वर्तमानात्) अस्माद् दारिद्र्यरूपात् पापाद् रक्ष, अन्नार्थं यशसे प्रियसत्यात्मिकायै वाण्यै (च) रथयुक्तानि, अश्वबोधकानि (च) बलानि अस्मभ्यं प्रयच्छ ॥१४॥

भाषार्थः ।

हे वज्रवाले इन्द्र ! आप हमें इस समीपवर्ती दारिद्र्यरूप पाप से बचावें, अन्न के लिये, यश के लिये (और) प्यारी (और) सच्ची वाणी के लिये रथ से युक्त (और) अश्वों के बोध कराने वाले बलों को हमारे ताई दें ॥ १४ ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ॥११॥११॥११॥११॥

मासाते॑ अ॒स्मत्सु॑म॒तिर्वि॑द॒सद्  
वाज॑प्रमहः॒समि॑षो॒वरन्त॑ । आनो॑  
भज॑मघ॒वन्गो॑ष्ठ॒वृथो॑ म॒हिष्ठा॑स्ते  
सध॒मादः॑स्याम । १५ ।

मा	मा	मत
सा	सा	वह
ते	त्वदीया	तेरी
अस्मत्	अस्मास्तु (सप्तम्यालुक्)	हममें
सुऽमतिः	अनुग्रहात्मिका बुद्धिः	दयाबुद्धि
वि	वि+	—
दस्त्	वि+दसत्, उपक्षीयताम् (दसुउपक्षये, लोडर्थे लुङ्)	क्षीण हो
वाजऽप्रमहः	वाजैर्वलैः प्रकृष्टं महस्तेजो यस्य तथोक्तस्तत्स- म्बुद्धौ	हे वलों के कारण प्रतापशाली
सम्	सम्+	—

इषः	अन्नानि	अन्न
वरन्त	सम् + वरन्त, संवृण्वन्तु, (घृञ्घरणे व्यत्ययेन) शप्)	चारों ओर हो
आ	आ +	-
नः	अस्मान्	हम को
भज	आ + भज, भागिनः कुरु	भागी बनाओ
मघऽवन	हे धनवन् ।	हे धनवाले
गोषु	गोषु	गौओं में ,
अट्यः	स्वामी	स्वामी
मंहिष्ठः	अतिस्तोतव्याः	अत्यन्त स्तुतिके
ते	तव	तरे योग्य
सधऽमादः	सहमाद्यन्तः (क्विप्)	साथ मोद करने वाले

स्याम	स्याम	हम होवें
-------	-------	----------

संस्कृतार्थः ।

हे बलैस्तेजस्विन् ! धनवन् ! (इन्द्र ! ) सा त्वदीया दयात्मिका बुद्धिरस्मासु मा उपक्षीयताम्, अन्नानि अस्मान् संवृण्वन्तु, स्वामी त्वम् गोषु अस्मान् भागिनः कुरु, (वयम्) अतिस्तोतव्याः (सन्तः) तव सहमादिनो भवेम ॥१५॥

भाषार्थः ।

हे बलोंके कारण प्रतापशाली ! धन वाले (इन्द्र ! ) वह आप की दयाबुद्धि हममें क्षीण न हो, अन्न हमारे चारों ओर हों, स्वामी आप गौओं में हम को भागी बनावें, हम अत्यन्त स्तुति के योग्य हुए २ आप के साथ मोद करने वाले हों ॥ १५ ॥

इत्येकविंशत्यधिकशततमं सूक्तम् ॥

## अ०मं० १ सू० १२२ ।

विश्वेदेवादेवताः रुक्षीवानृषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भाषार्थ ।

हे मरुतो ! आप जो क्रोध करके शीघ्र दयालु होजाते हो ऐसे आपने लिये हम दानोदर को हवि अर्पण करते हैं जिस में आपका भी भाग है, मैं रुद्र के साथ मरुतों की स्तुति इस लिये करता हूं कि वे आकाश और पृथिवी के वाणधारी पीरों की न्याईं सदा हमारी रक्षा में तत्पर रहने दें । १ । दिन और रात्रिदेवता भक्त को पहिली पुकार पर ही पत्नी की न्याईं तुरन्त उत्तर देती हैं, वे भिन्न प्रकार से जानी जाती हैं, एक तो धूर्ण जैसे घुने हुए वस्त्रों को पहनती है, दूसरी सूर्य की शोभा से सिंगरी हुई ऐसी सुन्दर प्रतीत होती है मानो सोने के आभूषण पहने हुए है । २ । भ्रमज करने वाले सूर्य का दर्शन हमें मद्युक्त करे, वर्षा करने वाले वायु का स्पर्श हमें मद्युक्त करे, बल के अभि-मानीदेवता इन्द्र और महत्त्व के आदर्शरूप पर्यंत हमारे उत्साह को बढ़ावें, यह सब देवता हम को धन देने की इच्छा करें । ३ । उशिक का पुत्र\* मेरे लिये अश्विनों को बुलावे, जो भाकर मेरी हवि को खावें, मेरी रक्षा करें और मुझे यश से उज्ज्वल करें, हे शार्व्यगण ! जलों के पुत्र अग्नि का अर्चन करो, ओर भक्त की माता पृथिवी और पिता आकाश को ध्याओ । ४ । हे आर्य्य-जन ! तुम्हारे लिये उशिक का पुत्र इन्द्र को पुकारता है जैसे पूर्व-

समय में घोषा ने पति की प्राप्ति के लिये पुकारा था, धनों के बांटने वाले पूषादेव की उदारता को जानता हुआ मैं अग्नि की धनराशि का वर्णन करता हूँ । ५ । हे मित्र और वरुण ! मेरी इस पुकार को सुनो, घर घर में जो आर्यजन आपको बुलाते हैं उन सब की पुकार को सुनो, हमारा सिन्धुनद जिस का दान प्रसिद्ध है, जो हमारे खेतों को सींच कर हरे मरे करता है और जो खूब सुनने वाला है जलों के साथ हमारी पुकार को सुने । ६ । हे मित्र और वरुण ! मैं आपके उस दान की प्रशंसा करता हूँ जो आपने मुझे यह में सौ गौएँ दिलाईं और प्रसिद्ध रथी राजा प्रियरथ को तत्काल पुष्टि दी और वह पुष्टि उसके लिये चिरस्थायी हुई । ७ । मैं उस बड़े धनी देवजन के दान की स्तुति करता हूँ, हम आर्यमनुष्य घोर पुत्रों वाले हुएर इकट्ठे मिलकर धन को भोगें, देवताओं ने अंगिरावंशियों को बहुत अन्न दिया है और मुझे घोड़े रथ और धन का स्वामी बनाया है । ८ । हे मित्र और वरुण ! जो मनुष्य सब के साथ द्रोह करता हुआ टेढ़ी चाल से चलता है और आपके साथ छेप करता हुआ रोम को नहीं निचोड़ता<sup>१</sup> उस के हृदय में नाश का मूल यक्ष्मा रोग स्थापन होता है । ९ और जो मनुष्य दैवीनियम के अनुकूल सब पर चलता हुआ स्तुति की वाणियों से आपको प्राप्त होता है । १० । वह मनुष्य देवताओं से प्रेरित होकर अत्यन्त बलवान् यशस्वी त्यागशील और सदा शूरवीर होता है, वह

१ अग्निप्राय यह है कि जो नास्तिक बुद्धि रखता हुआ किसी प्रकार से ईश्वर का पूजन नहीं करता ।

२ अर्थात् कुछ काल के अनन्तर वह समूल नष्ट हो जाता है ॥



युद्ध में निःशंक होकर जाता है और अपने-से बड़े से भी नहीं डरता। १०। हे आनन्द के देने वालो ! अमर राजाओ ! आप अब आकर स्तुति करने वाले भक्त की पुकार को सुनो, आकाश में वेग से चलते हुए आप रथी की पुकार को सुन कर उसे युद्ध में जिता कर धन दिलाते हो, जिससे आपका यश बढ़े । ११। देवताओं ने कहा है कि जो सोम निचोड़ कर यज्ञ में हमें बुलाएगा हम उसके लिये बल को लेकर आवेंगे, यश और धन का समूह जिन में स्थिर है ऐसे देवता हमारे यज्ञ में आकर हमसे अर्पण किये हुए अन्न को सेवन करें । १२। जब दस चमसों में सोम को उड़ाए हुए ऋत्विज लोग आहुति देने के लिये अग्नि की ओर जाते हैं तब हम हर्षसे युक्त होते हैं, जिन के घोड़े और रातें इच्छामुकूल हों वह हम क्या करें, घोड़े मालिक हैं और घोड़ों को जय के लिये स्वयं युद्ध की ओर प्रेरण करते हैं । १३। जिसके सोने के कान और रत्नों से जड़ी हुई प्रीया है उस धनरूप सूर्यको देवता हमें देखें, आर्य्य की स्तुति से तत्काल आने वाली उपायें स्तुति करने वाले और हवि देने वाले दोनों से प्रेम करें । १४। हे मित्र और वरुण ! मुझे राजा मशशरि ने चार और राजा आयवस ने तीन नई उमर के घोड़े दान किये हैं, मुझ पर अनुग्रह करी आपका लंबा रथ चमका है जिस के किरणों के डंडे हैं और जिस का सूर्यजैसा प्रकाश है । १५।

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११। ११। ११। ११। ११।

प्रवः पान्तं रघुमन्यवोऽन्धो यज्ञं

रुद्राय मीळ्हुषे भरध्वम् । दिवो अ-

स्तोष्यसुरस्यवीरैरिषु ध्येवमरुतो  
रोदस्योः ॥ १ ॥

प्र	प्र+	-
वः	युष्मान्	तुम्हें
पान्तम्	पालयन्तम्	पालते हुए को
रघुऽमन्यवः	हेलघुक्रोधाः !	हे शीघ्रगामी क्रोधवाले
अन्धः	अन्नम् (निघं०२१७)	अन्न को
यज्ञम्	यज्ञम्	यज्ञ को
रुद्राय	रुद्राय	रुद्र के लिये
मील्लक्ष्णे	दानिने	दानी के लिये
भरध्वम्	प्र+भरध्वम्, सम्पादयामः (पुरुषस्यत्ययः)	हमसंपादन करते हैं

दिवः	द्युलोकस्य	द्युलोक के
अस्तोषि	स्तौमि (लड्यें छान्दसो लुड्)	स्तुति करता हूं
असुरस्य	प्राणवनः	प्राणवान के
वीरैः	वीरैः	वीरों के साथ
इषुध्याऽइव	इषूणां धारका इव (गुणाभाये यणादेशः, विभक्तेरात्थम्)	बाणों के धारण क- रने वालों की न्याइ
मरुतः	मरुतः	मरुत
रोदस्योः	द्यावापृथिव्योः (निघं० )	द्यौ (और) पृथिवी के

सस्वतार्थः ।

हे लघुक्रोधाः ! ( मरुतः ! ) युष्माकं पालयितारम् अन्नरूपं यज्ञम् ( वयम् ) दानिने रुद्राय सम्पादयामः, ( अहम् ) प्राणवतो द्युलोकस्य वीरैः सह ( रुद्रम् ) स्तौमि ( यतस्ते ) द्यावापृथिव्योर्वाणानां धारयितार-इष ( सन्ति ) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे शीघ्रगामी क्रोध वाले (मरुतो ! ) आपके पालने वाले अन्नरूप यज्ञ को हम दानी रुद्र के लिये संपादन करते हैं, मैं प्राणवान् ब्रुलोक के वीरों के साथ (रुद्रकी) स्तुति करता हूँ (क्योंकि वे) द्यौ (और) पृथिवी के वाण धारण करने वालों की न्याईं (हैं) ॥ १ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

पत्नीवपूर्वहूतिंवाहधध्या उषा-  
सानक्तापुरुधाविदानि । स्तरीर्नाऽ  
त्कंव्युतंवसाना सूर्यस्यश्रियासुह-  
शीहिरण्यैः ॥ २ ॥

पत्नीऽहूव	पत्नीव	पत्नी की न्याईं पहिली पुकार को
पूर्वऽहूतिम्	पूर्वाह्वानम्	

वृद्धयै	वक्तुम् (वृद्धमापनेतुमर्थे शब्दै प्रत्ययः)	बोलने के लिये
उपसान्ता	अहोरात्रिदेवते (उभयत्रविभक्तेरात्मा)	दिन (और) रात्रि देवता
पुरुधा	भिन्नप्रकारेण	भिन्न प्रकारसे
विदाने०	ज्ञायमाने (दयत्ययेनाऽऽत्मनेपदे- सति विदेः कर्मणि लटः शानच्)	जानी जाती हुई
स्तरीः	धूम्रः (आ० को०)	धूँ
न	इव	की न्याई
अटकम्	वस्त्रम् (आ० को०)	वस्त्र को
विऽउतम्	व्यूतम्	वुने हुए को
वसाना	परिदधाना	पहिनती हुई

सूर्यस्य	सूर्यस्य	सूर्य की
श्रिया	शोभया	शोभा से
सुदृशी	शोभनं दृश्यमाना	सुन्दर दीखती हुई
हिरण्यैः	स्वर्णालङ्कारैः	सोनेके अलंकारोंसे

संस्कृतार्थः ।

भिन्नप्रकारेण ज्ञायमाने अहोरात्रिदेवते पत्नीव  
पूर्वाह्णाने वक्तुम् (स्पृहयेते,) (एका) धूम्र इव व्यूतं  
वस्त्रं परिदधाना (आस्ते, द्वितीया तु) सूर्यस्य शोभया  
स्वर्णालङ्कारैः सुदृश्यमाना (विद्यते) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

दिन (और) रात्रि देवता जो भिन्न प्रकार से  
जानी जाती हैं पत्नी की न्याई पहली पुकार पर  
बोलने के लिये (उत्सुक होती हैं,) एक धूँ की न्याई  
बुने हुए वस्त्र को पहिने हुए (है, और दूसरी) सूर्य की  
शोभा द्वारा सोने के भूषणों से सुन्दर दीखती (है) ॥२॥

विश्वेदेवादेवता निचृत्त्रिष्टुप्लन्दः ।११।११।११।११

ममत्तुनःपरिज्मावसर्हा ममत्तु

वातो॑अपां॑वृष॑णवान् । शि॒शी॒तमिन्द्रा-  
पर्व॑तायुवं॒न स्तन्नो॒विप्र॑वे॒वरि॑वस्य-  
न्तुदे॒वाः ॥ ३ ॥

म॒मत्तु	मादयतु (मदीहर्षे, अन्तर्भावि- तण्यर्थाल्लोटि विक- रणस्य इलुदछान्दसः)	मद से युक्त करे
नः	अस्मान्	हम को
परि॑ऽज॒मा	परितोगन्ता (सूर्यः)	भ्रमण करने वाला(सूर्य)
व॒स॒र्हा	वासरस्यगमयिता (सा०भा०)	दिनके प्राप्त कराने वाला
म॒मत्तु	मादयतु	मद से युक्त करे
वा॒तः	वायुः	वायु
अ॒पाम्	अपाम्	जलों के

वृषण्॑वान्	वर्षणवान्	वरसाने वाला
शि॒शी॒तम्	तीक्ष्णीकुरुतम्, उत्तेजयतमित्यर्थः	उत्तेजित करो
इन्द्रा॑पर्व॒ता	हे इन्द्रापर्वतौ !	हे इन्द्र (और) पर्वत
यु॒वम्	युवाम्	तुम दोनों
नः॑	अस्मान्	हम को
तत्	ते (विभक्तैर्लुक्)	वे
नः॑	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
वि॒प्र॒वे	सर्वे	सब
व॒रि॒व॒स्य॒न्तु	धनंदातुमिच्छन्तु (वरिवसति धननाम, निघ० २।१० तस्मात्क्वच्यत्प्रत्ययः)	धन देने की इच्छा करें
दे॒वाः	देवाः	देवता



संस्कृतार्थः ।

वासरस्य गमयिता परितोगन्ता (सूर्यः)  
 अस्मान् मादयतु, अपां वर्षिता वायुः (व)मादयतु, हे  
 इन्द्रापूर्वतौ ! युवाम् अस्मानुत्तेजयनम्, एते सर्वे देवा  
 अस्मभ्यं धनं दातुमिच्छन्तु ॥ ३ ॥

माषार्थः ।

दिनके प्राप्त कराने वाला (और) चारों ओर  
 भ्रमण करने वाला (सूर्य) हमें मद से युक्त करे (और)  
 जलोंके वरसाने वाला वायु मद से युक्त करे, हे इन्द्र  
 (और) पर्वत ! आप हमें उत्तेजित करें, ये सब देवता  
 हमारे लिये धन देने की इच्छा करें ॥ ३ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११।

उ॒त॒त्या॒मे॒य॒श॒सा॒श्वे॒त॒ना॒यै॒ व्य॒-

न्ता॒पा॒न्तौ॒ शि॒जो॒हु॒व॒ध्यै॒ । प्र॒वो॒न॒पा॒तः॒-

म॒पां॒क्ता॒ण॒ध्वं॒ प्र॒मा॒तरा॒रा॒स्पि॒न॒स्या॒-

योः । ४ ।

वृषण्॑ऽवान्	वर्षणवान्	बरसाने वाला
शि॒शी॒तम्	तीक्ष्णी॑कुरुतम, उत्तेजयतमित्यर्थः	उत्तेजित करो
इन्द्रा॑पर्व॒ता	हे इन्द्रा॑पर्वतो !	हे इन्द्र (और) पर्वत
युव॑म्	युवाम्	तुम दोनों
नः॑	अस्मान्	हम को
तत्	ते (विभक्तैर्लुक्)	वे
नः॑	अस्मभ्य॑म्	हमारे लिये
वि॒श्वे॑	सर्वे	सब
वरि॑वस्यन्तु॒	धनं॑दातुमिच्छन्तु (वरिव॑रतिघननाम, निघं० २।२० तस्मात्क्यच्प्रत्ययः)	धन देने की इच्छा करें
दे॒वाः	दे॒वाः	दे॒वता

नपातम्	पुत्रम्	पुत्र को
अपाम्	अपाम्	जलों के
कृणुध्वम्	प्र+कृणुध्वम्, अर्चयत (आ०को०)	पूजो
प्र	प्र+(कृणुध्वम्) अर्चयत	पूजो
मातरा	मातरौ (विभक्तेरात्यम्)	माताओं को
रास्मिपनस्य	स्तोतुः (निघं०४।३)	स्तोता के
आयोः	मनुष्यस्य ( निघं० २।३)	मनुष्य के

संस्कृतार्थः ।

अपिच उशिजः पुत्रो यशसा ममोज्ज्वलनार्थम्  
(हविः) भक्षयन्तौ रक्षन्तौ (चाऽद्विनौ) आह्वयितुम्  
(प्रवृत्तो भवत्) (हे आर्याः!) धूयम् अपां पुत्रम्  
अर्चयत, स्तोतुर्मनुष्यस्य मातरौ (द्यावापृथिव्यौ  
च) अर्चयत ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

और उशिक् का पुत्र यशसे मेरे उज्ज्वल होने के

उत	अपिच	और
त्या	तौ (विमर्केरात्वम्)	उन दोनों को
मे	मम	मे
यशसा	यशसा	यश से
श्वेतनायै	उज्ज्वलनार्थम्	उज्ज्वल होने के लिये
व्यन्ता	व्यदन्तौ, [हविः] भक्षयन्तौ (वकारलोपदछान्दसः)	[हवि] भक्षण करने वालों को
पान्ता	पान्तौ	रक्षाकरनेवालों को
अश्विजः	अश्विजःपुत्रः	अश्विक का पुत्र
हवधयै	आह्वयितुम् (तुमयैश्वर्यै)	बुलाने के लिये
प्र	प्र+	-
वः	यूयम् (प्रथमार्थेबितीया)	तुम सब



लिये उन ( हवि ) खानेवाले ( और ) रक्षा करने वाले ( अश्विनो ) को बुलाने में ( प्रवृत्त हो ) ( हे आर्यों ! ) तुम जलों के पुत्र की पूजा करो ( और ) स्तोता मनुष्य की माताओं ( द्यौ और पृथिवी ) की पूजा करो ॥ ४ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

आ॒वो॒रु॒व॒ण्यु॒मौ॒शि॒जो॒हु॒व॒ध्यै  
घो॒षे॒व॒शंस॒मर्जु॑नस्य॒न॒शे । प्र॒वः॒पू॒ष्णे  
दा॒व॒न॒आ॒अच्छा॑ वो॒चे॒य॒व॒सु॒ता॒ति॒-  
स॒ग्नेः । ५ ।

आ	आ +	-
वः	युष्मदर्थम्	आप के लिये
रु॒व॒ण्यु॒म्	गर्जितारम्	गरजने वाले को



पचं॑क	आ + अच्छ, अभिलक्ष्य	लक्ष रख कर
वो॒चे॒य	प्र + वोचेय, प्रवचिम (लङ्घ्ये लिङ्)	कथन करता हूँ
वसु॑ऽता॒तिम्	धनराशिम् (तातिल् प्रत्ययः)	धनराशि को
अ॒ग्नेः	अग्नेः	अग्नि की

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्य्योः!) उशिजः पुत्रो युष्मदर्थं गर्जितारम्  
(इन्द्रम्) आह्वयितुम् (प्रवृत्तो भवति) यथा घोषा अर्जु-  
नस्य प्राप्तये आह्वानम् (कृतवती) (अहम्) युष्मदर्थं  
दानिनं पूषणम् अभिलक्ष्य अग्नेर्धनराशिं वर्णयामि ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

(हे आर्यगण ! ) उशिकू का पुत्र आपके लिये  
गर्जनेवाले (इन्द्र) को बुलानेके लिये (प्रवृत्त होता है)  
जैसे घोषा ने अर्जुन की प्राप्ति के लिये बुलाया था,  
मैं आपके लिये दानी पूषा को लक्ष में रख कर  
अग्नि की धनराशि का वर्णन करता हूँ ॥ ५ ॥

घोषा ने पति की प्राप्ति के लिये (इन्द्र को) बुलाया था, सम्भव  
है कि भर्जम उस के पति का नाम हो ।



विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

श्रुतं मे मित्रावरुणा हवे मो त श्रुतं  
सदने विभूवतः सीम् । श्रोतुनः श्रोतु-  
रातिः सुश्रोतुः सुक्षेत्रासिन्धुरङ्घ्रिः । ६।

श्रुतम्	शृणुतम् (विकरणस्य लृक्)	सुनो
मे	मम	मेरी
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणो !	हे मित्र (और) वरुण
हवा	आह्वानानि (क्षेपेण)	पुकारों को
इमा	इमानि (,,)	इन को
उत	अपिच	और भी
श्रुतम्	शृणुतम्	सुनो
सदने	रहे	घर में

विप्रवतः	सर्वतः	सब ओर से
सीम्	(पूरणः)	-
श्रोतु	शृणोतु	सुने
नः	अस्माकम्	हमारे
श्रोतुऽरातिः	प्रसिद्धदानः	प्रसिद्ध दानी
सुऽश्रोतुः	सुश्रोता (औणादिकं रूपम्)	खूब सुनने वाला
सुऽक्षेत्रा	सुक्षेत्रः (विमर्कैरात्वम्)	सुन्दर खेतों वाला
सिन्धुः	सिन्धुः	सिन्धु
अत्ऽभिः	अद्भिःसह	जलों के साथ

संस्कृतार्थः ।

हे मित्रावरुणौ!(युवाम्)इमानि मदीयानि आह्वानानि शृणुतं, गृहे(च)विश्वतः (आह्वानानि)शृणुतम्, प्रसिद्धदानः, सुश्रोता, सुक्षेत्रः (च)सिन्धुः अद्भिः सह अस्मान् शृणोतु ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे मित्र (और) वरुण ! आप इन मेरी पुकारों को सुनो, (और) घर में सब ओर से (पुकारों को) सुनो, प्रसिद्धदानी, खूब सुनने वाला (और) सुन्दर खेतों वाला सिन्धु जलों के साथ हम को सुने ॥ ६ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११११११११११

स्तु॒षे॒सा॒वा॒व॒रु॒ण॒मि॒त्र॒रा॒ति॒र्ग॒वां

श॒ता॒पृ॒क्ष॒या॒मि॒षु॒प॒ज्जे । श्रु॒त॒र॒धे॒प्रि॒य॒र॒थे

द॒धा॒नाः॒ स॒द्यः॒पु॒ष्टिं॒नि॒रु॒न्धा॒ना॒सो

अ॒ग॒म॒न् । ७ ।

स्तु॒षे

सा

वा॒म्

स्तु॒वे

(व्यत्ययेन मध्यमः)

तत्

(विभक्तेःसुः)

यु॒व॒योः

स्तुति करतां हूँ

उसको

तुम दोनों के

वरुण	हे वरुण !	हे वरुण
मित्रः	हे मित्र !	हे मित्र
रातिः	दानम् (विमर्केःसुः)	दान को
गवाम्	गवाम्	गौओं का
शता	शतम् (विमर्केरात्यम्)	सैंकड़ा
पृक्षायामेषु	पृक्षाणामन्नानां यामः नियमनं येषु तथोक्तेषु (यज्ञेषु) (पृक्षारत्यन्ननाम निर्घ०२।७)	अन्न से युक्त हुए (यज्ञों) में
पञ्च	पञ्चवंशीये	पञ्चवंशी में :-
श्रुतऽर्थे	प्रसिद्धरथोपेतं	प्रसिद्धरथवाले में
प्रियऽर्थे	प्रियरथे	प्रियरथ में

दधानाः	धारयन्तः	धारण करते हुए
सद्यः	तत्कालम्	तत्काल
पुष्टिम्	पुष्टिम्	पुष्टि को
{ निऽरुन्धा- नासः अगमन्	स्थिरीकुर्वन्तः (जसोऽसुगागमः)	स्थिर करते हुए
	प्राप्तवन्	पहुंचे

संस्कृतार्थः ।

हे वरुण ! हे मित्र ! (अहम्) युवयोः तद् दानं  
स्तुवे (यद् देवाः) यज्ञेषु पञ्चवंशीये (मयि) गवांशतं,  
प्रसिद्धरथोपेते प्रियरथे (च) सद्यः पुष्टिं दधानाः  
स्थिरीकुर्वन्तः (च) प्राप्तवन्तः ॥७॥

भाषार्थः ।

हे वरुण! हे मित्र ! मैं आपके उस दानकी स्तुति  
करता हूँ जो यज्ञों के बीच (देवता) (मुझ) पञ्चवंशी में सौ  
गौओं को (और) प्रसिद्ध रथ वाले (राजा) प्रियरथ  
में तत्काल पुष्टि को धारण (और) स्थिर करते हुए  
पहुंचे ॥ ७ ॥

भा०म०१ सू०१२० म०८ ( ३२९४ )

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ॥११॥११॥११॥११॥

अस्यस्तुप्रेमहिमघस्यराधः स-

चासनेमनहुषःसुवीराः । जनोयः

पृजेभ्योवाजिनीवा नपूवावतो रथि-

नोमह्यंसरिः ॥८॥

अस्य	अस्य	इस के
स्तुप्रे	स्तुत्रे (व्यत्ययेन मध्यमा)	स्तुति करता हूं
महिऽमघस्य	महाधनिन.	महाधनी के
राधः	दानम् (आ०को०)	दान को
सचा	सह (भूत्वा)	इकट्ठे (होकर)
सनेम	सम्भजेम	हम भोगें

क्र०सं० ६९,७० अङ्कयोः शुद्धयशुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्	पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१०५	९	यवम्	युवाम्	३१४४	९	तान	तीन
"	१३	जाट्य	जीट्य	३१४६	१०	परा	पुरा
३१०६	१	का	को	३१४८	६	यक्तासः	युक्तासः
३१०७	१६	तुभाय	तुभाय	३१५४	८	लट्	लट्
३१०८	१	प	पू	"	१०	नः	पुनः
३१०९	१०	रीति	रीतियो	३१५७	१	चक्षः	चक्षुः
३११०	९	सम्	सम्	"	४	तु ने क	तुमने फिर दिया
३१११	८	हेवारौ !	हेवारौ !	३१५८	८	वे	
३११३	२	अम्	अम्	३१५९	९	प्रात	प्रति
३११६	१	देवा	देवो	३१६०	१	नाम्	गाम्
३११९	१७	व्या	व्या	३१६५	३	स्तुताः	स्तुतीः
"	"	युवा	युवा	३१६८	१२	ज्ञा	उप्रा
३१२२	१५	अघे	अघे	"	१४	धर्म	धर्म
"	"	सा	ज्ञा	"	२०	दीर्घायुं	दीर्घायुषं
३१२३	७	धसेद्	दूधसे	३१६९	११	बाधा	घोधा
३१२९	४	हुईका	हुईको	३१७०	१७	हेओ	हेओ
३१३७	१६	मादय	मदिय	३१७१	११	का	को
"	"	मन	मनु	२१८१	७	नष्टं	नष्ट
३१३८	२१	पुनर्थ	पुनर्थ	३१८८	३	यवम्	युवम्
३१३९	१२	रथो	रथो	३१९०	९	प्राप्तं	नष्टप्राप्तं
"	१४	जघो	जघो	३१९२	८	चित्रा	चित्राः
"	१७	घाम्	घाम्	३१९३	११	यघं	यघं
"	१९	मर्त्यस्य	मर्त्यस्य	३१९४	१५	ययम्	युयम्

# विज्ञापन ।

---

इस अंक के साथ छठा साल पूरा होगया है, जिन स्वाध्यायी पंडितों की सूचना आएगी. उन का नाम सातवें साल के रजि-  
स्टर में लिखा जावेगा, जिन की नहीं आवेगी उनको नाम अगला अंक नहीं जायगा—पिछले अंक डाक महसूल भेजने से भेजे जावेंगे ।

मुन्शी जयराम

मैनेजर ऋग्वेद संहिता,  
फ़ीरोज़पुर छावनी ।



अंक ७३-७४]

[भाद्रपद १९६९]

# ऋग्वेद संहिता

## (वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद  
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर  
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री  
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने  
सम्पादन किया।

लाहौर

पञ्जाब एकादमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर छात्रा  
शालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

७० अंकों का मूल्य १३०)

नहुषः	मनुष्याः (निघं०२।३)	मनुष्य
सु०वीराः	सुवीरोपेताः	सुन्दरवीरोंसे युक्त
जनः	(देव-)जनः	[देव-] समूह
यः	यः	जो
प॒ज॒भ्यः	प॒ज्ज॒वंशीयेभ्यः	प॒ज्ज॒वंशियों के लिये
{ वा॒जिनी- { ०वान्	प्रभूतेनाऽन्नेन युक्तः	बहुत अन्न वाला
अ॒श्व॒वऽवतः	अश्वोपेतस्य	घोड़ों से युक्त के
रथिनः	रथिनः	रथ से युक्त के
म॒ह्यम्	मह्यम्	मेरे लिये
सूरिः	प्रेरयिता (प्रप्रेरणे)	प्रेरण करने वाला

(अहम्)अस्य महाधनिनः (देव-) जनस्य दानं  
स्तौमि, (वयमार्य-) मनुष्याः सुवीराः (सन्तः) सह  
(भूत्वा) सम्भजेम, यः (देव-) जनः-पञ्चवंशीयेभ्यः  
प्रभूतेनाऽन्नेन युक्तो मह्यम् (च) अश्वोपेतस्य  
रथोपेतस्य (च धनस्य) प्रेरयिता (अस्ति)॥८॥

मापार्थः ।

मैं इस महाधनी (देव-) जन के दान की स्तुति  
करता हूँ, (हम आर्य-) मनुष्य सुन्दर वीरोंसे युक्त  
(हुए २) एकट्ठे मिल कर भोगें जो (देवजन) अंगि-  
रावंशियों के लिये बहुत अन्न वाले (और) मेरे  
लिये घोड़ों से (और) रथोंसे युक्त (धन) के प्रेरण  
करने वाले हैं ॥ ८ ॥

मित्रावरुणौदेवते, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः॥११॥११॥११॥१०

जनी॒यीमि॒त्रावरु॑णावभि॒ध्रु ग॒णो-  
नवा॑सनीत्य॒क्षणा॒याध्रुक् । स्वयं॑सय-  
क्षमं॑ हृदये॒निधत्त॑ आप॒यदी॑होचाभि-  
र्च॒तावा॑ ॥ ९ ॥

जनः	मनुष्यः ॥	मनुष्य
यः	यः	जो
मित्रावरुणौ	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र[ओर] वरुण
अभिऽध्रुक्	अभितो द्रोग्धा	सब ओर से द्रोह करने वाला
अपः	जलमयान् [सोमान्]	जलमय(सोमों)को
न	न	नहीं
वाम्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
सुनोति	निष्पीडयति	निचोड़ता है
{ अक्षय्याऽ-	कुटिलगत्या द्वेष्टा	टेढ़ी चाल से द्वेष करने वाला
ध्रुक्		
स्वयम्	स्वयम्	अपने आप
सः	स-	वह

य॒क्ष्मम्	यक्ष्मरोगम्	यक्ष्मा रोग को
हृ॒दये	हृदये	हृदय में
नि	नि+	-
ध॒त्ते	नि+धत्ते, स्थाप- यति	स्थापन करता है
प्रा॒प	प्राप्नोति (लङ्ये लिट्)	प्राप्त होता है
यत्	यः (विभक्तैर्लुक्)	जो
ई॒म्	[पूरणः]	-
हो॒त्राभिः	वाग्भिः (निघं० १।११)	वाणियों से
कृ॒तऽवा	कृतयुक्तः	नियम से युक्त

[संस्कृतार्थः ।

हे(मिश्रावरुणो ! ) अभितो द्रोग्धा यो मनुष्यः  
कुटिलगत्या द्रेष्टा (सन्) युवाभ्यां जलमयान्  
(सोमान्) न निष्पीडयति, स स्वयं हृदये यक्ष्मरोगं

स्थापयति, यः (च जनः) ऋतेन युक्तः (सन् स्तुति-  
रूपाभिः) वाग्भिः (युवाम्) प्राप्नोति ॥ ९ ॥

मापार्थः ।

हे मित्र (और) वरुण ! सब से द्रोह करने वाला  
जो मनुष्य टेढ़ी चाल से द्वेष करता हुआ आपके लिये  
जलमय (सोमों) को नहीं निचोड़ता, वह अपने आप  
हृदय में यक्ष्मा रोग को स्थापित करता है, (और)  
जो मनुष्य नियम से युक्त हुआ २ स्तुतिरूप वाणियों  
से (आपको) प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

इस का सम्बन्ध अगले मंत्र के साथ है ।

विश्वेदेवादेवता निचृत्त्रिष्टुप्लन्दः ।११।१०।११।११

स॒व्राध॑तो॒न॒हु॒षोदं॑सु॒जतः॑ श-

ध॑स्त॒रो॒न॒रांगू॑र्तश्च॒वाः । वि॒सृष्ट॑राति-

र्या॑ति॒वाल्ह॑सृ॒त्वा वि॒श्वा॑सु॒पृ॒त्सु

सद॒मि॒च्छू॑रः ॥ १० ॥

सः	सः	वह
ब्राधतः	महतः (निघं०३१३ )	महानों को
नहुषः	मनुष्यान् (निघं०२१३ )	मनुष्यों को
दम्ऽसुजतः	दानशीलैः (देवैः) सुप्रेरितः	दानी (देवताओं) से खूब प्रेरण किया हुआ
शर्धऽतरः	बलवत्तरः (शर्धश्चति बलनाम निघं०२१९ )	अत्यन्त बलवान्
नराम्	नराणाम् (मध्ये) (वर्णापायदछान्दसः)	नरों के (बीच)
गूर्तऽश्रवाः	विख्यातयशः	प्रसिद्ध यश वाला
विस्फुटऽ- रातिः	विस्फुटा त्यक्ता रातिर्दानं येन तथोक्तः,	त्यागशील

याति	प्राप्नोति	जाता है
{ बाळ्हऽ- सृत्वा	भृशं सर्ता, अशङ्कि- तगमनः (सतैः कनिष)	निश्शङ्क होकर जाने वाला
विप्रवासु	सर्वेषु	सब में
पृत्ऽसु	सङ्ग्रामेषु (निघं०२।१७)	युद्धों में
सदम्	सदा	सदा
इत्	एव	ही
शूरः	शूरः	शूरवीर

संस्कृतार्थः ।

स दानशीलैः (देवः) सुप्रेरितः, नराणाम् (मध्ये)  
बलवत्तरः, विख्यातयशाः, त्यागशीलः सर्वेषु  
सङ्ग्रामेषु सदैव शूरः महतो मनुष्यान् (अपि)  
अशङ्कितगमनः (सन्) प्राप्नोति ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

वह दानशील (देवताओं) से खूब प्रेरित हुआ, ,



श्रु०मं०१सू०१२२मं०११ ( ३३०२ )

नरों के [बीच] अत्यन्त बलवान्, प्रसिद्धयशवाला,  
त्यागशील [और] सब युद्धों में सदा शूरवीर बड़े मनुष्यों  
के सामने [भी] निश्शङ्क (होकर) जाता है ॥ १० ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्लुन्दः । ११ । ११ । ११ । ११

अध॒ग॒म॒न्ता॒न॒हु॒षो॒ह्व॒सू॒रेः श्री-  
ता॒रा॒जा॒नी॒अ॒मृत॑स्यमन्द्राः । न॒भो॒जु-  
वी॒यन्नि॑र॒वस्य॑राधः प्रश॑स्तयेमहि-  
ना॒रथ॑वते ॥ ११ ॥

अध॑	अथ	अव
ग॒म॒न्त॑	प्राप्नुत (गमेर्लङ्घ्ये लङि व्य- त्ययेन तः, शपोलृक्, उपधा लोपश्च) =	तुम प्राप्त हो
न॒हु॒षः॑	मनुष्यस्य (निघं० २।३)	मनुष्य की

हवम्	आह्वानम्	पुकार को
सुरेः	स्तोतुः (निघं० ३।१६)	स्तोता की
श्रोत	शृणुत (शषोलुक्)	सुनो
राजानः	हे राजानः !	हे राजाओ
अमृतस्य	अमृतस्य	अमृत के
मन्द्राः	हे हर्षयितारः !	हे हर्ष के देने वाले
नभःऽजुवः	नभसि वेगवन्तः	आकाश में वेग वाले
यत्	ये (विभक्तलुक्)	जो
निरवस्य	निर्गतो मुखादुच्च रितोरवःशब्दो यस्य तस्मै (घतुर्थ्ये षष्ठी)	पुकारने वाले के लिये
राधः	धनम्	धन को

प्रशस्तये	प्रशंसार्थम्	प्रशंसा के लिये
महिना	महत्त्वेन (मकारलोपदछान्दसः)	महत्त्व से
रथवते	रथवते	रथी के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे हर्षयितारः ! अमृतस्य राजानः ! (देवाः!)  
(तेयूयम्) इदानीमागच्छत, स्तोतुर्मनुष्यस्याऽऽह्वानं  
शृणुत, नभसि वेगवन्तो ये (यूयम्) आह्वयित्रे रथवते  
(निज-)महत्त्वेन प्रशंसार्थं धनम् (प्रयच्छथ) ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे हर्ष के देने वाले ! अमृत के राजा (देव-  
ताओ ! ) (वे) आप अब आओ, स्तोता मनुष्य की  
पुकार को सुनो, आकाश में वेग वाले जो आप  
पुकारने वाले रथी के लिये (अपने) महत्त्व से प्रशंसा  
के लिये धन को (देते हो) ॥ ११ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११ । ११ । ११ । ११

एतं शर्धधामयस्यसूरे रित्यवो-

च॒न्द्द॒श॒त॒य॒स्य॒नं॒शे । द्यु॒म्ना॒नि॒येषु॑  
व॒सु॒ता॒ती॒रा॒रन् वि॒प्र॒वे॒सन्व॒न्तु॒प्रभु॑-  
येषु॒वा॒जम् ॥ १२ ॥

ए॒तम्	एतत्	इस को
श॒र्धम्	बलम्	बल को
ध्राम्	धारयिष्यामः (दधातेर्लुङ् अर्थे लुङि सिचोलुक्, भडभायः)	हम धारण करेंगे
य॒स्य	यस्य	जिस के
सू॒रेः	स्तोतुः	स्तोता के
इ॒ति	इति	ऐसे
अ॒वो॒चन्	उक्त्वन्तः	कहा

दश॑ऽतयस्य॑	दश॑चमसेष्वव- स्थिनस्य॑(सोम॑स्य) (सा०भा०)	दस॑ चमस पात्रों में रखे हुए (सोम) की
न॑ष्टो	प्राप्तये (..)	प्राप्ति के लिये
दु॑स्नानि	यशांसि	यश
येषु॑	येषु	जिन में
वसु॑ऽतातिः	धनराशिः	धन का समूह
र॒रन्	भृशं॑ रमन्ते (यद्गुल्गन्तादरमतेर्ल- ङर्थेऽङि कृपम्)	खूब रमण करते हैं
वि॒घ्नवे॑	सर्वे	सब
स॒न्वन्तु॑	सभजन्ताम् (पण सम्मत्तौ)	सेवन करें
प्र॒भ॒धेषु॑	यज्ञेषु (सा० भा०)	यज्ञों में
वाज॑म्	अन्नम्	अन्न को

संस्कृतार्थः ।

‘यस्य स्तोतुर्दशचमसेष्ववस्थितस्य (सोमस्य) प्राप्तये (वयमाहूनाःस्मः, तस्मै) एतद्वलंधारयिष्यामः’ इति (देवाः) उक्तवन्तः, येषु यशांसि धनानि (च) रमन्ते (ते) विश्वे (देवाः) यज्ञेषु अन्नं सम्भजन्ताम् ॥ १२ ॥

भाषार्थः ।

‘जिस स्तोता के दश चमसों में रखे हुए (सोम) की प्राप्ति के लिये (हम चुलाए गए हैं, उसके लिये) इस बल को धारण करेंगे’ ऐसा (देवताओं ने) कहा, जिन में यश (और) धन रमण करते हैं वे सब (देवता) यज्ञों में अन्न को सेवन करें ॥ १२

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

म॒न्दाम॑हे॒दश॑तयस्य॒धा॒से॒ द्वि॒र्य-

तप॑ञ्च॒विभ्र॑तो॒यन्त्य॑न्ना । कि॒मि-

ष्टा॑श्व॒द्व॒ष्टर॑श्मि॒रेत॑ ई॒शा॒नास॑स्त

रुष॑ञ्च॒जते॑नून् । १३ ।

मन्दामहे	हृष्यामः	हम हर्षित होते हैं
दशतयस्य	दशचमसेष्वव- स्थितस्य	दस चमसों में रखे हुए के
धासेः	(सोमरूपस्य) अन्नस्य (निघं० २।७)	(सोमरूप)अन्न के
द्विः	द्विः+	-
यत्	यदा	जब
पञ्च	द्विः+पञ्च	दो पंजे को
विभ्रतः	धारयन्तः	धारण करते हुए
यन्ति	गच्छन्ति	जाते हैं
अन्ना	अन्नानि (शैलोपः)	अन्नों को
किम्	किम्	क्या
इष्टअग्रवः	इष्टाग्रवोपेताः (सुणामिति यिमकोः सुः)	अभीष्ट घोड़ों वाले

दृष्टरश्मिः	इष्टरश्मियुक्ताः (,,)	अभीष्ट रासां वाले
एते	एते	ये
ईशानासः	ईशितारः	ईशन करते हुए
तरुषः	जयशीलाः (तरुतरौणादिक उतिः)	जयशील
ऋञ्जते	प्रेरयन्ति	प्रेरण करते हैं
नृन्	नरान्	वीरों को

संस्कृतार्थः ।

(वयम्) दशचमसेष्ववस्थितस्य (सोमरूपस्य) अन्नस्य (अर्पणेन) दृष्यामः, यदा (अस्मदीयाऋत्विजः) द्विपञ्चकानि (सोमरूपाणि) अन्नानि धारयन्तश्चलन्ति, अभीष्टाऽऽवोपेताः अभीष्टरश्मिवन्तः (च नराः) किम् (कुर्युः,) एते ईशितारो जयशीलाः (चाऽश्वाः) नरान् (युद्धार्थम्) प्रेरयन्ति ॥१३॥

भाषार्थः ।

हम दश चमसों में रखे हुए (सोमरूप) अन्न



के (अर्पण करने से) हर्षित होते हैं, जब (हमारे ऋत्विज) दो पंजे (सोमरूप) अन्नों को धारण करते हुए चलते हैं, अभीष्ट घोड़ों वाले (और) अभीष्ट रासों वाले (नर) कथा करें, ये ईशान करने वाले जयशील (घोड़े) नरों को (युद्ध के लिये) प्रेरण करते हैं ॥१३॥

त्रि॒श्वेदे॒वादे॒वताः, त्रि॒ष्टुप्छन्दः ॥११॥११॥११॥११॥

हिरण्यकर्णमणिग्रीवमर्ण स्त-

न्नोविप्रवेवरिवस्यन्तुदेवाः । अथर्वो

गिरःसद्यआजग्मुषीरो स्वाप्रचाक-

न्तुभयेष्वस्मे । १४ ।

{ हिरण्य- ऽकर्णम्	हिरण्ययुक्तकर्ण- वन्तम्	सोने से युक्त कानों वाले को
मणिऽग्रीवम्	मणियुक्तया- ग्रीवयायुक्तम्	मणियों से युक्त ग्रीवा वाले को

अर्णाः	क्षोभयुक्तम्	क्षोभ वाले को
तत्	तत्	उस को
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
विप्रवे	सर्वे	सब
वरिवस्यन्तु	धनं दातुमिच्छन्तु (धरिषरतिधननाम निघ० ५४ च् प्रत्ययः)	धन देने की इच्छा करें
देवाः	देवाः	देवता
अर्थः	आर्यस्य (इस्य इच्छान्वसः, सुपा- मिति विभक्तेः सुः)	आर्य की
गिरः	स्तुतीः	स्तुतियों को
सद्यः	तत्कालम्	तत्काल
आ	आ +	—
जग्मुषीः	आ + जग्मुषीः, आगतवत्यः (पर्यस्तघर्णदीर्घः)	आई हुई

आ	आ+	-
उसाः	उषमः (आ०को०)	उषाएँ
चाकन्तु	आ+चाकन्तु, प्रीतिं कुर्वन्तु	अनुराग करें
उभयेषु	उभयेषु	दोनों में
अस्मे०	अस्मासु (सप्तम्याःशेभादेशः)	हम में

संस्कृतार्थः ।

सर्वदेवाः अस्मभ्यं हिरण्ययुक्तकर्णवन्तं मणि-  
युक्तया ग्रीवया युक्तम् [च] क्षोभयुक्तम् [सूर्यम्]  
धनरूपेण दातुमिच्छन्तु, आर्य्यस्य स्तुतीःप्रति सद्यः  
आगतवत्युपसः (हविर्दातरि स्तोतरिचेति) उभयेषु  
अस्मासु प्रीतिं कुर्वन्तु ॥ १४ ॥

भाषार्थः ।

सब देवता [हमारे लिये] सोने से युक्त कानों  
वाले [और] मणियों से युक्त ग्रीवा वाले क्षोभयुक्त  
[सूर्य]को धनरूप से देने की इच्छा करें, आर्य्य की  
स्तुतियों के प्रति तत्काल आई हुई उषाएँ [हवि  
देने वाले और स्तोता इन) हम दोनों में अनुराग  
करें ॥ १४ ॥

मित्रावरुणौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

च॒त्वारो॑मा॒मश॒शरि॑स्य॒शि॒श्रु॒व

स्त्र॒योरा॒ज्ञा॒यव॑सस्यजिष्णोः। रथो॑

वा॑मि॒त्रावरु॑णादी॒र्घाप्साः॑ स्यू॒मग-

भ॒स्तिःसू॒रोनाऽद्यौ॑त् । १५ ।

च॒त्वारः॑	चत्वारः	चार
मा	माम्	मुझ को
म॒श॒शरि॑स्य	मशशरि॑स्य	मशशरि॑ के
शि॒श्रु॒वः॑	शिश्रुवः (गुणाभावे यणादेशः)	बालक
त्र॒यः॑	त्रयः	तीन
रा॒ज्ञः॑	राज्ञः	राजा के

आयवसस्य	आयवसस्य	आयवस के
जिष्णोः	जयशीलस्य	जीतने वाले के
रथः	रथः	रथ
वाम्	युवयोः	तुम दोनों का
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र (और) वरुण
दीर्घऽअप्साः	दीर्घरूपः (अप्स इति रूपनाम निघं०३।७)	बड़े रूप वाला
{स्यमङ्ग- भेस्तिः	किरणरूपदण्डो- पेतः	किरण रूपी डंडों वाला
सूरः	सूर्यः	सूर्य
न	इष	की न्याईं
अदौत्	दीप्तवान्	चमका हे

संस्कृतार्थः।

हे मित्रावरुणौ ! मां चत्वारः [राज्ञः] मशर्शारस्य, त्रयः [च] जयशीलस्य राज्ञआयवसस्य(अश्व-)  
शिशवः [प्राप्ताः] किरणरूपदण्डोपेतो दीर्घरूपः [च]  
युधयोरथः सूर्यइव दीप्तवान् ॥ १५॥

भाषार्थः।

हे मित्र [और] वरुण ! मुझको चार [राजा]  
मशर्शार के [और] तीन जयशाली राजा आयवसके  
बालक घोड़े [मिले हैं] किरणरूपी डंडों वाला (और)  
बड़े रूप वाला आपका रथ सूर्य की न्याई चमका  
है ॥ १५ ॥

इतिद्वाविंशत्युत्तरशतमं सूक्तम्।

## ऋ०मं० १ सू० १२३ ।

उषादेवता, दीर्घतमसःपुत्रःकक्षीवानृपिः ।

त्रिनियोगः—

१—१३ । एतत्सूक्तं प्रातरनुवाके उपस्थेकृतौ आश्विनशस्त्रेच  
विनियुक्तम् ।

**सूक्त का भाषार्थ ।**

दक्षिण की ओर उषा का चोड़ा रथ जुड़ गया है \* और  
मरणरहित देवता इस पर चढ़ गए हैं, महारानी उषा मनुष्यसमु-  
दाय के लिये चिकित्सा † करती हुई काले आकाश से उठ खड़ी  
है । १ । धन को जीतने वाली दानशाला उषा सारे जगत से पहिले  
जागी है, वह नित्य नए जोवन वाली युवति ऊँचेस्थान से दृष्टि  
फँकती है और हमारी पुकार पर सब देवताओं से पहले आती  
है । २ । हे कुलगन्तों उषा देवि ! आप जो आज मरणधर्मियों को  
अपना २ भाग बाँट रही हो हमें यह घर बाँटो कि दानी सविना  
हमें सूर्य के सामने निष्पाप कहें । ३ । दिनदिन अधिक रूपवती बन  
कर उषादेवी घर घर जाती है, वह मड़क वाली नित्य देनेकी इच्छा  
करती हुई आती है और आगे से आगे धनों को बाँटती है । ४ । हे  
दयाशाले! हे भगवन्की सहिनी और हे धरुणकी पुत्री! आप सबसे पहले

\* उत्तर मेष के समीप शीतकाल की लंबी रात्रि के पीछे  
पहले पहल दक्षिण की ओर उषा का प्रादुर्भाव होता है और यह  
उत्तर देशों में कई दिन तक और मेष पर दो महीने तक आकाश  
की परिणामा करती रहती है, पीछे सूर्य उदय होता है ।

† 'उषा' प्रकाश द्वारा मनुष्य जाति की चिकित्सा करती है,  
क्योंकि प्रकाश आरोग्य के देनेवाला है ।

‡ 'भग' सौभाग्य का अभिमानो देवता है ।

स्तुति की ध्वनि को उठाओ, जो पाप को बटोरता है वह पीछे रहे और हम उसको आपको सहायता से युद्धमें जीतें। अब स्तुति के गीत उचरें, हमारी बुद्धियाँ ऊपर की ओर लें और अग्निहोत्र के लिये अग्निधौ प्रज्वलित हों, देखो ! जगमगाती हुई उपाएँ अंधकार से छिपे हुए धनों को प्रकट कर रही हैं। चमकते हुए रथ पर ठहरी हुई उपा ने आकाश और पृथिवी के अन्धकार को छपा दिया है, एक हड़ता है और दूसरा आता है इस प्रकार भिन्न रूप वाले दिन और रात आते और जाते हैं \* १०। यह उपाएँ जैसी कल थीं वैसी हो आज हैं, यह बहुत काल तक धरुण के स्थान में ठहरती हैं, तीस दिन तक आकाश की परिक्रमा करती हैं और प्रत्येक उपा एक दिन में अपने अपने स्थान को पहुँच जाती है † १८। प्रथम दिन § को जानती हुई उपा चमकती हुई काले अंधेरे से श्वेत रंग की उत्पन्न होगई है, वह प्रतिदिन नियत स्थान को पहुँचती हुई सृष्टि नियम की मर्यादा को नहीं

\* उत्तर देशों को लंबी उपा के अनन्तर सूर्य उदय होता है और फिर ६० घड़ी के दिन रात्रि होने लगते हैं, परन्तु ये भिन्न रूप वाले होते हैं अर्थात् पहिले दिन छोटे और रात बड़ी होती है, फिर शनैःशनैः दिन बढ़ता जाता है।

† 'धरुण का स्थान' आकाश है।

‡ जिस मेरुसमीपस्थ स्थान को ऋषि देख रहे हैं वहाँ निरन्तर ३० दिन तक उपा का प्रकाश आकाश में घूमता हुआ दोखता है और एक दिन में एक एक उपा वहाँ पहुँच जाती है जहाँ से चली थी।

§ प्रथम दिन लम्बी रात्रि के समाप्त होने पर उपा के फूटने का पहला दिन है।



आ०मं०१सू०१२३ मं०१ : ( ३३१८ )

उल्लंघन करती है। ९। हे देवी ! आप कन्या की न्याईं अपने शरीर के सौन्दर्य से मोहती हुई मिलने की कामना करने वाले सूर्य-देव के पास जाती हो और युवती आप मुस्कराती हुई दमक कर सामने से छाती को उघाड़ देती हो। १०। हे उपा ! माता से सिंगारी हुई युवती की न्याईं आप सुन्दर रूपवती बनकर अपने शरीर को दिखाने के लिये प्रकट करती हो हे कल्याणी ! आप खूब दूर तक चमको, आपको इस कान्ति को दूसरी उपा नहीं पहुँची है। ११। घोड़े और गौओं की स्वामिनी, सयसे धरने योग्य उपाएँ सूर्य की किरणों से ईर्ष्या करती हुई कल्याण वाले रूप को लेकर आती हैं और फिर चली जाती हैं। १२। हे नियम की डोरी के अनुसार चलने वाली उपा ! हम में प्रत्येक शुभ कर्म को स्थापन करो, हमारे बुलाने से शीघ्र आओ और हम में और हमारी जाति के धनधानों में धनों को चिरस्थायी करो। १३।

उपादेवता निचृत्त्रिष्टुच्छन्दः।११।११।१०।११

पृथूरथोदक्षिणायाअयोज्यै नं  
देवासोअमृतासोअस्थुः। कृष्णादुद-  
स्थादृथ्यांविद्याया मिचकिटसन्ती  
मानुपायक्षयाय। १।

पृथुः

विस्तीर्णः

चौड़ा

रथः

रथः

रथ

दक्षिणायाः

दक्षिणसम्बन्धि-  
न्याः(उषसः)दक्षिण वाली  
(उषा) का

अयोजि

युक्तोऽभूत्

जुड़ गया है

आ

आ +

-

एनम्

एनम्

इस को

देवासः

देवाः  
(जसोऽसुगागमः)

देवता

अमृतासः

मरणरहिताः  
( " )

मरण से राहत

अस्थुः

आ+अस्थुः,  
आरूढवन्तः

चढ़े हैं

कृष्णात्

कृष्णवर्णात्

काले से

उत्

उत् +

-

अस्थात्	उत्+अस्थात्, उत्थिताऽभूत्	उठी है
अय्या	स्वामिनी	स्वामिनी
विहायाः	विहायसः (घर्णलोपदछान्दसः)	आकाश से
{चिकि- तसन्ती	चिकित्सन्ती	चिकित्सा करती हुई
मानुषाय	मनुष्यसम्बन्धिने	मनुष्य सम्बन्धी के लिये
क्षयाय	वर्गाय (भा०को०)	समुदाय के लिये

संस्कृतार्थः ।

दक्षिणसम्बन्धिन्याः (उपसः) अवस्तीर्णो रथो  
युक्तोऽभूत्, मरणरहिता देवा एनमारूढवन्तः,  
स्वामिनी (उपाः) मनुष्यवर्गाय चिकित्सां कुर्वती  
(सती) कृष्णदाकाशादुत्थिताऽभूत् ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

दक्षिणवाली(उपा)का चोड़ा रथ जुड़ कर तैयार  
हो गया है, मरण से रहित देवता इस पर चढ़े हैं,

( ३३२१ ) क्र०मं० १ सू० १२३ मं० २

स्वामिनी(उषा)मनुष्यसमुदाय के लिये चिकित्सा  
करती हुई काले आकाश से उठी है ॥ १ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

पूर्वाविप्रवस्माद्भुवनादवोधि

जयन्तीवाजं ब्रह्मती सनुची । उचचा

व्यख्यद्युवतिः पुनर्मू रोषा अगन्

प्रथमापूर्वहूतौ । २ ।

पूर्वा	पूर्वम्	पहले
विप्रवस्मात्	सर्वस्मात्	सब से
भुवनात्	लोकात्	लोक से
अवोधि	जाग्रताऽभूत्	जागी है
जयन्ती	जयन्ती	जीतती हुई

वाजम्	धनम् (आ०को०)	धन को
बृहती	महती	बड़ी
सनुची	दात्री (पणुदाने)	देने वाली
उचचा	उच्चस्थानात् (विमर्कैरात्वम्)	ऊँचे स्थान से
वि	वि+	—
अख्यत्	वि+अख्यत्, पश्यति (लङ्घ्येत्लङ्)	देखती है
युवतिः	युवतिः	युवति
पुनः५भूः	पुनःपुनर्भवन्- शीला	बार २ होने वाली
आ	आ+	—
उषाः	उषाः	उषा
अगन्	आ+अगन्, आग- तवती (गमेऽपघालोपः)	आई है

प्रथमा	प्रथमम्	पहले
पूर्वऽहूतौ	पूर्वाह्वाने (सति)	पहिली बार पु- कारने पर

संस्कृतार्थः ।

धनं जयन्ती महती दात्री(उपाः)विश्वस्माद्भुव-  
नात्पूर्व जाग्रताऽभूत्, पुनःपुनर्भवनशीला युवतिः  
उच्चस्थानात् पश्यति, (इयम्) उपाः पूर्वाह्वाने  
(सति) प्रथमम् आगतवती ॥ २ ॥

नापार्थः ।

धन को जीतती हुई बड़ी देने वाली (उपा) सब  
लोकों से पहले जागी है, बार २ होने वाली युवति  
ऊँचे स्थान से देखती है (यह) उपा पहली बार  
पुकार ने पर (सब से) पहले आई है ॥ २ ॥

उपादेवता निचृत्त्रिष्टुष्टन्दः ११११११०११

यद्द्वभागंविभजासिनृभ्य उपो-

देविमर्त्यं चासुजाते । देवोनी अचस-

वि॒ताद॑मू॒ना अ॒ना॒ग॒सो॒वो च॒ति॒सू॒-  
ट्या॑य । ३ ।

यत्	यत्	जो
अद्य	अद्य	आज
भा॒गम्	भा॒गम्	भा॒ग को
वि॒भ॒जा॑सि	वि॒भ॒ज॑सि (लेट्याद्यागमः)	बाँटती हो
नृ॒भ्यः	मनु॒ष्ये॒भ्यः	मनु॒ष्यों के लिये
उ॒पः	हे उ॒पः !	हे उ॒पा
दे॒वि	हे दे॒वि !	हे दे॒वी
म॒र्त्य॑ऽचा	म॒र्त्य॑लोके (सप्तम्यर्थे प्राप्तरथः)	म॒र्त्य॑लोक में
सु॒जा॒ते	हे उ॒च्चकु॑लोत्पन्ने !	हे उँचे कुल वाली

देवः	देवः	देवता
नः	अस्मान्	हम को
अत्र	अस्मिन् (काले)	इस (समय) में
सविता	सविता	सविता
दमूनाः	दानमनाः (यास्कः)	देनेमें मन ल- गाने वाला
अनागसः	पापरहितान्	पाप से रहित हुओं को
वोचति	कथयेत् (लिङ्गर्थे लट्)	कहे
सूर्याय	सूर्याय	सूर्य के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे उच्चकुलोत्पन्ने ! उपोदेवि ! यद्य मर्त्यलोके  
नरेभ्यो भागं विभजसि ( तदस्मान् एतद्वरं  
देहि यत् ) अस्मिन् (समये) दानमनाः सवितृदेवो-  
ऽस्मान् सूर्याय पापरहितान् कथयेत् ॥ ३ ॥



हे ऊंचे कुलवाली ! उषादेवी ! जों आज आप मर्त्यलोक में मनुष्यों के लिये भाग बांटती हो (तो हम को यह वर दो कि) इस (समय) दानमें मन लगाए हुए सविता देवता हम को सूर्य के सामने पाप से रहित कहें ॥ ३ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११।

गृहं गृहं महनायात्यच्छादिवेदि-  
वेअधिनामादधाना । सिषासन्ती  
द्योतनाश्रवदागा दग्मग्रमिद्भ-  
जतिवसूनाम् । ४ ।

गृहम् गृहम्	गृहं गृहम्	घर घर को
अहना	उपाः ( निघं० )	उपा

याति	आगच्छति (आङोलोपः)	आती है
अच्छ	प्रति	की ओर
दिवेऽदिवे	प्रतिदिनम्	प्रतिदिन
अधि	अधिकम्	अधिक
नाम	रूपम् (आ०को०)	रूप को
दधाना	धारयन्ती	धारण करती हुई
सिसासन्ती	दातुमिच्छन्ती	देने की इच्छा करती हुई
द्योतना	प्रकाशवती	प्रकाश वाली
शश्वत्	नित्यम्	सदा
आ	आ+	-
अगात्	आ+अगात्, आगच्छति (लङ्घ्येत्)	आती है

अग्रम् अग्रम्	अग्रमग्रम्	आगे आगे
इत्	एव	ही
भजते	विभजति (उपसर्गलोपः)	वाँटती है
वसूनाम्	धनानि (द्वितीयार्थे पठ्यो)	धनों को

संस्कृतार्थः ।

उपाः प्रतिदिनम् अधिकं रूपं धारयन्ती (सती)  
प्रतिगृहमुपगच्छति, प्रकाशयती ( सा ) नित्यं दातु-  
मिच्छन्ती (सती) आगच्छति, अग्रतोऽग्रतएव ( च )  
धनानि विभजति ॥ ४ ॥

भाषार्थः॥

उपा प्रतिदिन अधिक रूप को धारण करती  
हुई प्रत्येक घर की ओर जाती है (वह) प्रकाशवाली  
नित्य देने की इच्छा करती हुई आती है (ओर)।  
आगे से आगे धनों को वाँटती है ॥ ४ ॥

उपादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११।

भगस्यस्वसावरुणस्यजामि

रुषः॑ स॒नृते॑ प्रथ॒मा ज॒रस्व॑ । प्र॒श्चास-  
द॒ध्यायो॑ अ॒घस्य॑ धा॒ता ज॒येम॑ तं दक्षि-  
णयार॒थेन॑ । ५ ।

भ॒गस्य॑	भगस्य	भग की
स्वसा॑	भगिनी	बहन
वरु॑णस्य	वरुणस्य	वरुण की
जा॒मिः	दुहिता (आ०को०)	पुत्री
उषः॑	उषः !	हे उषा
स॒नृते॑	हेदयाशीले ! (आ०को०)	हे दया वाली
प्रथ॒मा	प्रथमा (सती)	पहिले
ज॒रस्व॑	गृणीहि (निघं० ३।१४)	स्तुति की ध्वनि करो

पश्चा	पश्चात् (तत्कारलोपश्छान्दसः)	पीछे
सः	सः	वह
दृष्ट्याः	गच्छतु (दृश्यतिर्गत्यर्थः निघं० घञन्वयत्ययः)	जावे
यः	यः	जो
अघस्य	पापस्य	पाप के
धाता	धारयिता	धारण करने वाला
जयेम	जयेम	हम जीतें
तम्	तम्	उस को
दक्षिणया	उपसा (क्र०१।१२३।१)	उपा से
रथेन	रथेन	रथ के द्वारा

संस्कृतार्थः ।

हे दयाशीले ! उपः ! भगस्य भगिनी, वरुणस्य

दुहिता (स्वम्) प्रथमा (सती) गृणौहि, यः पापस्य  
धारयिता (अस्ति) स पश्चाद्भवतु, तम् (वयम्) उषसा  
(प्रेरिताः सन्तः) रथेन जयेम ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे दयावाली ! उषा ! भग की बहन, (और)  
वरुणकी पुत्री आप (सबसे) पहले स्तुति की ध्वनि  
करो, जो पापके धारण करने वाला (है) वह पीछे  
रहे, उसको हम उषा से (प्रेरित होकर) रथ के  
द्वारा जीते ॥ ५ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११।

उदीरतां॑सूनुता॑उत्पु॑रन्धी रुद॑-

गनयः॑शुशु॑चानासो॑अस्थुः । स्पा॒र्ह्यं

वसू॑नि॒तम॒साप॑गूळ्हा ऽऽवि॑ष्कणव-

न्त्य॒षसो॑विभा॒तीः । ६ ।

उत्	उत्+	-
ईरताम्	उत्+ईरताम्, उच्चर्यन्ताम् (ईरगतौ)	मुख से निकलें
सूनुताः	स्तुतिगीतानि (मा०को०)	स्तुति के गीत
उत्	उत्+(ईरताम्) उन्मुखोभवन्तु	उन्मुख हों
परमऽधीः	बुद्ध्यः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	बुद्धियाँ
उत्	उत्+	-
अग्नयः	अग्नयः	अग्निधौ
शशुचानासः	ज्वलन्तः (शशुदीप्ता)	दहकती हुई
अस्थुः	उत्+अस्थुः, उत्तिष्ठन्तु (लोड्येष्टुः)	ऊपर को उठें
स्पार्हा	स्पृहणीयानि (नेलोपः)	कामना करने के योग्यों को

वसूनि	धनानि	धना को
तमसा	अन्धकारेण	अंधकार से
अपऽगूळ्हा	अपगूढानि (॥)	छिपे हुआ को
आविः	आविः+	—
कृण्वन्ति	आविः+कृण्वन्ति, प्रकटीकुर्वन्ति	प्रकट करती हैं
उषसः	उषसः	उषाएँ
विऽभातीः	देदीप्यमानाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	खूब चमकती हुईं

संस्कृतार्थः ।

(इदानीम्) स्तुतिगीतानि उच्यन्ताम्, बुद्धयः उन्मुखोभवन्तु, ज्वलन्तोऽग्नयः (च) उत्तिष्ठन्तु, देदीप्यमाना उषसः अन्धकारेणाऽपगूढानि स्पृहणीयानि धनानि प्रकटीकुर्वन्ति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

(अब) स्तुतिके गीत मुख से निकलें, बुद्धियाँ उन्मुख हों (और) दहकती हुईं अग्नियाँ ऊपर को



उठें, खूब चमकती हुई उषाएँ अंधकार से छिपे हुए कामना करने योग्य धनों को प्रकट करती हैं ॥६॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

अपाऽन्यदेत्यभ्यश्न्यदेति वि-

षुरुपेअहनीसञ्चरेते । परिक्षितो-

स्तमोअन्यागुहाक् रद्यौदुषाःशिशु-

चतारथेन । ७।

अप	अप+	-
अन्यत्	एकः (द्वन्द्वः)	एक (जोड़ा)
एति	अप+एति, अपगच्छति	हटता है
अभि	अभि+	—
अन्यत्	द्वितीयः (द्वन्द्वः)	दूसरा (जोड़ा)

ए॒ति	अभि+ए॒ति, आगच्छति	आता है
विषु॑ऽरूपे०	विभिन्नरूपे	भिन्न२ रूप वाले
अ॒ह॒नी०	अहोरात्रे (अत्रसम्बन्धाद् रात्रिरप्यहःशब्देनो- पचर्यते)	दिन(और) रात्री
सम्	सम्+	-
च॒रे॒ते०	सम्+चरेते, संचरतः (भ्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्)	चलते हैं
प॒रिऽक्षि॑तोः	परितःनिवसन्त्योः (क्षिनिवासे क्षिपि सति तुगागमः)	चारों आर निवास करने वालों के
तमः	तमः	अंधेरे को
अ॒न्या	एका	एक ने
गु॒हा	गुहा +	-

अकः	गुहा+अकः, गुहायामकरोत् गोपितवती- त्यर्थः (लङ्गैलङ्)	छिपाया है
अद्यौत्	द्योतितवती	चमकी है
उषाः	उषाः	उषा
शोशुचता	दं दीप्यमानेन	जगमगाते से
रथेन	रथेन	रथ से

संस्कृतार्थः ।

एकः(द्वन्द्वः)अपगच्छति, द्वितीयः (च) आगच्छति  
(एवम्) विभिन्नरूपेऽहोरात्रे संचरतः, (तयोः)  
एका परितो निवसन्त्योः (द्यावापृथिव्योः) तमः  
गोपितवती, दं दीप्यमानेन रथेन(च) द्योतितवती ॥७॥

भाषार्थः ।

एक (जोडा) हटता है (और) दूसरा आता है (इस प्रकार) भिन्न २ रूप वाले दिन (और) रात चलते हैं, एक ने चारों ओर निवास करने वाली (धो और पृथिवी)

के अंधेरे को छिपा दिया है (और) जगमगाते रथ से चमकी है ॥ ७ ॥

उपादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११। ११।११।

स॒ह॒शी॒र॒द्य॒स॒ह॒शी॒रि॒दु॒प्र॒वो दी॒र्घं

स॒च॒न्ते॒व॒रु॒णस्य॒धा॒म । अ॒न॒व॒द्यास्त्रिं॒-

श॒तं॒यो॒ज॒नान्ये॒ कै॒का॒क्र॒तुं॒परि॒य॒न्ति

स॒द्यः । ८ ।

स॒ह॒शीः	सह॒द्यः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	एक जैसी
अ॒द्य	अद्य	आज
स॒ह॒शीः	सह॒द्यः (॥)	एक जैसी
इ॒त्	अपि	भी
ऊ॒म्०	(पूरणः)	-

प्रवः	श्वस्	कल
दीर्घम्	दीर्घकालम्	बहुत देर
सचन्ते	सेवन्ते	सेवन करती हैं
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण के
धाम	स्थानम्	स्थान को
अनवद्याः	दोषरहिताः	दोष से रहित
त्रिंशत्तम्	त्रिंशत्तम् (‘कालाध्यनोः’ इति द्वितीया)	तीस तक
योजनानि	दिनानि (यावत्कालेरथोयुक्तः स्यात्तद्योजनम्, दिनमित्यर्थः)	दिन तक
एकाऽएका	एकैका (सत्यः)	एक २ (हुई २)
क्रतुम्	नियतस्थानम्	नियत स्थान को

परि	परि+	-
यन्ति	परि+यन्ति, परिगच्छन्ति	चारों ओर घूमती हैं
सद्यः	एकस्मिन् दिवसे	एक दिन में

संस्कृतार्थः ।

(एताः) (उपसः) अद्य सदृश्यः, इवोऽपि (च) सदृश्यः (सत्यः) वरुणस्य स्थानं दीर्घकालं सेवन्ते, दोषरहिताः (एताः) त्रिंशत् दिनानि (आकाशम्) परिगच्छन्ति, एकैकम् (च) नियतस्थानम् एकस्मिन् दिवसे (प्राप्नुवन्ति) ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(ये) आज एक जैसी (और) कल भी एक जैसी वरुण के स्थान में बहुत देर तक रहती हैं, दोष से रहित (ये) तीस दिन तक (आकाश) की परिक्रमा करती हैं (और) एक एक नियत स्थान को एक दिन में (पहुंच जाती हैं) ॥ ८ ॥

उपादेवता त्रिष्टुप् छन्दः । ११।११।११।११

जानत्यङ्गः प्रथमस्य नाम शुक्रा

कृष्णादजनिष्टप्रिवतीची । अतस्य  
 योषानमिनातिधामा ऽहरहर्निष्कृत  
 माचरन्ती ॥ ६ ॥

जानती	जानती	जानती हुई
अकः	दिवसस्य	दिन के
प्रथमस्य	प्रथमस्य	पहिले के
नाम	रूपम्	रूप को
शुक्ला	दीप्ता	चमकीली
कृष्णात्	कृष्णवर्णात्	काले रंग वाले से
अजनिष्ट	प्रादुरभूत्	प्रकट हुई है
प्रिवतीची	श्वेत्यं प्राप्नुवन्ती श्वेतादित्यर्थः	श्वेत

कृतस्य	श्रुतस्य	श्रुत के
योषा	युवतिः	युवति
न	न	नहीं
मिनाति	हिनस्ति (भीष्महिंसायाम्)	नाश करती है
धाम	मर्यादाम्	मर्यादा को
अहःऽअहः	दिने दिने	प्रतिदिन
निःऽकृतम्	नियतंस्थानम् (भा० को०)	नियत स्थान को
प्राऽचरन्ती	प्राप्नुवन्ती	पहुंचनी हुई

संस्कारार्थः ।

आयस्य दिवसस्य रूपं जानती (उपाः) कृष्णात्  
(अन्धकारात्) दीप्ता श्वेता (च) प्रादुरभूत्, (इयम्)  
युवतिः दिने दिने नियतं स्थानं प्राप्नुवन्ती (सती)  
श्रुतस्य मर्यादां न हिनस्ति ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

आदि में होने वाले दिन के रूप को जानती



हुई (उषा) काले (अन्धकार) से चमकती हुई (और)  
श्वेत उत्पन्न हुई है, (यह) युवति प्रतिदिन नियत  
स्थान को पहुंचती हुई ऋत की मर्यादा को उल्लं-  
घन नहीं करती ॥ ९ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।१।११।११

कन्ये॑वत॒न्वा॑श्शाश॑दानाँ एषि॑दे-

विदे॒वमि॑यच्छमाणम् । सं॒स्मय॑माना

युव॒तिःपु॒रस्ता॑ दा॒विर्व॑क्षासि॒कणु॑-

षे॒विभा॑ती ॥ १० ॥

क॒न्याऽइ॒व	कन्येव	कन्या की न्याई
त॒न्वा	शरीरेण	शरीर के द्वारा
शाश॑दाना	अतिशयेन शातय- न्ती, उच्चेजयन्ती त्यर्थाः (मिषं० भा३)	भड़काती हुई

एषि	गच्छसि	जाती हो
देवि	हे देवि !	हे देवी
देवम्	देवम्	देव को
इयक्षमायाम्	प्राप्तुमिच्छन्तम्	प्राप्त करने की इच्छा करते हुए को
{ सम्ऽस्मय- माना	संस्मयमाना	स्वप्न सुस्कराती हुई
युवतिः	युवतिः	युवति
पुरस्तात्	पुरतः	आगे
आविः	आविः+	-
वक्षांसि	वक्षांसि	छातियों को
कृणुषे	अविः+कृणुषे, उद्घाटयसि	उघाड़ती हो
विऽभाती	विद्योतमाना	दमकती हुई

संस्कृतार्थः ।

हे देवि ! (त्वम्) कन्येव शरीरेणोत्तेजयन्ती (सती)  
प्राप्तुमिच्छन्तं देवम् (प्रति) गच्छसि, विद्योतमा-  
ना (च) युवतिः (त्वम्) संस्मयमाना (सती) वक्षांसि  
पुरतः उद्घाटयसि ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे देवी ! आप कन्या की न्याईं शरीर के द्वारा  
भड़काती हुई प्राप्त करने की कामना वाले देव के  
पास जाती हो (और) दमकती हुई युवति (आप)  
खूब मुस्कराती हुई छातियों को आगे से उघाड़  
देती हो ॥ १० ॥

उषादेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः । ११ । १० । ११ । ११

सुसङ्गाशामातृमृष्टेवयोषा वि-

स्तन्वक्लृणुषेदृशेकम् । भद्रात्वमुषो

वितरंव्युचक्र नतत्ते अन्याउषसो

नश्यन्त ॥ ११ ॥

१६ १५००

सुऽसङ्काशा	सुरूपवती (काश दीप्तौ)	सुन्दर-रूप वाली
{ मातृमृष्टा- ऽइव	मात्रा स्वच्छीकृ- तेव	माता के द्वारा स्वच्छ की हुई की न्याई
योषा	युवतिः	युवति
आविः	आविः+	-
तन्वम्	शरीरम्	शरीर को
कृणुषे	आविः+कृणुषे, प्रकटयसि	प्रकट करती हो
दृशे	दर्शनार्थम्	दर्शन के लिये
कम्	(पूरणः)	-
भद्रा	कल्याणरूपा	कल्याण रूप
त्वम्	त्वम्	तू
उपः	हे उपः !	हे उषा

वि॒ऽत॒रस्	विप्रकृष्टं यथा- स्यात्तथा (क्रियाविशेषणम्)	दूर तक
वि	वि +	-
उ॒च्छ॒	वि + उच्छ, आवि- र्भव	खिलो
न	न	नहीं
तत्	तत्	उस को
ते	तव	तेरे
अ॒न्याः	अन्याः	दूसरी
उ॒प॒सः	उपसः	उपाय
न॒श॒न्त	प्राप्तवर्त्यः (नशनिर्घाप्तिकर्मा निघ० , अडभाय०)	पहुंची हैं

संस्कृतार्थः ।

हे उपः ! मात्रा स्वच्छीकृता युवतिरिव सुरुप-  
ती (त्वं निज-) शरीर दर्शयितुं प्रकटयसि, कल्याण-

रूपा (त्वम्) दूरदेशपर्यन्तमाविर्भव, अन्या उपसः  
तवैताम् (कान्तिम्) न प्राप्तवत्यः ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे उषा ! माता के द्वारा स्वच्छ की हुई युवति  
की न्याई सुन्दर रूपवती आप (अपने) शरीर को  
दिखाने के लिये प्रकट करती हो, (वह) कल्याण  
रूपा-आप दूर तक खिलो और उषाएँ आप की इस  
(कान्ति) को नहीं पहुंची हैं ॥ ११ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११

अ॒श्व॒वा॒व॒ती॒गो॒म॒ती॒र्वि॒श्व॒वा॒रा॒ य॒त-  
मा॒ना॒श्चि॒म॒भिः॒सू॒र्य॑स्य । प॒रा॒च॒य-  
न्ति॒पुन॑राचयन्ति भ॒द्रा॒ना॒म॒व॒ह॒मा-  
ना॒उ॒षा॑सः ॥ १२ ॥

अ॒श्व॒व॒व॒तीः

अश्वैर्युक्ताः

(पुंस्त्वर्णदीर्घः)

घोड़ों वाली ५

गो॒म॒तीः

गोभिर्युक्ताः

”

गौओं वाली

वि॒प्र॒वऽवा॑राः	सर्वैर्वरणीयाः	सब से बरने योग्य
य॒त॒मा॒नाः	यतमानाः	यत्न करती हुई
र॒श्मि॒मऽभिः	किरणैः	किरणों के साथ
सू॒र्य॑स्य	सूर्यस्य	सूर्य की
प॒रा	परा+	-
च	(पूरणः)	-
य॒न्ति	परा+यन्ति	चली जाती हैं
पुनः	पुनः	फिर
आ	आ+	-
च	च	और
य॒न्ति	आ+यन्ति	आजाती हैं
भ॒द्रा	कल्याणानि (शैलीपः)	कल्याणवालों को

नाम	रूपाणि (सुपामिति विमक्तेऽसुः)	रूपों को !
वहमानाः	धारयन्त्यः	धारण करती हुई
उषसः	उषसः	उषाएँ

संस्कृतार्थः ।

अद्वैरुपेताः, गोभिर्युक्ताः, सर्वैर्वरणीयाः, सूर्य-  
स्य रश्मिभिर्यतमानाः (च) उषसः कल्याणानि रूपाणि  
धारयन्त्यः परागच्छन्ति पुनरागच्छन्ति च ॥१२॥

भाषार्थः ।

घोड़ों वाली, गौओं वाली, सब से वरने योग्य  
(और) सूर्य की किरणों के साथ स्पर्धा करती हुई  
उषाएँ कल्याण वाले रूपों को धारण करती हुई  
चली जाती हैं और फिर आजाती हैं ॥ १२ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ॥११॥११॥११॥११॥

ऋतस्य रश्मि मनुयच्छमाना-

भद्रं भद्रं क्रतुमस्मा सुधेहि । उषो नी-



अद्य सुहवा व्युच्छाऽस्मां सुरायो म-

घवत्सुचस्युः ॥ १३ ॥

कृतस्य	कृतस्य	कृत की
रक्षिसम्	सूत्रम्	ढोरी को
{ अनुद्य- चक्षमाना	अनुवर्तमाना	अनुकूल चलती हुई
भद्रम्ऽभद्रम्	प्रतिकल्याणम्	प्रत्येक कल्याण को
कृतम्	कर्म	कर्म को
अस्मां सु	अस्मां सु	हम में
धेहिः	धाय	धरिण करो

उषः	हे उषः !	हे उषा
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
अद्य	अद्य	आज
सुहृवा	सुखेनाऽऽहूयमाना	सुख से बुलाई जाने वाली
वि	वि +	-
उच्छ्र	वि + उच्छ्र, आवि. भवं	खिलों
अस्मासु	अस्मासु	हम में
रायः	धनानि	धन
मघवत्सु	धनवत्सु	धनवानों में
च	च	और
स्युः०	भवन्तु	हों

हे उषः ! (त्वम्) ऋतस्य सूत्रमनुवर्तमाना(सती)  
अस्मासु प्रतिकल्याणकर्म धारय, अद्य सुखेनाऽऽहूय-  
माना (सती) अस्मभ्यमाविर्भव, अस्मासु(अस्माकम्)  
धनवत्सु च धनानि (स्थिराणि) भवन्तु ॥ १३ ॥

भाषार्थः ।

हे उषा ! आप ऋत की डोरी के अनुकूल चलती  
हुई हम में प्रत्येक शुभ कर्म को धारण करें, आज  
आप सुख से बुलाई (जाकर) हमारे लिये खिलें,  
और हम में और (हमारे) धनियों में धन [स्थिर]  
हों ॥ १३ ॥

इति त्रयोविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

## ऋ० मं० १ सू० १२४

उपादेवता, दीर्घतमसः पुत्रः कक्षीवानृषिः ।

विनियोग ।

१-१३ । एतत्सूक्तं प्रातरनुधाकस्य उपस्येकतौ आदिवनशस्त्रे च  
विनियुक्तम् । (आ० ४।१४।२)

सूक्त का भापार्थ ।

अग्निहोत्र के लिये अग्नियों के प्रदीप्त होने से, उपा के जिलने से और सूर्य के उदय होने से विस्तार के साथ प्रकाश फैल गया है, अब सवितादेवता हम दोपायों और चौपायों को अपने अपने काम में लगने के लिये प्रेरणा करते हैं । १ । देवताओं के नियम को न तोड़ती हुई और मनुष्यों के कालविभाग को छिजाती हुई, लंबी रात्रिके अन्त में आने वाली, उपा खिल गई है, यह निरन्तर चमकने वाली पिछली उपाओं की मूर्ति है और आने आने वालियों में पहली है । २ । यह आकाश की पुरी ज्योति के घस्त्र पहने हुए अचानक सामने धीरे पड़ी है, यह देवताओं के सृष्टिनियम पर ठीक ठीक चलती है और कभी भी दिशाओं का उलंघन नहीं करती है मानो शान्त वाली है । ३ । यह ऐसी समीप दिखाई देती है जैसे उन घोड़ियों की छछाती, जैसे ऋषि अपनी अमोघ कामनाओं को प्रकट करता है ऐसे इस ने अपने शरीर के अंगों को प्रकट किया है, यह मन्त्रों की न्याई सोती को जगाती है और आगे आने वालियों में\*

\* उन घोड़ियों की जो सामने बंधी हैं ।

† लंबी उपा के बीतने पर जो ६० घड़ी के दिन रात होते हैं उनकी उपाएँ आगे आने वाली उपाएँ हैं ।

सबसे अधिक ठहरने वाली है। ४। किरणरूपी गोमों को उत्पन्ना करने वाली उपा ने फैले हुए अन्तरिक्ष के पूर्वार्द्ध में भ्रजा को प्रकट कर दिया है, यह आकाश और पृथिवी रूपी माता और पिता की गोद की भरती हुई अत्यन्त दूर तक फैल गई है। ५। देखने में बहुत बड़ी यह उपा न अपने को त्याग करती है और न वेगाने की, यह अपने निर्दोष शरीर से उत्तेजित करती हुई न छोटे से छिपती है न बड़े से। ६। पश्चिम की ओर मुख किये हुए यह पुरुषों की ओर ऐसी उत्कण्ठा से जाती है जैसे बिना भार वाली बहन, और ऐसे चलती है जैसे धनों के जोतने के लिये रथ पर चढ़ने वाला घोड़ा, यह हंसती हुई ऐसे अपने रूप को दिखाती है जैसे अनुराग से भरी हुई और सुन्दर धस्त्र पहने हुए पत्नी अपने पति को। ७। छोटी बहन \* बड़ी के लिये स्थान को खाली करती है मानो उस को दिखा कर हटजाती है, फूटती हुई उपा भेले में आने वाली स्त्रियों की न्याईं सूर्य की किरणों से अपने अंगों को रंगती है। ८। इन बहनों में सब पहली चली जाती है तो उसके स्थान में दूसरी नहीं आजाती है, ये नहीं उपाएँ पुरानियों की न्याईं हमारे लिये शुभ दिनों के लाने वाली हैं और धन के सहित हमारे लिये प्रकट। ९। हे धनेश्वरी! उपा! जो धानशील हैं उनको जगाओ, जो कंजूस व्यवहारी मनुष्य हैं वे सोप पड़े रहें, हे धन की स्वा-मिनि! प्राणियोंकी आयुको क्षीण करने वाली आप हमारे धनिकों के लिये धन के साथ प्रकटें। हे दयाश्रीले! आप मुझ स्तुति करने वाले के लिये धन के साथ प्रकटें। १०। यह युवति पूर्व दिशा में उतरी है, और लाल रंग के बैलों को रथ में जोड़ती है, यह अब खिलेगी, खूब उजाला होगा और घर २ में अग्निहोत्र के लिये अग्नियाँ प्रदीप्त होंगी। ११। हे उपा! आपके खिलने पर अन्न

के खोजी मनुष्य अन्न की चिन्ता में लगे हैं और पक्षी भी घोंसलों से उड़े हैं, हे देवि ! जो हवि देने वाले भक्तजन हैं उन को आप घर बैठे ही बहुत धन पहुँचाती हो । १२। हे स्तुति के योग्य उपाओं ! प्रेम करती हुई आपकी मेरे स्तोत्र से स्तुति हो और आप यज्ञ, हे देवियो ! हम आप की रक्षा से सैंकड़ों और सहस्रों धन के भागी बनें । १३।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११। ११। ११। ११।

उषा उचकन्ती समिधाने अग्ना

उद्यन्सूर्य उर्विया ज्योतिरश्रेत् । दे-

वोनो अच सवितान्वर्थं प्रासावीद्विप-

त्प्रचतुष्पदित्यै ॥ १ ॥

उषाः

उषसि

उषा में

(सुषामिति विभक्तेः सुः)

उचकन्ती

आविर्भवन्त्याम्

फूटने पर

( „ )

सम्ऽद्धधाने

प्रदीप्यमाने

प्रदीप्त होने पर

अ॒ग्नौ	अ॒ग्नौ	अ॒ग्नि में
उ॒त्थ॒न्	उ॒द्यति (विभक्तेः सुः)	उ॒दय होने पर
सू॒र्यः	सू॒र्ये	सू॒र्य में
उ॒र्वि॒या	वि॒स्ती॒र्ण॒तया (विभक्तेर्द्विधाजादेशः)	वि॒स्तारके साथ
ज्योतिः	प्र॒काशः	प्र॒काश
अ॒श्रे॒त्	व्या॒प्त॒वान॒रित	फै॒लगया है
दे॒वः	दे॒वः	दे॒वता ने
नः	अ॒स्मान्	हम को
अ॒व	अ॒स्मिन्(लोके)	इ॒स (लोक) में
स॒वि॒ता	स॒वि॒ता	स॒वि॒ता
न ।	अ॒धुना (आ० को०)	अ॒व

अर्थम्	कार्यम् [प्रति]	कार्य [की ओर]
प्र	प्र +	-
असावीत्	प्र + असावीत्, प्रेरयति (लङ्येलुङ्)	प्रेरण करता है
द्विऽपत्	द्विपदः (विभक्त्येलुङ्)	दोपायों को
प्र	प्र + (असावीत्) प्रेरयति (लङ्येलुङ्)	प्रेरण करता है
चतुऽपत्	चतुष्पदः (विभक्त्येलुङ्)	चौपायों को
इत्यै	गमनाय	जाने के लिये

संस्कृतार्थः ।

अग्नौ प्रदीप्यमाने, उषसि आविर्भवन्त्याम्, सूर्य्ये  
(च) उद्यति, (सति) विस्तीर्णतया प्रकाशो व्याप्त-  
वानस्ति, अधुना सवितृदेवः अस्मिन् (लोके) अस्मान्  
द्विपदः चतुष्पदः (च) कार्यं प्रति गमनाय प्रेर-  
यति । १ ।



भाषार्थः ।

अग्नि के प्रदीप्त होने पर, उषा के फूटने पर ( और ) सूर्य के उदय होने पर विस्तार के साथ प्रकाश फैल गया है, अब सवितादेव इस ( लोक ) में हम दो पायों को ( और ) चौपायों को कार्य-की ओर जाने के लिये प्रेरण करते हैं ॥ १ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

अमिनतीदैव्यानिव्रतानि प्रमि-  
नतीमनुष्यायुगानि । ईयुषीणामुप-  
माशश्रवतीना मायतीनांप्रथमोषा  
व्यद्यौत् ॥ २ ॥

अमिनती	अहिंसन्ती	नाश करती हुई
दैव्यानि	देवसम्बन्धीनि	देवसंबंधियों को
व्रतानि	व्रतानि	नियमों को

प्रऽमिनती	क्षीणयन्ती	छिजाती हुई
मनुष्या	मनुष्याणाम् (विभक्तेरात्वम्)	मनुष्यों के
युगानि	युगानि	युगों को
ईयुषीणाम्	गतवतीनाम्	बीती हुईयों की
उपमा	उपमा	मूर्ति
शश्वतीनाम्	निरन्तरवर्तिनी- नाम्	निरन्तर होने वालियों की
{ आऽयती- नाम्	अगामिनीनाम्	आने वालियों की
प्रथमा	प्रथमा	पहली
उषाः	उषाः	उषा
वि	वि +	—

अद्यौत् | वि + अद्यौत्, | खिल गई है  
विद्योतितवती |

संस्कृतार्थः ।

देवसम्बन्धीनि व्रतानि अहिंसन्ती, मनुष्याणां  
युगानि क्षीणयन्ती, गतवतीनां निरन्तरवर्तिनीनाम्  
( उषसाम् ) उपमा, आगामिनीनाम् (च) प्रथमा  
उषाः विद्योतितवती ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

देवताओं के नियमों को न तोड़ती हुई, मनुष्यों  
के युगों को छिजाती हुई, बीती हुई निरन्तर होने  
वाली ( उषाओं ) की मूर्ति ( और ) आने वालियों  
में पहली उषा खिल गई है ॥ २ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११११११११११

एषादिवोदुहिताप्रत्यदर्शि ज्यो-  
तिर्वसानासमनापरस्तात् । ऋत-  
स्यपन्थामन्वेतिसाधु प्रजानतीव  
नदिशोमिनाति ॥ ३ ॥

ए॒षा	ए॒षा	यह
दि॒वः	दि॒वः	द्यौ की
दु॒हि॒ता	दु॒हि॒ता	पुत्री
प्र॒ति	प्रति +	—
अ॒द॒र्शि	प्रति + अ॒द॒र्शि, दृ॒ष्टाऽभूत्	दीखपड़ी है
ज्यो॒तिः	ज्यो॒तिः	ज्योति को
व॒सा॒ना	परि॒द॒धाना	पहने हुए
स॒म॒ना	स॒द्यः (सा० भा०)	तत्काल
पु॒र॒स्तात्	पु॒र॒स्तात्	सामने
ऋ॒त॒स्य	ऋ॒त॒स्य	ऋत के
प॒न्था॒म्	मा॒र्गम्	मार्ग को

अनु	अनु	पीछे
एति	गच्छति	जाती है
साधु	सम्यक्	ठीक २
{ प्रजानती इव	प्रकर्षेण जानतीव	मानो खूब जानती हुई
न	न	नहीं
दिशः	दिशः	दिशाओं को
मिनाति	हिनस्ति	नाश करती है

संस्कृतार्थः ।

ज्योतिःपरिदधाना एषा दिवोदुहिता सद्यः पुर-  
स्ताद् दृष्टाऽभूत् (एषा) सम्यक्तया ऋतस्यमार्गमनु-  
सरति, प्रकर्षेण जानती इव (च) दिशो न हिनस्ति॥३॥

भाषार्थः ।

ज्योति के वस्त्र पहने हुए यह द्यौ की पुत्री अ-  
) चानक सामने दीख पड़ी है, ( यह ) ठीक ठीक ऋत

के मार्ग पर चलती है, ( और ) खूब जानती हुई<sup>१</sup> मानो दिशाओं को नहीं विनाश करती है ॥३॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११११

उपो॑ अद॒र्शि॒ शुन्ध॑युवो॒ नव॑क्षो॒ नो-  
धा॒ इ॒वा॒ विर॑क्तत॒ प्रिया॑णि । अ॒भ्य॒सन्न॑  
स॒ स॒तो॒ बो॒धय॑न्ती श॒श्व॒वत्त॒मागा॑त्-  
पुन॑रे॒य॒षीणा॑म् ॥ ४ ॥

उपो०	समीपे (उ इति पूर्णः)	समीप
अद॒र्शि	(दृष्टा) अभूत्	दिखी है
शुन्ध॑युवः	वडवायाः (ऋ०१।५०।९)	घोड़ी की
न	इव	की न्याईं
वक्षः॑	वक्षः	छाती

नो॒धाःऽइव	ऋषिरिव (नि० ४।१६)	ऋषि की न्याई
आ॒विः	आविः +	—
अ॒कृत	आविः + अकृत, प्रकटितवती	प्रकट किया है
प्रि॒याणि	प्रियाणि	प्रियों को
अ॒न्नऽसत्	अन्नसादिनी (नि० ४।१६)	अन्न पर 'बैठने वाली
न	इव	की न्याई
स॒स॒तः	स्वपतः	सोते हुआ को
बो॒ध॒य॒न्ती	बोधयन्ती	जगाती हुई
श॒श्व॒त्ऽत॒मा	निरन्तरतमा	सब से अधिक निरन्तर (चम- कने वाली)
आ	आ +	—
अ॒गात्	आ + अगात्, आगतवती	आई है,

पुनः	पुनः	फिर
{ आऽईयुषो- गाम्	आगामिनीनाम् (मध्ये)	आने वालियों के (बीच)

संस्कृतार्थः ।

( उपाः ) बडवानां वक्ष इव समीपे दृष्टाऽभूत्,  
ऋषिरिव ( च ) प्रियाणि प्रकटितवती, पुनरागामि-  
नीनाम् ( उपसां मध्ये ) निरन्तरतमा ( इयमुपाः )  
मक्षिका इव स्वपतः ( मनुष्यान् ) प्रबोधयन्ती ( सती )  
पुनरागतवती ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

( उपा ) घोड़ियों की छाती की न्याईं समीप में  
दिखी है ( और ) उसने ऋषि की न्याईं प्रियों को  
प्रकट किया है, फिर आने वाली ( उपाओं ) में सब से  
अधिक निरन्तर ( चमकने वाली यह उपा ) मक्षिका  
की न्याईं सोते हुए ( मनुष्यों ) को जमाती हुई  
फिर आई है ॥ ४ ॥



उपादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

पूर्वे॑ अर्धे॑ रज॑सो अ॒प्त्यस्य॑ गवा॑ज-

नि॒च्य॑कृत॒प्र॒के॒तुम् । व्यु॑प्रथते॒ वित॒रं

वरी॑य ओभा॒पृ॒णन्ती॑ पि॒त्रो॒रु॒प॒स्था॑ ॥५॥

पूर्वे॑	पूर्वे	पूर्व में
अर्धे॑	अर्धे	आधे में
रज॑सः	अन्तरिक्षस्य	अन्तरिक्ष के
अ॒प्त्यस्य॑	व्यापकस्य (निपातनात्साधुः)	व्यापक के
गवा॑म्	गवाम्	गौओं के
जनि॑त्री	जनयित्री (धन्तर्मावितण्यर्थः)	उत्पन्न करने वाली ने
अ॒कृत॒	प्र + अकृत, प्रक- टितवती	प्रकट किया है

प्र	प्र +	—
केतुम्	ध्वजम्	ध्वजा को
वि	वि +	—
ऊम्	(पूरणः)	—
प्रथते	वि + प्रथते, विस्तृ ताऽभवत् (लडर्थे लट्)	फैल गई है
विऽतरम्	दूरम् (क्रियाविशेषणम्)	दूर तक
वरीयः	उरुतरम् (॥)	अत्यन्त बहुत
आ	आ +	—
उभा	उभयोः (विभक्तेरात्वम्)	दोनों की
पृणन्ती	आ + पृणन्ती, पूरयन्ती	भरती हुई
पित्रोः	पित्रोः	पिता(और) माता की

उपस्था	उत्सङ्गम् (॥)	गोद को
--------	------------------	--------

संस्कृतार्थः ।

गवामुत्पादयित्री (उषाः) व्यापकस्य अन्तरिक्षस्य पूर्वाधे ध्वजं प्रकटितवती, (साः) उभयोः पित्रोरुत्सङ्गं पूरयन्ती [ सती ] उरुतरं दूरं विस्तृताऽभवत् । ५ ।

भाषार्थः ।

गौओं के उत्पन्न करने वाली उषा ने व्यापक अन्तरिक्ष के पूर्वाधे में ध्वजा को प्रकट किया है, वह पिता (और) माता दोनों को गोद को भरती हुई बहुत दूर तक फैल गई है ॥ ५ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

एवे॒देषा॑पु॒रुत॑मा॒हृशे॑कं॒ नाजा॑मिं

नपरि॑वृणक्तिजा॒मिम् । अ॒रेप॑सा॒त-

न्वा॒श्शा॒श॒दाना॑ ना॒र्भादी॑ष॒तेन॑म॒हो

वि॒भा॒ती ॥ ६ ॥

ए॒व	इ॒त्थम्	इ॒स प्रकार
इ॒त्	(पूरणः)	—
ए॒षा	ए॒षा	य॒ह
पु॒रु॒ऽत॒मा	वि॒पु॒ल॒त॒मा	अ॒त्य॒न्त ब॒ड़ी
दृ॒ष्टे	दर्श॒ने	दे॒खने में
क॒म्	(पूरणः)	—
न	न	नहीं
अ॒जा॒मि॒स्	अ॒व॒न्धु॒म्	बे॒गाने को
न	न	नहीं
प॒रि	प॒रि +	—
वृ॒ण॒क्ति	प॒रि + वृ॒ण॒क्ति, पा॒र॒व॒र्ज॒य॒ति	त्या॒ग करती है
जा॒मि॒स्	व॒न्धु॒म्	सं॒व॒धी को

अ॒रे॒प॒सा॑	अपापेन	पापहीन से
त॒न्वा॑	शरीरेण	शरीर से
शा॒श॒दा॒ना॑	अतिशयेन शा- तयन्ती, उत्ते- जयन्तीत्यर्थः (निघं०४१३)	उत्तेजित करती हुई
न	न	नहीं
अ॒र्भा॑त्	अल्पात्	छोटे से
ई॒ष॑ते	गच्छति, तिरो- भवतीत्यर्थः (ईष गही)	छिपती है
न	न	नहीं
म॒हः॑	महतः	बड़े से
वि॒ऽभा॒ती	विद्योतमाना	खूब चमकती हुई

संस्कृतार्थः ।

इत्थंदर्शने विपुलतमा एषा ( उषाः ) नाऽबन्धुं न-  
 ( च ) बन्धुं परिवर्जयति, पापरहितेन शरीरेणोत्तेज-  
 यन्ती विद्योतमाना (च सा) नाऽल्पात् न-[च] मह-  
 तस्तिरोभवति । ६ ।

भाषार्थः ।

इस प्रकार देखने में अत्यन्त बड़ी यह ( उषा )  
 न अपने को [ और ] न वेगाने को त्याग करती है,  
 पापरहित शरीर से उत्तेजित करती हुई [ और ]  
 खूब चमकती हुई न छोटे से (और) न बड़े से छिपती  
 है । ६ ।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११११११११११ ।

अ॒भ्रा॒ते॒व॒पुं॒स॒ए॒ति॒प्र॒ती॒ची॒ ग॒र्ता॒-  
 रु॒गि॒व॒सु॒न॒ये॒ध॒ना॒ना॒म् । जा॒ये॒व॒प॒त्य॒-  
 उ॒श॒ती॒सु॒वा॒सा॒ उ॒षा॒ह॒स्त्रे॒व॒नि॒रि॒णी॒-  
 ते॒अ॒प्सः ॥ ७ ॥

अभ्राताऽइव	भ्रातृरहितेव	भाई से रहित की न्याई
पुंसः	पुरुषान्	पुरुषों को
एति	गच्छति	जाती है
प्रतीची	पश्चिमाभिमुखी	पश्चिम की ओर मुख किए हुए
{ गर्तऽआरु गिव	रथाऽऽरूढइव (यास्कः)	रथ पर चढ़े हुए की न्याई
सनये	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये
धनानाम्	धनानाम्	धनों की
जायाऽइव	जायेव	स्त्री की न्याई
पत्ये	पत्ये	पति के लिये
उशती	कामयमाना	कामना करती हुई
सुऽवासाः	शोभनवस्त्रा	सुन्दर वस्त्रों वाली

उषाः	उषाः	उषा
हस्राऽइव	हसनेव	हंसने वाली की न्याई
नि	नि +	-
रिणीते	नि + रिणीते, दर्शयति	दिखाती है
अप्सः	रूपम् (निघं० ३१७)	रूप को

संस्कृतार्थः ।

उषाः भ्रातृरहितेव पश्चिमाभिमुखी सती पुरुषान् प्रति गच्छति, धनप्राप्तये रथारूढा इव ( च जयन्ती प्रचलति, ) ( सा ) पतिं कामयमाना शोभनवस्त्रा जाया इव हसन्तीव रूपं दर्शयति । ७ ।

भाषार्थः ।

उषा पश्चिम की ओर मुख किये हुए बिना भाई वाली वहिन की न्याई पुरुषों की ओर जाती है (और) धनों की प्राप्ति के लिये रथपर चढ़ने वाले की न्याई (विजय करती हुई चलती है), (वह) पति की कामना करती हुई सुन्दर वस्त्र पहनने वाली स्त्री की न्याई मानो हंसती हुई रूप को दिखाती है । ७ ।



ए॒ति	अप+एति, अपसरति	हट जाती है
अ॒स्याः	एनाम् (कर्मणिपठौ)	इस को
{ प्रतिच- द॒याऽइव	दर्शयित्वेव	मानो दिखाकर
{ वि॒उ॒च्छ- न्ती	आविर्भवन्ती	प्रकट होती हुई
र॒श्मिभिः	किरणैः	किरणों के द्वारा
सू॒र्य॑स्य	सूर्यस्य	सूर्य की
अ॒जिज	रक्तम्	रंग को
अ॒ङ्गे	अनक्ति	लगाती है
{ स॒म॒न॒गाः ऽइव	मेलागामिन्य- इव	मेले में जानेवा- लियों की न्याई

त्राः

नार्यः

स्त्रियाँ

संस्कृतार्थः ।

( रात्रिरूपा ) भगिनी ( उषोरूपायै ) ज्येष्ठायै  
भगिन्यै स्थानं रिक्तीकरोति ( स्वयं च ) एनां दर्श-  
यित्वेवाऽपसरति, ( उपाश्च ) आविर्भवन्ती ( सती )  
सूर्यस्य किरणैः रङ्गमनक्ति यथा मेलागामिन्यो  
नार्यः ( रङ्गमञ्जन्ति ) ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

( रात्रि रूपं ) वहन ( उपारूप ) बड़ी वहन के  
लिये स्थान को छोड़ देती है ( और आप ) इसको  
मानो दिखाकर हट जाती है, ( उपा ) प्रकट होती  
हुई सूर्य की किरणों से रंग लगाती है, जैसे मेले  
में जाने वाली स्त्रियाँ ( रंग लगाती हैं ) ॥ ८ ॥

उपादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११११११११११

आसांपूर्वासामहसुस्वसृणा

मपरापूर्वामभ्येतिपश्चात् । ताःप्र-

तन्वन्नव्यसीनूनमस्मे रेवदुच्छन्तु  
सुदिनाउषासः ॥ ६ ॥

आसाम्	आसाम्	इन के
पूर्वासाम्	पूर्वासाम्	पहलियों के
अहऽसु	अहःसु, प्रतिदिन- मित्यर्थः (धिसर्गलोपदछान्दसः)	प्रतिदिन
स्वसृणाम्	भगिनीनाम्	बहनो के
अपरा	अन्या	दूसरी
पूर्वाम्	पूर्वाम्	पहली को
अभि	अभि+	—
एति	अभि+एति, प्राप्नोति	प्राप्त होती है

पश्चात्	पश्चात्	पीछे
ताः	ताः	वे
प्रतनऽवत्	पुरातन्य इव	पहलियों की न्याई
नव्यसीः	नवीनाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	नवीन
नूनम्	अवश्यम्	अवश्य
अस्मे०	अस्मभ्यम् (पञ्चम्याः शोभादेशः)	हमारे लिये
रेवत्	धनयुक्तं यथा- स्यात्तथा	धन से युक्त होकर
उच्छ्रन्तु	आविर्भवन्तु	प्रकट हों
सुऽदिनाः	शुभदिनाः	शुभ दिनों वालीं
उपसः	उपसः	उपाएँ

संस्कृतार्थः ।

आसां पूर्वासां भगिनीनाम् अपरा प्रत्यहं पूर्वा-

मनुगच्छति, ता नवीनाः शुभदिना उषसः पुरातन्य-  
इवाऽवश्यमस्मभ्यं धनयुक्ताः सत्य आविर्भवन्तु । ९।

भाषार्थः ।

इन पहली बहनों में से पूर्व के पीछे अगली प्रति-  
दिन जाती है, वे नई शुभ दिनों वाली उषाएँ पह-  
लियों की न्याईं अवश्य हमारे लिये धन से युक्त हो  
कर प्रकटें । ९।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

प्रबोधयोषःपृणतोमघोन्य बुध्य-

मानाःपृणयःससन्तु । रेवदच्छमघव-

द्भ्योमघोनि रेवत्स्तोत्रेसूनुतेजार-

यन्ता ॥ १० ॥

प्र	प्र+	-
बोधय	प्र+बोधय	जगाओ

उषः	हे उषः !	हे उषा
पृणतः	दातृन् (पृणातिर्दानकर्ममा निघं० ३१२०)	दानियों को
मघोनि	हे धनवति !	हे धन वाली
अबुध्यमानाः	अजाग्रतः	न जागते हुए
पणयः	वणिजः (यास्कः)	व्यवहारी
ससन्तु	स्वपन्तु	सोवें
रेवत्	धनयुक्तं यथा- स्यात्तथा	धनसे युक्त होकर
उच्छ्र	आविर्भव	खिलो
मघवत्ऽभ्यः	धनवद्भ्यः	धनवानों के लिये
मघोनि	हे धनवति !	हे धन वाली

रेवत्	धनयुक्तंयथा- स्यात्तथा	धन से युक्त होकर
स्तोत्रे	स्तोत्रे	स्तोता के लिये
सूनुते	हे दयाशीले !	हे दयावाली
जरयन्ती	क्षीणयन्ती	क्षीण करती हुई

सस्कृतार्थः ।

हे धनवति ! उपः ! ( त्वम् ) दानिनः प्रबोधय,  
( कृपणाः ) वणिजः ( च ) अजाग्रतः ( सन्तः ) स्वपन्तु,  
हे धनवति ! हे दयाशीले ! ( सर्वान् प्राणिनः ) क्षी-  
णयन्ती ( त्वम् ) धनवद्भ्यो धनयुक्ता सती स्तोत्रे ( च )  
धनयुक्ता सती आविर्भव । १० ।

भाषार्थः ।

हे धनवाली उषा ! आप दानियों को जगाओ ,  
( कंजूस ) व्यवहारी न जागते हुए सोए रहें, हे धन-  
वाली ! हे दयावाली ! ( सब प्राणियों को ) क्षीण  
करती हुई आप धनवानों के लिये धन से युक्त हो  
कर ( और ) स्तोता के लिये धन से युक्त होकर  
खिलें । १० ।

उपादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

अवे॒यम॑प्र॒वैद्यु॒वतिः॑पु॒रस्ता॑द्

यु॒ङ्क्ते॑ग॒वाम॑रु॒णाना॑मनी॒कम् । वि॒नून॑-  
मु॒च्छा॒दस॑तिप्र॒केतु॑ गृ॒हं गृ॒हमु॑पति-  
ष्ठा॒ते अ॒ग्निः । ११ ।

अ॒व	अव +	-
इ॒यम्	इयम्	यह
अ॒प्र॒वैत्	अव+अश्वैत्, अवरूढवती	उत्तरी है
य॒वतिः॑	युवतिः	युवति
पु॒रस्ता॑त्	पूर्वस्यांदिशि	पूर्व दिशा में
यु॒ङ्क्ते॑	योजयति	जोड़ता है



गवाम्	अनडुहाम्	बैलों के
अरुणानाम्	अरुणवर्णानाम्	लाल रंग वालों के
अनीकम्	समूहम्	समूह को
वि	वि+	
ननम्	इदानीम्	अब
उच्छात्	वि+उच्छात् आविर्भविष्यति (लेटघाडागमः)	खिलेगी
असति	प्र+असति, प्रकर्षेण भविष्यति (क्र०६।२१९)	खूब होगा
प्र	प्र+	--
केतुः	प्रकाशः	प्रकाश
गृहम्, गृहम्	गृहं गृहम्	प्रत्येक घर में



व॒ह॒सि॒भूरि॒वाम॒ मु॒षो॒दे॒वि॒दा॒शु॒षे

म॒र्त्या॒य । १२ ।

उत्	उत् +	-
ते	तत्र	तेरे
वयः	पक्षिणः	पक्षी
चित्	अपि	भी
वसतेः	नीडात्	घोंसले से
अप॒प्त॒न्	उत् + अप॒प्त॒न्, उड्डीनवन्तः	उड़े हैं
नरः	मनुष्याः	मनुष्य
च	च	और
ये	ये	जो
पितु॒भाजः	अन्नभाजः (पितुरित्यन्तनाम, मि००, २१७)	अन्न के भाग

वि॒ऽउ॒ष्टौ	आविर्भा॒वे	खिलने पर
अ॒मा	गृ॒हे (निघं० . ३१४)	घर में
स॒ते	वर्त्त॑मानाय	रहनेवाले के लिये
व॒ह॒सि	प्रापय॑ति	पहुँचाती हो
भू॒रि	प्रभू॑तम्	बहुत को
वा॒मम्	वननीयम्(धनम्)	धन को
उ॒षः	हे उ॒षः !	हे उषा
दे॒वि	हे दे॒वि !	हे देवी
दा॒शु॒षे	(हविः) दत्तव॑ते	(हवि) देने वाले
म॒र्त्या॒य	मनु॑ष्याय	के लिये मनुष्य के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे उषोदेवि ! तवाऽविर्भावे [ सति ] पक्षिणोऽपि

[स्वस्व] नीडाद् उड्डीनवन्तः, मनुष्याश्च येऽन्नभाजः  
[ सन्ति तेऽपि स्वस्वकर्मणि प्रवृत्ताः, ] [त्वं हविः-]  
दत्तवते गृहस्थाय मनुष्याय प्रभूतं धनं प्रापयसि । १२।

भाषार्थः ।

हे उषादेवी ! आपके खिलने पर पक्षी भी [ अ-  
पने २ ] घोंसले से उड़े हैं, और जो मनुष्य अन्न के  
भागी [ हैं वे भी अपने २ काम में लग गए हैं ] आप  
[ हवि ] देनेवाले गृहस्थ मनुष्य के लिये बहुत धन  
पहुँचाती हो । १२ ।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

अस्तो॑द्वंस्तो॑म्या॒ब्रह्म॑णा॒मे ऽवी-  
व॒ध॒ध॒वमु॑श॒तीरु॑षासः । यु॒ष्माकं॑ दे॒वी-  
र॒वसा॑सनेम स॒हस्रि॑णं च॒शति॑नं च  
वा॒जम् ॥ १३ ॥

अस्तो॑द्वम्	स्तुताभवत्	आपकी स्तुति हो
स्तो॒म्याः	हे स्तुत्यर्हाः !	हे स्तुति के योग्यो
ब्रह्म॑णा	स्तोत्रेण	स्तोत्र से
मे	मम	मेरे
अवी॑वृध॒ध्वम्	प्रवृद्धाभवन्त	बढो
उ॒श॒तीः	कामयमानाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	कामना करती हुई
उ॒ष॒सः	हे उपसः !	हे उषाओ
यु॒ष्माक॑म्	युष्माकम्	आप के
दे॒वीः	हे देव्यः ! (पूर्वसवर्णदीर्घः)	हे देवियो
अ॒व॒सा	रक्षया	रक्षा से
स॒ने॒म	सम्भजेम	हम भागी बनें

स॒ह॒स्रि॒णम्	सहस्रसङ्ख्याकम्	हजार को
च	(पूरणः)	-
श॒ति॒नम्	शतसङ्ख्याकम्	सौ को
च	च	और
वा॒जम्	धनम् (सा०भा०)	धन को

संस्कृतार्थः ।

हे स्तुत्यर्हाः ! देव्यः ! उपसः ! कामयमानाः  
(यूयम्) मत्स्तोत्रेण स्तुताभवत्प्रवृद्धाभवत्(च,  
[वयम्] युष्मदीयया रक्षया शतं सहस्रं च धनं  
सम्भजेम । १३ ।

भाषार्थः ।

हे स्तुति के योग्य देवियो ! हे उपाओ ! कामना  
करती हुई आपकी मेरे स्तोत्र से स्तुति हो [और]  
आप वढें, हम आपकी रक्षा से सैकड़ों और हजारों  
धनों के भागी बनें । १३ ।

इति चतुर्विंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

# अ०मं०१ सू०१२५ ।

दानं देवता, कक्षीवानृषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भाषार्थ ।

दानी पुरुष प्रातःकाल में आकर सवेरे सवेरे विद्वान को धन देता है, और वह उसको लेकर रख छोड़ता है, वह उस धन से अपनी सन्तान का पालन करता है आयु को बढ़ाता है और वीर पुत्रों से घिरा हुआ खूब ह्वष्ट पुष्ट होता है । १ । हे प्रातःकाल में यह कराने के लिये आने वाले विद्वान ! जो आप हुए आप को पक्षी की न्याई धन की फांसी में फंसाता है, वह सुन्दर गीमों, बहुत सुवर्ण और सुन्दर घोड़ों का स्वामी बनता है और इन्द्र उसको बड़ा सामर्थ्य और बल देते हैं । २ । मैं यह कराने वाला आज सवेरे ही शुभ कर्म करने वाले यह के पुत्र \* की कामना करता हुआ धन से भरे हुए १० रथ को लेकर आया हूँ हे यजमान ! वीरों के राजा इन्द्र को सोमलता की खंडी का रस पिला कर मद्य युक्त कर और स्तुति के गीतों से उन को उत्तेजित कर । ३ । जो यह करता है वा करने की इच्छा करता है उस के लिये सुन्न की नदियाँ बहती हैं, जो दान देता है वा देने की इच्छा करता है उस के यश को फैलाती हुई चारों ओर से घी की धाराएँ उस को प्राप्त होती हैं । ४ । जो देता है वह पूज्य होकर स्वर्ग की पीठ

\* यह का पुत्र यह है, जो यह को पति पुत्र पिता के वंश को चलाता है ।

१० धन से भरा हुआ रथ शुभ कर्म का  
६ भर्ता उस वस्तु को



# क्र०सं० ७१,७२ भङ्गयोः शुद्धयशुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्	पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१९९	९	जसा)	जैसा)	३२३९	१०	दर॑	दुरः
३२००	२२	कक	कूक	३२४१	१५	भर॑	भुर॑
३२०६	७	य॒वाकुः	यु॒वाकुः	३२४३	१७	इन्द॑	इन्दु॑
३२११	१०	लुक)	लुक्)	३२४६	२०	स्यात्	स्यात्
३२१२	१५	(किप्)	(किप्)	३२४७	४	सुऽ	सुऽ
३२१३	१६	पातं	पातं	३२४९	१६	यास	यसि
३२१६	११	किसा	किसी	३२५३	४	मनन्तः	मनन्तैः
३२२०	२	गोमर्य	गोमिर्यु	३२६२	१५	बाल का	बाले क
"	६	दुह्यः,	दुह्युः,	३२७६	१३	भर॑	भर॑
३२२५	९	णोऽ	णोऽ	३२७८	९	सान	सान
३२२६	१२	भात	प्रभात				
"	१३	भों को	पाभों को	३२७९	४	नक्ता	नक्ता
३२२८	९	का नब्बे	को नब्बे	३२८५	१६	मघत्)	(मघत्)
३२३२	१३	लटघ	लेटघ	३२९४	५	सरिः	सरिः
३२३६	४	दून्	घून्				
३२३८	३	अस्य	अस्य				

# विज्ञापन ।

इस अंक के साथ सातवाँ साल आरंभ होगया है, जिन स्वाध्यायी पंडितों की सूचना आएगी उनका नाम सातवें साल के रजिष्टर में लिखा जाएगा, जिनकी नहीं आएगी उन के नाम अगला अंक नहीं जाएगा । पिछले अंक डाक सहसूल भेजने से भेजे जाएँगे ।

सुन्शी जयराम

मैनेजर ऋग्वेद संहिता,  
फ़ीरोज़पुर छावनी ।

अंक ७५-७६]

[आश्विन १९६९]

# ऋग्वेद संहिता

## (वैदिकजीवनव्याख्यायुतां)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद  
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर  
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री  
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने  
सम्पादन किया ।

लाहौर

पञ्चास एकानामीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर लाला  
लासमन के अधिकार से छपा ।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

७० अंकों का मूल्य १३०)

पर चढ़ता है, सचमुच वह देवताओं में मिलजाता है, उसके लिये नदियाँ घो को बहाती हैं, उस के लिये यह दक्षिणा \* सदा वृद्धि करने वाली होती है । ५। ये नाना प्रकार के भोग † दक्षिणा देने वालों के हैं, आकाश में जो अनेक सूर्यलोक हैं उनको दक्षिणा देने वाले पाते हैं, दक्षिणा देने वाले लंबी आयु को भोगते हैं और दक्षिणा देनेवाले अमृत के भागी बनते हैं । ६। दक्षिणा देनेवाले दुःख और पाप को न प्राप्त हों, नियम के सच्चे और भजनशील । पुरुष क्षीणता को न प्राप्त हों, कोई दूसरा उनका कोट ‡ बने, सब शोक न देने वाले स्वार्थी को प्राप्त हों । ७।

दानं देवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११। ११। ११। ११।

प्रा॒तार॒त्नं॑ प्रा॒तरि॒त्वा॑ द॒धाति॑

तं चि॑त्कि॒त्वा न्प्र॑तिगृह्णा॒निध॑त्ते । ते-

न॒प्रजा॑व॒र्धय॑मान॒आयू॑ रा॒यस्पोषे॑ण

स॒चते॑ सु॒वीरः॑ ॥ १ ॥

\* जो उस ने यह में अत्विजों को दी है ।

† जो हम इस लोक में धनियों के हाँ देनाते हैं ।

‡ जिस में दुःख और पाप के तीर लगें और यह स्वयं भीतर सुरक्षित रहे ।

प्रातः०	प्रभाते	सवेरे सवेरे
रत्नम्	रमणीयं धनम्	रमणीय धन को
प्रातः ऽद्वत्वा	प्रातरागत्य	प्रातः काल में आकर
दधाति	ददाति	देता है
तम्	तम्	उस को
चिकित्वान्	विद्वान्	विद्वान
प्रति ऽगृह्य	स्वीकृत्य	स्वीकार करके
नि	नि+	-
धत्ते	नि+धत्ते, स्थापयति	रखता है
तेन	तेन	उस से
प्र ऽजाम्	सन्ततिम्	सन्तान को
वर्धयमानः	वर्धयमानः	बढ़ाता हुआ

आयुः	आयुः	आयु को
रायः	धनस्य	धन की
पोषेण	पुण्ड्र्या	पुण्ड्रि से
सचते	सङ्गच्छते	युक्त होता है
सुवीरः	सुवीरैर्युक्तः	खूब वीरों से युक्त

संस्कृतार्थः ।

(दानशीलःपुरुषः) प्रातरागत्य प्रभाते (एव) रमणीयं धनं ददाति, विद्वान् तम् (धनम्) स्वीकृत्य (स्वपाश्वे) स्थापयति, (सः) तेन (धनेन) सन्ततिम् आयुः (च) वर्धयन् (सगं) सुवीरः (भूत्वा) धनस्य पुण्ड्र्या सङ्गच्छते ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

(दानी पुरुष) प्रातः काल में आकर सवेरे सवेरे रमणीय धन को देता है, विद्वान् उसको स्वीकार करके (अपने पास) रखता है, (वह) उस (धन) से सन्तान (और) आयु को बढ़ाता हुआ खूब वीरों वाला (होकर) धन की पुण्ड्रि से युक्त होता है ॥१॥

दानं देवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११ । ११ । ११ । ११ ।

सुगुरसत्सुहिरण्यः स्वप्रवो बृह-

दस्मै वयद्बुद्धो दधाति। यस्तवायन्तं

वसुना प्रातरित्वो मुक्षीजयेवपदिमु-

तिसृनाति । २ ।

सुगुः

शोभनाभिर्गोभि-  
रुपेतः

सुन्दर गौओं से  
युक्त

असत्

भवति  
(लेडघडागमः)

होता है

सुहिरण्यः

प्रभूतेन हिरण्येन  
युक्तः

बहुत स्वर्णसे युक्त

सप्रवः

शोभनैरद्वैः  
सहितः

सुन्दर घोड़ोंसे युक्त

बृहत्

बृहत्

बहुत को

अस्मै	अस्मै	इस के लिये
वयः	सामर्थ्यम् (आ०को०)	सामर्थ्य को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
दधाति	ददाति	देता है
यः	यः	जो
त्वा	त्वाम्	तुझ को
आऽयन्तम्	आगच्छन्तम्	आते हुए को
वसुना	धनेन	धन से
प्रातःऽद्वैतवः	हे प्रातरागामिन् !	हे प्रातः काल में आने वाला
{ मुक्षीज याऽद्वैत	मुच्यमाना सती (वन्धनम्) जयती- ति मुक्षीजा रज्जु- पाशः, तेन इव	रज्जुपाश से जैसे



पदिम्	पक्षिणम्	पक्षी को
{ उत्सि नाति	उत्कृष्टतया वधनात्	खूब बांधता है

सस्कृतार्थः ।

हे प्रातरागन्तः ( विद्वन् ! ) ( सः ) शोभनाभिर्गो-  
भिरुपेतः, प्रभूतेन हिरण्येन युक्तः, शोभनैरश्वैः  
सहितः ( च ) भवति, इन्द्रः ( च ) तस्मै धृहत् सामर्थ्यं  
ददाति, यः आगच्छन्तं त्वां ' रज्जुपाशेन पक्षिणमिव '  
धनेनोत्कृष्टतया वधनाति ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे प्रातः काल में आने वाले ( विद्वान् ! ) ( वह ) सुन्दर  
गौओं से युक्त, बहुत सुवर्ण से युक्त ( और ) सुन्दर  
घोड़ों वाला होता है ( और ) उसके लिये इन्द्र बहुत  
सामर्थ्य को देते हैं जो आते हुए तुझको ' रज्जुपाश  
से पक्षी की न्याई ' धन से खूब बांधता है ॥ २ ॥

दानं देवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११११

आयमद्यसुक्तंप्रातरिच्छन्नि-

ष्टेः पुत्रं वसुमतारथेन । अंशोः सुतं पा-  
 ययमतसरस्य क्षयदीरं वर्धयसूनुता-  
 भिः ॥ ३ ॥

आयम्	प्राप्तोऽस्मि (अयगतौ)	प्राप्त हुआ-हूँ
अद्य	अथ	आज
सुऽकृतम्	सुकर्म्मणिम् (किप्)	शुभ कर्म्म करने वाले को
प्रातः	प्रातःकाले	प्रातः काल में
इच्छन्	कामयमानः	कामना करता हुआ
इष्टेः	यज्ञस्य	यज्ञ के
पुत्रम्	पुत्रम्	पुत्र को
वसुऽमता	धनवता	धन वाले से

रथेन	रथेन	रथ से
अंशोः	सोमकाण्डस्य	सोम की डंडी के
सुतम्	निष्पीडितम् (रसम्)	निचोड़ेहुए(रस) को
पायय	पायय	पिला
मत्सरस्य	मदकारकस्य	मद करने वाले की
क्षयत्स्वीरम्	वीरणामीशितारम् (क्षयतिरैद्वयं कर्मा विधं०२।२०)	वीरों के राजा को
वर्धय	वर्धय	बढ़ा
सूनुताभिः	स्तुतिगीतैः (भा० को०)	स्तुति के गीतों से

संस्कृतार्थः ।

( अहम् ) अथ प्रातःकाले सुकर्म्मणिं यज्ञस्य पुत्रं  
कामयमानः (सन्) धनवता रथेन आगतोऽस्मि, (हे यज्ञ-

मान ! त्वम्) वीराणामीशितारम् ( इन्द्रम्) मद-  
कारकस्य सोमकाण्डस्य निष्पीडितम् (रसम्) पायय,  
स्तुतिगीतैः (च) वर्धय ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

(मैं) आज प्रातः कालमें शुभकर्म करने वाले यज्ञ  
के पुत्र की कामना करता हुआ धन वाले रथ के साथ  
आया हूँ, (हे यजमान ! तू) वीरों के राजा (इन्द्र) को  
मदकारक सोम की डंडी के निचोड़े हुए रस को  
पिला (और) स्तुति के गीतों से बढ़ा ॥ ३ ॥

दानं देवता जगती छन्दः । १२।१२।१२।१२

उप॑क्षरन्ति॒ सिन्ध॑वो मयो॒ भुव॑

ई॒ जानं॑ च॒ यद्य॑ मा॒ णं च॒ धेन॑वः । पृ॒ ण-

न्तं च॒ पपु॑रिं च॒ श्रव॑स्य॒ वो घ॑तस्य॒ धारा॑

उप॑यन्ति वि॒श्वतः॑ ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

सुखके देने वालीं गौरूप नदियाँ यजन करते हुए और यजन करने की इच्छा वाले के पास जाकर बहती हैं, (और) यश की इच्छा करती हुई घृत की धाराएँ दान करते हुए और दान करने की इच्छा वाले को चारों ओर से प्राप्त होती हैं ॥ ४ ॥

दानं देवता जगती छन्दः । १२ । १२ । १२ । १२

नाकस्य पृष्ठे अधितिष्ठति श्रितो

यः पृणाति सह देवेषु गच्छति । तस्मा-

आपो घृतमर्पन्ति सिन्धव स्तस्मा-

द्वयंदक्षिणापिन्वते सदा ॥ ५ ॥

नाकस्य  
पृष्ठे

स्वर्गस्य  
शृष्ठे

स्वर्ग की  
पीठ पर

अधि॑	अधि+	-
तिष्ठति॑	अधि + तिष्ठति	बैठता है
श्रितः॑	सत्कृतः	सत्कार किया हुआ
यः	यः	जो
पृणाति॑	वदाति (निघं०३।२०)	दान करता है
सः	सः	वह
ह	खलु	सच मुच
देवेषु॑	देवेषु (द्वितीयार्थे सप्तमी)	देवताओं में
गच्छति॑	प्राप्नोति	पहुंच जाता है
तस्मै॑	तस्मै	उस के लिये
आपः॑	आपः	जल

उप	उप +	—
क्षरन्ति	उप + क्षरन्ति, उपेत्य स्वन्ति	, पास जाकर बहती हैं
सिन्धवः	नद्यः	नदियाँ
मयः ऽभुवः	सुखस्यभावयिष्यः	सुख के देने वालीं
ईजानम्	यजमानम्	यजन करते हुए को
च	(पूरणः)	—
यक्ष्यमाणम्	यक्ष्यमाणम्	यजन करने की इच्छा वाले को
च	च	और
धेनवः	गावः	गौएँ
पृणन्तम्	ददानम् (पृणातिर्दानकर्मा निघं० ३२०)	दान करते हुए को

च	(पूरणः)	-
प॒पु॒रि॒म्	दास्यमानम्	दान करने की
च	च	इच्छा वाले को और
अ॒व॒स्य॒वः	यशोऽभिलाषिण्यः	यश के चाहने वाली
घृ॒त॒स्य	घृतस्य	घृत की
धा॒राः	धाराः	धाराएँ
उ॒प	उप+	-
य॒न्ति	उप+यन्ति, प्राप्नु॒वन्ति	प्राप्त होती हैं
वि॒श्व॒तः	सर्वतः	सब ओर से

संस्तरार्थः ।

सुखस्य भावयिष्यो गोरूपा नद्यः यजमानं यक्ष्य-  
माणं च उपेत्य स्ववन्ति, यशोऽभिलाषिण्यो घृतस्य  
धाराः(च) ददानं दास्यमानं च सर्वतः प्राप्नुवन्ति॥४॥



माषार्थः ।

सुखके देने वालीं गौरूप नदियाँ यजन करते हुए और यजन करने की इच्छा वाले के पास जाकर बहती हैं, (और) यज्ञ की इच्छा करती हुई घृत की धाराएँ दान करते हुए और दान करने की इच्छा वाले को चारों ओर से प्राप्त होती हैं ॥ ४ ॥

दानं देवता जगती छन्दः । १२ । १२ । १२ । १२

नाकस्य पृष्ठे अधितिष्ठति श्रितो  
यः पृणाति सह देवेषु गच्छति । तस्मा-  
आपो घृतमर्षन्ति सिन्धवः स्तस्मा-  
द्व्यं दक्षिणा पिन्वते सदा ॥ ५ ॥

नाकस्य	स्वर्गस्य	स्वर्ग की
पृष्ठे	पृष्ठे	पीठ पर

अधि	अधि+	-
तिष्ठति	अधि + तिष्ठति	बैठता है
श्रितः	सत्कृतः	सत्कार किया हुआ
यः	यः	जो
पृणाति	ददाति (निघं०३।२०)	दान करता है
सः	सः	वह
ह	खलु	सच मुच
देवेषु	देवेषु (द्वितीयाधे सप्तमी)	देवताओं में
गच्छति	प्राप्नोति	पहुंच जाता है
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
आपः	आपः	जल

साधारणः ।

सुखके देने वालीं गौरुप नदियाँ यजन करते हुए और यजन करने की इच्छा वाले के पास जाकर बहती हैं, (और) यश की इच्छा करती हुई घृत की धाराएँ दान करते हुए और दान करने की इच्छा वाले को चारों ओर से प्राप्त होती हैं ॥ ४ ॥

दानदेवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२

नाकस्यपृष्ठेअधितिष्ठतिश्रितो  
यःपृणातिसहदेवेषुगच्छति। तस्मा-  
आपोघृतमर्षन्तिसिन्धव स्तस्मा-  
द्व्यन्दक्षिणापिन्वतेसदा ॥ ५ ॥

नाकस्य	स्वर्गस्य	स्वर्ग की
पृष्ठे	पृष्ठे	पीठ पर

की पीठ पर बैठता है, (वह) सच मुच देवताओं में  
 पहुंच जाता है, उस के लिये नदीरूप जल घृत को  
 बहाते हैं (और) उस के लिये यह दक्षिणा सदा  
 बढ़ती है ॥ ५ ॥

दानं देवता निचृत्त्रिष्टुप्लन्दः ११११०१११११

दक्षिणावतामिदिमानिचिचा

दक्षिणावतादिविसृष्ट्यासः । दक्षि-

णावन्तोऽमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः

प्रतिरन्त आयुः ॥ ६ ॥

{ दक्षिणा-	दानवताम्	दानियोंके
{ ऽवताम्		
इत्	एव	ही
इमानि	इमानि	ये

घृतम्	घृतम्	घी को
अर्षन्ति	स्त्रावयन्ति	बहाती हैं
सिन्धवः	नदीरूपाः	नदीरूप
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
इयम्	इयम्	यह
दक्षिणा	दक्षिणा	दक्षिणा
पिन्वते	वर्धते	बढ़ती है
सदा	सदा	सदा

संस्कृतार्थः ।

यो वृद्धाति स सत्कृतः (सन्) स्वर्गस्य पृष्ठम्  
अधितिष्ठति, (सः) खलु देवेषु प्राप्नोति, तस्मै नदी-  
रूपाआपोघृतं स्त्रावयन्ति, तस्मै इयं दक्षिणा सदा  
वर्धते ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

जो दान करता है वह सत्कार किया हुआ स्वर्ग

की पीठ पर बैठता है, (वह) सच मुच देवताओं में पहुंच जाता है, उस के लिये नदीरूप जल घृत को बहाते हैं (और) उस के लिये यह दक्षिणा सदा बढ़ती है ॥ ५ ॥

दानं देवता निचृत्त्रिष्टुप्लन्दः ११११०१११११

दक्षिणावतामिदमानिचिचा

दक्षिणावताद्विसूर्यासः । दक्षि-

णावन्तोऽमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः

प्रतिरन्त आयुः ॥ ६ ॥

{ दक्षिणा-	दानवताम्	दानियोंके
{ ऽवताम्		
इत्	एव	ही
इमानि	इमानि	ये

चि॒त्रा	विचित्राणि (धनानि) (शेर्लोपः)	नाना प्रकारके (धन)
{ दक्षिणा- ऽवताम्	दानवताम्	दानियों के
दि॒वि	दिवि	थीं में
सू॒र्या॑सः	सूर्याः (जसोऽसुगागमः)	सूर्य
{ दक्षिणाऽ वन्तः	दानवन्तः	दानी
अ॒मृत॑म्	अमृतम्	अमृत को
भ॒ज॒न्ते	सेवन्ते	सेवन करते हैं
{ दक्षिणाऽ वन्तः	दानवन्तः	दानी
प्र	प्र +	-

तिरन्ते

आयुः

प्र + तिरन्ते, प्रव  
र्धयन्ति

आयुः ।

बढ़ाते हैं

आयु को

संस्कृतार्थः ।

दानिनामिमानिविचित्राणि (धनानि,) दानिनाम्  
एव) धुलोके सूर्याः, दानिनोऽमृत सेवन्ते, दानिनः  
(च स्वकीयम्) आयुः प्रवर्धयन्ति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

दानियों के ये नाना प्रकार के (धन हैं,) दानियों  
के (ही) धौ में सूर्य (हैं,) दानी अमृत को सेवन करते  
हैं (और) दानी (अपनी) आयु को बढ़ाते हैं ॥ ६ ॥

दानं देवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११११

सापृणन्तोदुरितमेनारन् सा-

नारिपुः सूर्यः सुव्रतासः । अन्यस्ते-



पा॑प॒रि॒धि॒र॒स्तु॒क॒श्चि॒ द॒पृ॒ण॒न्त॒म॒भि  
सं॒य॒न्तु॒शो॒काः । ७ ।

मा	मा	मत
पृ॒ण॒न्तः	द॒दा॒नाः	दा॒न॒ कर॒ते हु॒ए
दुः॒ऽख॒त॒म्	दुः॒ख॒म्	दुः॒ख॒ को
ए॒नः	पा॒प॒म्	पा॒प॒ को
आ	आ+	-
अ॒र॒न्	आ+अ॒र॒न्, प्राप्नु॒- व॒न्तु (लो॒ढ्ये॒ षट् )	प्राप्त॒ हों
मा	मा	मत
जा॒रि॒षुः	जी॒र्णा॒भि॒व॒न्तु (लो॒ढ्ये॒ लु॒ङ् घ॒ढमा॒चः)	क्षी॒ण॒ हो
स॒र॒यः	स्तो॒ता॒रः	स्तो॒ता

सु॒ऽव्र॒ता॒सः	सुव्रतः	नियमों में दृढ़
अ॒न्यः	अन्यः	दूसरा
तेषा॑म्	तेषाम्	उनका
परि॒ऽधिः	परिधिः	कोट
अ॒स्तु	भवतु	हो
कः	कः+चित्	कोई
चि॒त्	+चित्	-
अ॒पृ॒ण॒न्तम्	दानरहितम्	दान से रहित को
अ॒भि	प्रति	की ओर
सम्	सम्+	-
य॒न्तु	सम्+यन्तु, सम्यग् गच्छन्तु	सच के सच जावें
शो॒काः	शोकाः	शोक

संस्कृतार्थः ।

दानिनो दुःखं पापम्(च) न प्राप्नुवन्तु, सुव्रताः  
स्तोतारो जीर्णा न भवन्तु, अन्यः कश्चित् तेषां  
परिधिर्भवतु शोकाः (च) दानरहितं प्रति सम्यग्  
गच्छन्तु ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

दानी दुःख (और) पाप को न प्राप्त हों (और)  
नियमों में दृढ़ स्तोता लोग क्षीण न हों, उन का कोई  
दूसरा कोटरूप हो (और) शोक सब दानहीन की  
ओर जावें ॥ ७ ॥

इति पञ्चविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

## च०मं० १ सू० १२६ ।

आदितः पञ्चानां भावयज्योदेवता, पठ्याः स-  
प्तम्याश्च जायापतीदेवते कक्षीवानृषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भाषार्थ ।

मैं सिन्धु के तट पर रहने वाले अजेय राजा भावयज्य की स्तुति में युद्धिद्वारा तीस स्त्रियों को भेंट करता हूँ जिस ने यश की कामना से मेरे लिये सदस्र यज्ञ किये ॥१॥ उस षलवान राजा की प्रार्थना से मुझ कक्षीवान ने साँ सोने के द्वार, सौ सधे हुए घोड़े और सौ गौरँ एक ही दिन में ग्रहण किये, इसका घुलोक में ऐसा यश फैला है जो कभी क्षीण न हो । २ । मेरे पास राजा स्वनय\* के दिये हुए पिंगल, वर्ण के घोड़े और दस रथ जिन में स्त्रियाँ बैठी हैं खड़े हैं, उनके पीछे साठ हजार गौओं का झुंड आरहा है, ये कक्षीवान की जयानी के दिन धीतने पर मिले हैं । ३ । दस रथों में जुड़े हुए मेरे चालीस लाल रंग के घोड़ों की कतार हजार गौओं के आगे चलती है, पञ्चवंशी कक्षीवान के पुत्र मद के टपकाने वाले सुनहरी सिंगार से युक्त घोड़ों को उज्ज्वल करते हैं । ४ । हे पत्नी ! तुम जो आवृभाव रखते हुए (और दर्शपूर्णमासादि इष्टियों के लिये) शकट से युक्त हुए २, कुटुम्ब वाली स्त्रियों की न्याईं कीर्ति की इच्छा करते हो, मैं तुम्हारे लिये पूर्वदान की न्याईं तीन जुड़े हुए रथ और आयों के रखने योग्य आठ गौओं को लाया हूँ । ५ । जो भोग के योग्य खूब चारों ओर से ग्रहण

\* स्वनय, भावयज्य के पुत्र का नाम है ।

श्र०मं०१सू०१२६ मं०१ ( ३४१२ )

की हुई मेरी पत्नी जनी हुई नकुली की न्याई अत्यन्त चिमटती है , वह बहुत निपेक वाली मुझे सैकड़ों सुखों को देती है १ ॥ हे पति ! मुझ को अत्यन्त समीप से स्पर्श करो मुझ को बाला न समझो, क्योंकि मैं गंधार की भेड की न्याई सब स्थानों में रोमवाली हूं ॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११११

अमन्दान्तस्तोमान्प्रभरेमनीषा

सिन्धावधिच्चियतोभाव्यस्य । योमे

सहस्रममिमीतसवा नतूर्तीराजाश्र-

वद्बुच्छमानः ॥ १ ॥

अमन्दान्	तीव्रान्	तीव्रों को
स्तोमान्	स्तवान्	स्तोत्रों को

१ छठे और सातवें मंत्र में पति और पत्नी का संघाद है जो पूर्व समय से चला आता है, देखो बृहद्देवता० ३।१५ (जायापत्योः सम्प्रवादोद्भवेन) कक्षीवान यहाँ पर अपने युद्धाये के सुख के सम्यन्ध में इसको पढ़ते प्रतीत होते हैं, देखो श्र०१।५१।१३। जिस में बृहद् कक्षीवान को युधति वृधया के मिलने की कथा है, सातवाँ मंत्र वृधया या कथन और छठा कक्षीवान का होसकता है।

प्र	प्र +	-
भरे	प्र + भरे, अर्पयामि	भेट करता हूं
सनीषा	बुद्ध्या (विमर्शः सुः)	बुद्धि से
सिन्धौ	सिन्धुतटे	सिन्धु के तट पर
अधि	अधि +	-
क्षियतः	अधि + क्षियतः, निवसतः (क्षिनिवासे)	रहने वाले के
भाव्यस्य	भावयव्यस्य	भावयव्य के
य	यः	जिस ने
मे	मह्यम्	मेरे लिये
सहस्रम्	सहस्रम्	हजार को
अमिमीत	कृतवान्	किया है

सुवान्	यज्ञान्	यज्ञों को
अतूतः	जेतुमशवयः	न जीते जानेवाला
राजा	राजा	राजा
यशः	यशः	यश को
इच्छमानः	कामयमानः (व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्)	कामना करता हुआ

[संस्तुतार्थः । ]

( अहम् ) सिन्धुनटे निवसतो भावयव्यस्य  
(स्तुतौ)तीव्रान् स्तवान् बुद्ध्या अर्पयामि, यो जेतुमश-  
व्याराजा यशः कामयमानः ( सन् ) मदर्थं सहस्रं  
यज्ञान् कृतवान् ॥ १ ॥

[भाषार्थः ।

मैं सिन्धु के तट पर रहने वाले [भावयव्य]  
की ( स्तुति में ) तीव्र स्तोत्रों को बुद्धिद्वारा भेंट  
करना हूँ, जिस राजा ने यश की कामना करते हुए  
मेरे लिये सहस्र यज्ञ किये हैं ॥ १,॥

दानं देवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११ । ११ । ११ । ११ ।

शतं राज्ञो नाधमानस्य निष्काज्

शतमश्वान् प्रयतान् तस्य दद्यादम् । श-

तं कक्षीवाँ असुरस्य गोनां दिवि श्रवोऽ-

जरमाततान ॥ २ ॥

शतम्	शतम्	सौ को
राज्ञः	राज्ञः	राजा के
नाधमानस्य	याचमानस्य	प्रार्थना करते हुए
निष्कान्	स्वर्णहारान्	सोने के हारों को
शतम्	शतम्	सौ को
अश्वान्	अश्वान्	घोड़ों को



प्र॒त्य॒तान्	व॒शी॒भू॒तान्	स॒धे॒ ह॒ओं को
स॒द्यः	ए॒क॒स्मि॒न्ने॒व॒दि॒ने (आ०को०)	ए॒क॒ही॒ दि॒न में
आ॒द॒स्	आ॒त्त॒वा॒न॒स्मि	मैंने॒ ग्र॒हण॒ किया है
श॒त॒म्	श॒त॒म्	सौ को
क॒क्षी॒वान्	क॒क्षी॒वान्	क॒क्षी॒वान्
अ॒सु॒र॒स्य	प्रा॒ण॒व॒तः	व॒ल॒वा॒न की
गो॒ना॒म्	ग॒वा॒म् (मु॒डा॒ग॒म॒द॒छा॒न्द॒सः)	गौ॒ओं के
दि॒वि	द्यु॒लो॒के	द्यु॒लो॒क में
अ॒वः	य॒शः	य॒श को
अ॒ज॒र॒म्	अ॒क्षी॒ण॒म्	न क्षी॒ण हो॒ने वा॒ले को
आ	आ+	—
त॒तान्	आ+त॒तान्, वि॒स्तारि॒त॒वान्	फै॒ला॒या है

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) कक्षीवान् प्रार्थयमानस्य प्राणवतो राज्ञः  
 शतं स्वर्णहारान्, शतं वशीभूतानश्वान्, गवां शतम्  
 (च) सद्योग्रहीतवानस्मि (यः) द्युलोके अक्षीणं यशो  
 विस्तारितवान् ॥ २ ॥

मापार्थः ।

मुझ कक्षावान ने प्रार्थना करते हुए चलवान  
 राजा के सौ सोने के हारों को, सौ सधे हुए घोड़ों  
 को (और) सौ गौओं को ग्रहण किया है (जिस राजा  
 ने) द्युलोक में क्षीण न होने वाले यश को फैलाया  
 है ॥ २ ॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११।११।११

उपमाश्रयावाःस्वनयेनदत्ता

वधूमन्तोदशरथासोअस्थुः । प्रष्टिः

सहस्रमनुगव्यमागात् सनत्कक्षी-

वाअभिपित्वेअक्लाम् ॥ ३ ॥

उप	उप +	-
मा	माम्	मुझ को
श्यावाः	कृष्णपीतवर्णाः (अश्वाः)	काले(और) पीले रंगके (घोड़े)
स्वनयेन	(राज्ञा)स्वनयेन	(राजा)स्वनय ने
दत्ताः	दत्ताः	दिये हुए
वधूऽमन्तः	स्त्रीभिर्युक्ताः	स्त्रियों से युक्त
दश	दश	दस
रथासः	रथाः (जसोऽसुगागमः)	रथ
अस्थः	उप+अस्थुः, उप- स्थितवन्तः	समीप ठेरे हैं ।
षष्टिः	षष्टिः	साठ
सहस्रम्	सहस्रम्	हजार

अनु	अनु	पीछे २
गव्यम्	गोसमूहः (सा० भौ०)	गौएँ ॥
आ	आ+	-
अगात्	आ+अगात्, आगतवान्	आई हैं
सनत्	प्राप्तवान् (लेट्यडागमः)	पाया हैं
कक्षीवान्	कक्षीवान्	कक्षीवान ने
अभिऽपित्वे	अत्यये	बीतने पर
अह्नाम्	दिवसानाम्	दिनों के

संस्कृतार्थः ।

(राज्ञा) स्वनयेन दत्ताः कृष्णपीतवर्णाः (अश्वाः)  
 स्त्रीभिर्युक्ताः दश रथाः (च) मामुपस्थितवन्तः, षष्टि-  
 सहस्रं गावः (अपि) अन्वागतवत्यः ( एतत् सर्वम् )  
 कक्षीवान् दिवसानामत्यये प्राप्तवान् ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

(राजा) स्वनय के दिये हुए काले पीले रंग के घोड़े (और) स्त्रियों के सहित दसरथ मेरे पास उपस्थित हैं, साठ हजार गौएँ (भी) पीछे आई हैं, (इन सब को) कक्षीवान, ने दिनों के बीतने पर पाया-है ॥ ३ ॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११११

चत्वारिंशदशरथस्य शोणाः सु-  
हस्रस्याऽग्रे श्रेणिं नयन्ति । मदच्युतः  
कक्षनावतो अत्यान् कक्षीवन्त उद-  
मृक्षन्त प्रजाः ॥ ४ ॥

चत्वारिंशत्	चत्वारिंशत्	चालीस
दशरथस्य	दशरथाः सन्ति यस्य तथोक्तस्य	दसरथों वाले के
शोणाः	सिन्दूरवर्णाः (अश्वाः)	सिंदूरी रंग के (घोड़े)

सहस्रस्य	सहस्रस्य	सहस्र के
अग्रे	अग्रे	आगे
श्रेणिम्	श्रेणिम्	कतार को
नयन्ति	नयन्ति	ले चलते हैं
मदऽच्युतः	मदस्य व्यावयितृन् (किप्)	मदके टपकाने वालों को
कृशऽनऽवतः	स्वर्णयुक्तान्	स्वर्ण वालों को
अथान्	अश्वान् (निघं० १।१४)	घोड़ों को
कक्षीवन्तः	कक्षीवतः पुत्राः	कक्षीवानके पुत्र
उत्	उत् +	-
अमृक्षन्त	उत् + अमृक्षन्त, उत्कृष्टतया मार्जयन्ति (लङ्घ्येच्छ)	उज्ज्वल करते हैं
पजाः	पजूवंशीयाः	पजूवंशी

क्र०मं०१सू० १२६मं०५ ( ३४२२ )

संस्कृतार्थः ।

दशरथोपेतस्य ( मम ) सिन्दूरवर्णाश्चत्वारिंशत्  
( अश्वाः ) ( गवाम् ) सहस्रस्य श्रेणिम् अग्रे नयन्ति,  
मदस्य द्यावयितृन् स्वर्णयुक्तान् ( चैतान् ) अश्वान्  
पञ्चवंशीयाः कक्षीवतःपुत्राः संमार्जयन्ति ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

( मुझ ) दस रंथों वाले के संदूरी रंग के चालीस  
( घोड़े ) हजार ( गौओं की ) कतार को आगे ले चलते  
हैं, मद के टपकाने वाले ( और ) सोने से युक्त ( इन )  
घोड़ों को पञ्चवंशी कक्षीवान के पुत्र उज्ज्वल  
करते हैं ॥ ४ ॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११ । ११ । ११ । ११ ।

पूर्वा॒मन॒प्रय॑ति॒माद॑देव॒स्त्रीन्यु॒-

ताँअ॒ष्टाव॒रिधा॑यसो॒गाः । स॒वन्ध॑-

वो॒येवि॒प्रया॑द्ब॒व्रा अन॑स्वन्तःश्रव॒णै-

प॒न्तप॒जाः ॥ ५ ॥

पूर्वाम्	पूर्वाम्	पहली को
अनु	अनु-(सृत्य)	अनुसार
प्रऽयतिम्	प्रदानम्	भेट को
आ	आ +	—
ददे	आ + ददे, आनीत- वानस्मि	में लाया हूं
वः	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
त्रीन्	त्रीन्	तीनों को
युक्तान्	युक्तान्	जुड़े हुआओं को
अष्टौ	अष्टौ	आठों को
अरिऽधायसः	आर्यधारणयो- (मा० को०) ग्याः	आर्यों के रखने के योग्यों को
गाः	गाः	गोओं को



सुवन्धवः	सुवन्धुयुक्ताः	अच्छे बन्धुओंवाले
ये	ये	जिन्होंने
विप्रयाःऽद्वय	कुटुम्बिन्य इव (भा० को०)	कुटुम्ब वालियों की न्याईं
त्राः	स्त्रियः	स्त्रियाँ
अनस्वन्तः	अनः शकटं तद्- वन्तः	शकटसे युक्तहुए २
श्रवः	यशः	यश को
ऐषन्त	इच्छन्ति (लडधें लड्)	इच्छा करते हैं
पञ्जाः	पञ्जाः	पञ्जवंशी

संस्कृतार्थः ।

(हे पञ्जा !,) (अहम्) युष्मदर्थं पूर्वप्रदानमनुसृत्य  
घ्रीन् युक्तान् (रथान्) आर्य्यधारणयोग्या अष्टौ गाः  
(च) आनीतवानस्मि, ये सुवन्धवः पञ्जाः (इष्टार्थम्)  
शकटवन्तः ( सन्तः ) कुटुम्बिन्यः स्त्रिय इव यश-  
इच्छन्ति ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे पज्रो ! मैं तुम्हारे लिये पहले दान के अनुसार तीन जुड़े हुए (रथों) को (और) आर्यों के रखने योग्य आठ गौओं को लाया हूँ जो अच्छे बन्धुओं वाले पञ्चवंशी (इष्टि के लिये) शकट से युक्त हुए २ कुटुम्बवाली स्त्रियों की न्वाई यश की इच्छा करते हैं ॥ ५ ॥

जायापतीदेवते, भुरिगनुष्टुप्छन्दः । ९।८।८।८

आग॑धि॒तापरि॑गधि॒ता याक॑शी-

केव॑जङ्ग॒हे । ददा॑तिम॒ह्यंयादु॑री या-

शूना॑भि॒ज्याश॒ता । ६ ।

आऽगधि॑ता	सम्यग्गृहीता (गम्य गृह्णातेरिति यास्कः)	खूब ग्रहण की हुई
परऽगधि॑ता	परितोगृहीता	चारों ओर से ग्रहण की हुई
या	या	जो

क॒शीकाऽङ्ग॑व	प्रसू॒तवत्सा॑ नकु॒लीव	जनी॑ हुई नकुली की न्याई
जङ्ग॑हे	अत्यन्तम् आलिङ्गति	अत्यन्त चिमट जाती है
ददा॑ति	ददाति	देती है
मह्य॑म्	ह्यम्	मेरे लिये
यादु॑री	बहु॒निपेक॑युक्ता (यादुरित्युदकनाम निघं०१।१२)	बहुत निपेकवाली
याशू॑नाम्	भोगा॑नाम् (सा०भा०)	भोगों के
भो॒ज्या	भोग॑योग्या	भोग के योग्य
श॒ता	शतानि	सैंकड़ों को

संस्मृतार्थः ।

या भोगयोग्या (ममपत्नी) सम्यक् परितोष्ट-  
हीता सती सूतवत्सा नकुलीव (माम्) अत्यन्तमा-  
लिङ्गति, (सा) बहुनिपेक युक्ता मह्यं भोगानां शतानि  
ददाति ॥ ६ ॥

मापार्थः ।

जो भोग के योग्य चारों ओर से खूब ग्रहण की हुई (मेरी पत्नी) जनी हुई नकुली की न्याई अत्यन्त चिमटती है, वह बहुत निपेक वाली मुझे सैंकड़ों भोगों को देती है ॥ ६ ॥

जायापतीदेवते, अनुष्टुप्छन्दः । ८८८८८

उपोपमेपराभृश मामेदभ्राणि

मन्यथाः । सर्वाहमस्मिरोमशा ग-

न्धारीणामिवाविका । ७ ।

उपऽउप	अतिसामीप्येन	अत्यन्त समीप से
मे	माम् (कर्मणिषष्ठी)	मुझ को
परा	परा+	-
भृश	परा+भृश, सम्यक् सृश	खूब स्पर्श करो

मा	मा	मत
मे	मम	मेरे
द॒भ्राणि॑	अल्पा॒नि	अल्प
म॒न्य॒थाः	म॒न्यस्व	समझो
स॒र्वा	स॒र्व॒स्थानेषु॑	सब स्थानों में
अ॒हम्	अ॒हम्	मैं
अ॒स्मि	अ॒स्मि	हूँ
रो॒म॒शा	रो॒म॒युक्ता	रोम वाली
{ ग॒न्धा॒री-	ग॒न्धा॒रसम्बन्धि-	जैसे गंधार की
{ णा॒म्ऽद्व॒व	नी॒व	
अ॒वि॒का	मे॒धी	भेद

संस्कृतार्थः ।

(हेपते!) (त्वम्) माम् अतिसामीप्येन सम्यक् स्पृश,

मम अल्पानि ( रोमाणि ) न मन्यस्व, (यतः) अहं  
गन्धारसम्बन्धिनी मेषीव सर्वस्थानेषु रोमशा-  
ऽस्मि ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

(हे पति ! ) आप मुझ को अत्यन्त समीप से  
स्पर्श करो मेरे अल्प (रोम) न समझो ( क्योंकि )  
मैं गंधार की भेड़ की न्याईं सब स्थानों में रोम  
वाली हूँ ॥ ७ ॥

इतिषड्विंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

## ऋ० मं० १ सू० १२७

अग्निदेवता, दिवोदासपुत्रः परुच्छेप ऋषिः ।

विनियोग :-

१ । दशरात्रस्य पण्डेऽहनि प्रातःसवने प्रस्थितयाज्यानां पुरस्ताद्  
अन्याश्रयः कृत्वा प्राकृतामिदं सह यष्ट्यं तत्राग्नीध्रस्यैषा  
प्रथमा (भा० सू० ८।१।२)

शेषाणां लैङ्गिकः ।

सूक्त का भाषार्थ ।

मैं जानता हूँ कि अग्नि देवताओं के बुलाने वाले हैं, दानशील और  
धनवान हैं, बल के पुत्र हैं, जीवमात्र के जानने वाले हैं, ऋषि की-  
न्याई जीवमात्र के जानने वाले हैं, जो देव देवताओं पर अत्यन्त  
रूपा करते हुए शुभ यज्ञ के प्रवर्तक होकर धी से उठी हुई ज्वाला की  
अपनी ज्वाला द्वारा कामना करते हैं हमारे होमे हुए धी की (कामना  
करते हैं) । १। हे विप्र ! आप जो सबसे अधिक पूजनीय, और अद्वि-  
र्वाच्यियों के बड़े हो, ऐसे आपको हम यजमान मंत्रों द्वारा बुलाते  
हैं, हे तेज वाले ! ऋषियों के देखे हुए मंत्रों से आपको (बुलाते  
हैं) जो आप ज्वाला रूप केशों वाले, कामनाओं के पूर्ण करने  
वाले, मनुष्यों के लिये देवताओं के बुलाने वाले और आकाश की  
न्याई व्यापक हो, ऐसे आपको ये प्रजापति अत्यन्त सावधानी से  
धारण करें, प्रेरणा के लिये प्रजापति आपको धारण करें ॥२॥ तेज युक्त  
उत्कट बल से घमकते हुए सचमुच बड़ी अग्नि द्रोह करने वालों  
के नाशक हैं, कल्हाड़े की न्याई द्रोह करने वालों के नाशक हैं,  
जिन के स्पर्श में दृढ़ और स्थिर भी धूसों की न्याई छिन्नमिन्न  
हो जाता है, जो (अग्नि) सब को जोतते हुए बड़े रहते हैं (और

घात्रु को) पीठ नहीं दिखाते, धनुर्धारी योधा की न्याईं (डटे रहते हैं) पीठ नहीं दिखाते ।३। इस यथार्थ जानने वाले (यजमान) के दृढ़ (शत्रु) भी अनुकूल हो जाते हैं जो रक्षा के लिये धूम प्रदीप्त काष्ठों से हवि देता है, (जो) रक्षा के लिये अग्नि को हवि देता है, जो अग्नि अपनी ज्वाला से बहुत पदार्थों में घुस कर उनकी वृक्षों की न्याईं काट डालते हैं, (और) कठिन अम्नों को भी बल से पृथक् परमाणु वाला कर देते हैं, कठिन (पदार्थों को भी) बल से (पृथक् परमाणु वाला कर देते हैं) ॥ ४ ॥ हम हवि के अन्न-को इस अग्नि में चारों ओर से डालते हैं, जो रात्रि में दिन से भी अधिक अच्छे दिखाई देते हैं, प्राणियों को दिन से भी अधिक अच्छे दिखाई देते हैं, जैसा पुत्र के लिये पिता दृढ़ शरण पकड़ने योग्य है वैसे अग्नि का जीवन (हमारे लिये दृढ़ शरण पकड़ने योग्य है), ये कमा बूढ़े न होने वाली अग्नियों दिये हुए ओर न दिये हुए अन्न को भक्षण करती ह, ये कमा न बूढ़े होने वाली भक्षण करती हैं । ५। मरुद्गणां के से खोंखाट से जलने वाले अग्निदेव जहां मनुष्य खेती का काम करते हैं वहां ओर जो धंजर भूमि है वहां भी पूजनेयोग्य हैं, योग्यता के कारण यज्ञ के भवज रूप वह हमारी हवियों को ग्रहण करके खाते हैं, इस-लिये सब मनुष्य इस आनन्दस्वरूप और आनन्ददायक अग्नि के मार्ग को पकड़ें, जैसे कल्याण के लिये (आजीविका का मार्ग पकड़ते हैं इस तरह अग्नि के) मार्ग को (पकड़ें) । ६। अथ आकाश की ओर मुख उठाए हुए भृगुवंशियों ने कीर्तन और नमस्कार दोनों प्रकार से अग्नि की स्तुति की, मन्थन करते हुए और हवि देते हुए (स्तुति की,) जो अग्नि पवित्र हैं धनों के धारण करने वाले और स्वामी हैं, तब युद्धिमान अग्नि ने स्तुतिपर्यन्त दिये हुए पदार्थों को स्वीकार किया, युद्धिमान (अग्नि) ने पूर्ण-



रूप से स्वीकार किया। ७। हे अग्नि ! आप जो सब प्रजाओं के नाथ हैं, सब के समान—(इष्टदेव) हैं और घरों के रक्षक हैं, ऐसे आप को हम धारण \* करने के लिये बुलाते हैं, (देवताओं के पास हमारी) पुकार को ले जाने वाले सच्चे (आपको) हम धारण करने के लिये (बुलाते हैं), मनुष्यों के अतिथि आपको (हम बुलाते हैं) पिता समान जिस आप के मुख से सचमुच ये मर्त्य और अमर्त्य बल को (प्राप्त करते हैं), और देवताओं में हविर्वा और बल (पहुँचता है)। ८। हे अग्नि ! आप जो बल के कारण सूर्य दमन करने वाले और सबसे अधिक बलवान हो, आप देवताओं की सेवा के लिये उत्पन्न हुए हो, मानो देवताओं की सेवा के लिये धनरूप हो, आप का मद सब से अधिक बल वाला है और (आप की) बुद्धि सब से अधिक यश वाली है, इसीलिये मनुष्य आप की सेवा करते हैं, हे जरारहित ! चाकरोँ को न्याई (सेवा करते हैं)। ९। हे आर्यगण ! आपकी (घाणी) पूज्य अग्नि के लिये उठे, जो बल से दमन करने वाले, प्रातःकाल में जागने वाले, और पशु देने वाले की न्याई उपकारी हैं, (आप का) स्तोत्र अग्नि के लिये (उठे) क्योंकि सब जगह हवि लिये हुए यजमान इस अग्नि को लक्ष रख कर ही पुकारते हैं, जैसे बड़े आदमियों के सामने भाट स्तुति करता है, वा बड़ों के (आगे) पुकारने वाला दौड़ता चलता है। १०। हे अग्नि ! देवताओं के साथ रहने वाले वह आप हमारे अत्यन्त समीप दीखते हुए हितबुद्धि से धनों को लाकर दें, हित बुद्धि से बड़े बड़े धनों को (लाकर दें), हे सब से अधिक बलवान ! आप हम को महान करें, जिस से हम इस पृथिवी को सूर्य देखें और भोगें, हे धनवाले ! आप जो बल के कारण भयंकर जैसे हो, ऐसे आप हमारे लिये बड़ी दीरता को मथन करें। ११।

\* अर्थात् आप सदा हमारे पास रह कर हमारी रक्षा करें और हम को बर्मी न छोड़ें, इसलिये बुलाते हैं।

अग्निदेवता अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१३।८

अग्निं॑ हो॒ता॒रं॑ म॒न्ये॒ दा॒स्व॒न्तं॑ व॒सुं॑  
 सू॒नुं॑ स॒हसो॑ जा॒तवे॑ द॒सं॑ वि॒प्रं॑ न॒जा॒तवे॑  
 द॒सम् । य॒जु॒र्ध॒र्वया॑ स्व॒ध॒वरो॑ दे॒वो दे॒वा-  
 च॒या कृ॒पा । घृ॒तस्य॑ वि॒भ्रा॒ष्टि॒मनु॑ व-  
 ष्ठि॒शो चि॒प्रा जु॒ह्वान॑स्य॒स॒र्पि॒षः ॥१॥

अग्निम्

अग्निम्

अग्नि को

होतारम्

आह्वतारम्

बुलाने वाले को

मन्ये

जानामि

समझता हूँ

दास्वन्तम्

दानशीलम्

देने वाले को

वसुम्

धनवन्तम्  
(भा०को०)

धन वाले को

सूनुम्	पुत्रम्	पुत्र को
सहसः	बलस्य	बल के
{ जातऽवे- दसम्	जातानांवेदितारम्	उत्पन्नहुओं के जानने वाले को
विप्रम् न	ऋषिम् इव	ऋषि को जैसे
जातऽवेदसम् यः	जातप्रज्ञम् यः	जीवमात्र के जानने वाले को जो
ऊर्ध्वया	उत्कृष्टया	सहान से
सुऽअध्वरः	शोभनयज्ञस्यप्रव- र्तकः	सुन्दर यज्ञ का प्रवर्तक
देवः	देवः	देव

दे॒वा॒च्या	दे॒वान्प्रतिगच्छ- न्त्या (अञ्जुगतौ)	दे॒वताओं की ओर जाने वाली से
कृ॒पा	कृ॒पया (सु॒षामिति॒विमर्केर्लुक्)	कृ॒पा से
घृ॒तस्य	घृ॒तस्य	घी की
वि॒ऽश्वा॒ष्टिम्	अर्चि॒षम्	लाट को
अ॒नु	अ॒नु-(सृ॒त्य)	अनुसरण करके
व॒ष्टि	का॒मय॒ते	कामना करता है
शो॒चिषा	ज्वा॒लया	ज्वाला से
{ आ॒ऽजु॒ह्वा- नस्य	समन्ताद्ब॒हूय- मा॒नस्य	चारों ओर से होमे जाते हुए के
स॒र्पि॒षः	वि॒लीनस्य	पिघले हुए के

संस्कृतार्थः ।

अहं जातानां वेदितारम्, कृपिमिव जातप्रज्ञं, बल-

शक्र	हे दीप्तिमन् !	हे दीप्ति वाले
मन्त्रमभिः	मन्त्रैः	मंत्रों से
{ परिज्जमा- नम्ऽद्वय	परितोगन्तारमिव	जैसे चारों ओर से
द्याम्	द्याम्	द्यो को
होतारम्	होतारम्	होता को
चर्षणीनाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के
{ शोचिऽ केशम्	ज्वालारूपकेश- युक्तम्	ज्वालारूपी बालों वाले को
वृषणम्	(कामानाम्) वर्षितारम्	(कामनाओं के) बरसानेवाले को
यम्	यम्	जिस को
इमाः	इमाः	ये.

विशः	प्रजाः	प्रजाएँ
प्र	प्र +	-
अवन्तु	प्र+अवन्तु भृशं	खूब रक्षा करें
जतये	रक्षन्तु	
विशः	प्रेरणाय	प्रेरण के लिये
	प्रजाः	प्रजाएँ

संस्कृतार्थः ।

हे मेधाविन् ! दीप्तिमन् (अग्ने) ! अङ्गिरोवंशी-  
यानां ज्येष्ठं पूज्यतमम् (च) त्वां यजमानाः (वयम्)  
मन्त्रैराह्वयामः, (वयं त्वाम्) ऋषिदृष्टैर्मन्त्रैः (आह्व-  
यामः,) यं ज्वालारूपकेशयुक्तम् (कामानाम्) वर्षितारं  
मनुष्याणां होतारं द्यामिव परितोगन्तारम् (च त्वाम्)  
इमाः प्रजाः प्रकर्षेण रक्षन्तु, (इमाः) प्रजाः प्रेरणाय  
रक्षन्तु ॥ २ ॥

मापार्थः ।

हे बुद्धिमान् और दीप्ति वाले (अग्नि) ! अंगिरा-  
वंशीयों के बड़े (और) सब से अधिक पूजनीय आप  
को हम यजमान मन्त्रों से बुलाते हैं, (हम आपको)  
ऋषियों के देखे हुए मन्त्रों से (बुलाते हैं,) जिस ज्वाला

स्य पुत्रम् (च) अग्निं धनवन्तं दानशीलम् (देवानाम्)  
आहातारम् (च) जानामि, यः शोभनस्य यज्ञस्य प्र-  
वर्तको देवः देवान्प्रति गच्छन्त्या उत्कृष्टया  
कृपया सर्वतोद्भूयमानस्य विलीनस्य घृनस्य अर्चिषम्  
(निज-) ज्वालाया अनु--(सृत्य) कामयते ॥ १ ॥

मापार्थः ।

मैं उत्पन्न हुआओं के जानने वाले, ऋषि की न्याईं  
जीवमात्र के जानने वाले (और) बलके पुत्र अग्नि को  
धनवान दानशील (और) देवताओं के बुलाने वाला  
समझता हूँ, जो सुन्दर यज्ञके प्रवर्तक (और) देवता,  
देवताओं की ओर जाने वाली महान कृपा से चारों  
ओर से होमे हुए पिघले हुए घी की लाट को अपनी  
ज्वाला द्वारा अनुसरण (करके) कामना करते हैं ॥१॥

अग्निर्देवता अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।१२।८

यजि॑ष्ठ॒त्वा॒यज॑माना॒हुवे॑म॒ज्ये-  
ष्ठ॒म॒ङ्गि॑र॒सां॒विप्र॑मन्म॒भिर्वि॑प्रे॒भिः  
शु॒क्रम॑न्म॒भिः । परि॑ज्मानमि॒वद्यां

होतारं चर्षणीनाम् । शोचिष्केशं वृषणं  
यमिमाविशः प्रावन्तु जतये विशः ॥२॥

यजिष्ठम्	पूज्यतमम्	सब से अधिक
तवा	त्वाम्	पूजनीय को
यजमानाः	यजमानाः	तुझ को
हुवेम	आह्वयामः (लडयें लिङ्)	यजमान
ज्येष्ठम्	ज्येष्ठम्	हम बुलाते हैं
अङ्गिरसाम्	अङ्गिरो वंशीया- नाम् ( मध्ये )	बड़े को
विप्र	हे मेधाविन् !	अङ्गिरा वंशियों में
मन्मदभिः	मन्त्रैः	हे बुद्धिमान
विप्रेभिः	ऋषिदृष्टैः	मन्त्रों से
		ऋषियों के देखे ! हुओं से



शक्र	हे दीप्तिमन् !	हे दीप्ति वाले
मन्मऽभिः	मन्त्रेः	मंत्रों से
{ परिज्मा- नम्ऽइव	परितोगन्तारमिव	जैसे चारों ओर से चलने वाले को
द्याम्	द्याम्	द्यौ को
होतारम्	होतारम्	होता को
चर्षणीनाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के
{ शोचिऽ केशम्	ज्वालारूपकेश- युक्तम्	ज्वालारूपी बालों वाले को
वृषणम्	(कामानाम्) वर्षितारम्	(कामनाओं के) वरसानेवाले को
यम्	यम्	जिस को
इमाः	इमाः	ये

विशः	प्रजाः	प्रजाएँ
प्र	प्र +	-
अवन्तु	प्र+अवन्तु भृशं	खूब रक्षा करें
जतये	रक्षन्तु	प्रेरण के लिये
विशः	प्रजाः	प्रजाएँ

संस्कृतार्थः ।

हे मेधाविन् ! दीप्तिमन् (अग्ने) ! अङ्गिरोवंशी-  
यानां ज्येष्ठं पूज्यतमम् (च) त्वां यजमानाः (वयम्)  
मन्त्रैराह्वयामः, (वयं त्वाम्) ऋषिदृष्टैर्मन्त्रैः (आह्व-  
यामः,) यं ज्वालारूपकेशयुक्तम् (कामानाम्) वर्षितारं  
मनुष्याणां होतारं द्यामिव परितोगन्तारम् (च त्वाम्)  
इमाः प्रजाः प्रकर्षेण रक्षन्तु, (इमाः) प्रजाः प्रेरणाय  
रक्षन्तु ॥ २ ॥

माषार्थः ।

हे बुद्धिमान् और दीप्ति वाले (अग्नि)! अंगिरा-  
वंशीयों के बड़े (और) सब से अधिक पूजनीय आप  
को हम यजमान मन्त्रों से बुलाते हैं, (हम आपको)  
ऋषियों के देखे हुए मन्त्रों से (बुलाते हैं,) जिस ज्वाला

रूपी घालों वाले, (कामनाओंके) बरसाने वाले, मनुष्यों के होता (और) आकाश की न्याड़ चारों ओर जाने वाले (आप)को ये प्रजाएँ खूब रक्षा से धारण करें (ये) प्रजाएँ प्रेरणाके लिये (खूब रक्षासे धारण करें)। २।

अग्निदेवता अत्यष्टिश्छन्दः। १२। ११। ८। ८। ८। १२। ८

सहि॑पुरु॒चि॒दो॒जसा॑वि॒रुक्म॑ता  
दी॒द्यानो॑भ॒वति॑द्रु॒हन्तरः॑ पर॒शुर्न॑द्रु॒हन्तरः॑।  
वी॒ळुचि॒दस्य॑स॒मृ॒तौश्रु॒वद्वने॑-  
व॒यत्स्थि॑रम् । नि॒ष्प्र॑ह॒माणी॑य॒मते॑  
नाय॑ते ध॒न्वा॒स॒हाना॑य॒ते ॥ ३ ॥

सः

सः

वह

हि

एव

ही

पुरु	बहु	बहुत
चित्	खलु	सच मुच
ओजसा	बलेन	बल से
विरुक्मता	विरोचमानेन	चमकते हुए से
दीद्यानः	ज्वलन्	दहकता हुआ
भवति	भवति	होता है
द्रुहम्ऽतरः	द्रोहंकुर्वतां नाशयिता (सा० भा०)	द्रोह करने वालों के नाश करने वाला
परशुः	कठारः	कुल्हाड़ा
न	इव	की न्याईं
द्रुहम्ऽतरः	द्रोहंकुर्वतां नाशयिता	द्रोह करने वालों के नाश करने वाला
वीळु	दृढम्	दृढ़

चित्	अपि	भी
यस्य	यस्य	जिस के,
सम्पृच्छती	सङ्गतौ	संगति में
श्रुवत्	शीर्येत (सा० मा०)	छिन्न भिन्न हो जावे
वनाऽद्भव	वृक्षाणीव (शैलौपः)	वृक्षों की न्याई
यत्	यत्	जो
स्थिरम्	स्थिरम्	स्थिर
{ निःसह- मानः	निश्शेषेणाभि- भवन्	सब को जीतता हुआ
यमते	स्थिराभवति	डट जाता है
न	न	नहीं
अयते	पलायते (उपसर्गलोपः)	पीठ दिखाता है

धन्वऽसहा	धनुषासहतेऽभिव- तीति धन्वसहा धानुष्को योधा	धनुर्धारी योधा
न	न	नहीं
प्रायते	पलायते	पीठ दिखाता है

संस्कृतार्थः ।

स एव खलु (अग्निः) बहु रोचमानेन बलेन ज्वलन् (सन्) द्रोहं कुर्वतां नाशको भवति, कुठार इव द्रोहं कुर्वतां नाशकः (भवति,) यस्य संस्पर्शे दृढमपि यत् स्थिरम् (तदपि) वृक्षाणीव शीर्येत, स निःशेषेणाऽभिभवन् (सन्) स्थिरीभवति, न (च) पलायते, धानुष्को योधा (इव) न पलायते ॥३॥

भाषार्थः ।

सच मुच बहुत प्रदीप्त बल से दहकते हुए वही (अग्नि) द्रोह करने वालों के नाशक हैं, कुल्हाड़े का न्याई द्रोह करने वालों के नाशक ( हैं, ) जिनके स्पर्श से जो दृढ़ और स्थिर भी ( है वह भी ) वृक्षों की न्याई छिन्न भिन्न होजावे, जो सब को जीतते (हुए) डट जाते हैं (और) पीठ नहीं दिखाते, धनुष वाले योधा का (न्याई) पीठ नहीं दिखाते ॥ ३ ॥

दुः	अनु+दुः, अनु- कूलानि भवन्ति (आ० को०)	अनूकूल होजाते हैं
यथा	यथार्थम्	यथार्थ
विदे	जानते	जानने वाले के लिये
तेजिष्ठाभिः	अतिप्रदीप्तैः	अत्यन्त प्रदीप्तों से
अरणिऽभिः	यज्ञीयकाष्ठैः	यज्ञकेयोग्य काष्ठों से
दाष्टि	हविर्ददाति (आ० को०)	हवि देता है
अवसे	रक्षायै	रक्षा के लिये
अग्नये	अग्नये	अग्नि के लिये
दाष्टि	हविर्ददाति	हवि देता है
अवसे	रक्षायै	रक्षा के लिये
प्र	प्र +	-

यः	यः	जो
पुरुषाणि	बहूनि	बहुतों को
गाहते	प्र+गाहते अत्यन्तं प्रविशति	अत्यन्त घुसता है
तच्छत्	खण्डयति	टुकड़े २ करता है
वनाऽद्भुत	वृक्षाणीव	वृक्षों की न्याइं
शीचिषा	ज्वालाया	ज्वाला से
स्थिरा	कठिनानि (शेलोंपः)	कठिनों को
चित्	अपि	भी
अन्ना	अन्नानि (५)	अन्नों को
नि	नि+	-
रिणाति	नि+रिणाति, पृथक्करोति	अलग २ करता है



भोजसा	बलेन	बल से
नि	नि +	-
स्थिराणि	कठिनानि	कठिनों को
चित्	अपि	भी
भोजसा	बलेन	बल से

संस्कृतार्थः ।

अस्मै यथार्थं ज्ञानिने दृढान्यपि अनुकूलानि भवन्ति, योरक्षणाय अत्यन्तं प्रदीप्तैर्यज्ञीयकाण्डैर्हविर्ददाति, (यः) अग्नये रक्षायै हविर्ददाति, यः (अग्निः) ग्रहूनि (वस्तूनि) अत्यन्तं प्रविशति, ज्वालया घना-नीव (च) खण्डयति, स्थिराण्यपि अन्नानि बलेन अत्यन्तं वियोजयति, बलेन स्थिराण्यपि अत्यन्तम् (वियोजयति) ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

इस यथार्थ जाननेवाले के लिये दृढ़ भी घस में होजाते हैं, जो सहायता के लिये अत्यन्त प्रदीप्त यज्ञ-

के काष्ठों से हवि देता है, (जो) अग्नि के लिये रक्षा के निमित्त हवि देता है, जो (अग्नि) बहुत (पदार्थों में) अत्यन्त घुसकर उनको ऐसे काट डालते हैं जैसे ज्वाला से घृक्षों को, (जो) कठिन अन्नों को भी बल से अलग अलग २ कर देते हैं (जो) कठिनों को भी बल से (अलग अलग कर देते) हैं ॥ ४ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः॥१२१२॥८८८८१२८

तमस्य॑ पृ॒क्षमु॑प॒रासु॑धीम॒हि न॒क्तं  
यः सु॒दर्श॑त॒रो दि॒वा त॒रा द प्रा॑युषे दि॒वा-  
त॒रात् । आ॒द॒स्यायु॑र्ग्र॒भण॑वद् वी॒ळु  
श॒र्मन् न॒सू न॒वे । भ॒क्तम॑भ॒क्तम॑वो॒व्य-  
न्तो॑ अ॒जरा॑ अ॒ग्नयो॑व्यन्तो॑ अ॒जराः॑ ॥५॥

तम

तम्

उस को

अस्य	अस्मै (चतुर्थ्यर्थे षष्ठी)	इस के लिये
पृक्षम्	अन्नम् (निघं० २।७)	अन्न को
उपरासु	दिक्षु (निघं० १।८)	दिशाओं में
धीमहि	धारयामः	हम धारणकरते हैं
नक्तम्	रात्रौ	रात्रि में
यः	यः	जो
सदर्शऽतरः	अधिकंसुदर्शनीयः	अधिक सुदर्शनीय
देवाऽतरात्	दिनादपि	दिन से भी
अप्रऽआयुषे	प्रगतमायुर्यस्या- ऽसौ प्रायुः, न- प्रायुरप्रायुस्त स्मै प्राणि- जातायेत्यर्थः	प्राणियों के लिये।

दिवा॑ऽतरात्	दिनादपि	दिन से भी
आत्	अपि च (आ०को०)	और
अस्य	अस्य	इस का
आयुः	जीवनम्	जीवन
ग्रमणा॑ऽवत्	अवलम्बनयोग्यम्	सहारा पकड़ने योग्य
वीळु	दृढम्	दृढ़
शर्म॑	शरणम्	शरण
न	इव	की न्याई
सूनवे॑	पुत्राय	पुत्र के लिये
भक्तम्	अर्पितम्	दिये हुए को
अभक्तम्	अनर्पितम्	न दिये हुए को

अवः	अन्नम् (निघं० २।७)	अन्न को
व्यन्तः	भक्षयन्तः (धीष्वादने)	भक्षण करते हुए
अजराः	जरारहिताः	बुढापे से रहित
अग्नयः	अग्नयः	अग्नियाँ
व्यन्तः	भक्षयन्तः	भक्षण करते हुए
अजराः	जरारहिताः	बुढापे से रहित

संस्कृतार्थः ।

(वयम्) अस्मै (अग्नये) तत् (प्रसिद्धं हविलक्ष-  
णम्) अन्नम् (सर्वासु) दिक्षुधारयामः, यः (अग्निः)  
दिनादपि रात्रौ अधिकं सुदर्शनीयः (अस्ति,) प्राणि-  
जाताय दिनादपि (अधिकं सुदर्शनीयोऽस्ति), अपिच  
अस्य जीवनं 'पुत्राय (पितुः) दृढं शरणमिव' (अस्माभिः)  
अवलम्बनीयम्, जरारहिताः (एते) अग्नयः अर्पितम्  
अनर्पितम् (च) अन्नं भक्षयन्तः (वर्तन्ते), (एते) जरा  
रहिताः भक्षयन्तः (वर्तन्ते) ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हम इस (अग्नि) के लिये उस (प्रसिद्ध हविके) अन्नको (सब) दिशाओं में धारण करते हैं, जो (अग्नि) रात्रि में दिनसे भी अधिक दर्शनीय (हैं,) प्राणियों के लिये दिनसे भी (अधिक दर्शनीय हैं) और इसका जीवन (हमारे लिये) सहारा पकड़ने योग्य (है) जैसे पुत्रके लिये (पिताकी) दृढ़ शरण, जरासे रहित (ये) अग्नियाँ दिये हुए (और) न दिये हुए अन्नको खाती (रहती हैं) जरा से रहित ये खाती (रहती हैं) ॥५॥

अग्निर्देवता, अतिधृतिश्छन्दः । १२।१२।७।८।९२।७।७

सहि॒श॒धो॒न॒मा॒रु॒त॒तु॒वि॒ष्व॒णि॒र॒ग्न-  
स्व॒ती॒षू॒र्व॒रा॒स्वि॒ष्ट॒नि॒ रा॒र्त॒ना॒स्वि॒-  
ष्ट॒निः । आ॒द॒ह॒व्या॒न्या॒द॒दि॒ र्य॒ज्ञ॒स्य॒  
के॒तु॒र॒र्ह॒णा । अ॒ध॒स्मा॒स्य॒ह॒र्ष॒तो॒हृषी॒-  
व॒तो॒ वि॒प्र॒वे॒जु॒षन्त॒पन्था॑ नरः॒श॒मे॒न  
पन्था॑म् ॥ ६ ॥

सः	सः	वह
हि	खलु	सच मुच
शर्धः	गणः	गण
न	इव	की न्याई
मारुतम्	मरुत्सम्बन्धी	मरुत संबंधी
तुविऽस्वनिः	प्रभूतशब्दः	बहुत शब्द करने वाला
अप्नस्वतीषु	कर्मयुक्तासु (अप्न इति कर्मनाम निधं०२।१)	कर्म वालियों में
उर्वरासु	शस्यभूमिषु	खेती की भूमियों में
दृष्टनिः	यष्टव्यः (यजेरौणादिकोनिक्- प्रत्ययस्तुगागमश्च)	पूजा करने योग्य
आर्तनासु	अनुर्वरासुभूमिषु	वंजर भूमियों में

दृष्टनिः	यष्टव्यः	पूजा करने योग्य
आदत्	भक्षयति (लक्ष्ये लङ्)	खाता है
हव्यानि	हव्यानि	हवियों को
आऽददिः	ग्रहीता	लेने वाला
यज्ञस्य	यज्ञस्य	यज्ञ का
केतुः	ध्वजरूपः	ध्वजा रूप
अर्हणा	योग्यतया	योग्यता से
अध	अतः	इस लिये
स्म	(पूरणः)	-
अस्य	अस्य	इस के
हर्षतः	हर्षयुतः (लक्ष्ये)	हर्ष देने वाले के



हृषोवतः	हर्षयुक्तस्य (सा० मा०)	हर्षित के
विश्वे	सर्वे	सब
जुषन्त	सेवन्ताम् (लोडयें लड्यडभावः)	सेवन करें
पन्थाम्	मार्गम्	रस्ते को
नरः	मनुष्याः	मनुष्य
शुभे	शुभाऽर्थम्	शुभ के लिये
न	इव	जैसे
पन्थाम्	मार्गम्	रस्ते को

संस्कृतार्थः ।

मारुतोगण इव प्रभूतध्वनियुक्तः स खलु कर्म-  
युक्तासु शस्यभूमिषु यण्टव्यः, अनुर्वरासु [च] यण्टव्यः  
(अस्ति,) योग्यतया यज्ञस्य प्रज्ञापकः (सः) हव्यानि  
गृहीत्वा भक्षयति, अतो हृष्यतो हर्षयतः (च) अस्य मार्गं  
सर्वे जनाः सेवन्ताम्, यथा शुभार्थं (मार्गम् सेवन्ते तथा-  
ऽस्य ) मार्गम् (सेवन्ताम्) ॥ ६ ॥

। भाषार्थः।

सच मुच मरुद्गण की न्याईं बहुत ध्वनिसे युक्त वह कर्म वाले खेतों में पूजने योग्य, (और) वंजर भूमियों में पूजने योग्य (हैं,) योग्यता के कारण यज्ञ के ध्वजरूप वह (हमारी) हवियों को ग्रहण करके खाते हैं, इसलिये (स्वयं) हर्षित (और भक्त को) हर्ष देने वाले इस (अग्नि) के मार्ग को सच मनुष्य सेवन करें, जैसे शुभ के लिये (मार्ग को सेवन करते हैं) वैसे इसके मार्ग को (सेवन करें) ॥ ६ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिइच्छन्दः।१२।१२।८।७।८।१२।८

द्वि॒ताय॑ दी॒ की॒स्ता॑ सो॒ अ॒भि॒द्य॑ वो  
नम॑स्यन्त॒ उप॑वोचन्त॒ भृ॑गवो म॒ष्टन॑-  
न्तो॒ दा॒शा॒भृ॑गवः । अ॒ग्नि॒रो॒शे॒व॒सूनां॑  
शुचि॒र्यो॒ ध॒र्णि॒रे॒षाम् । प्रि॒या अ॒पि॒धी॑ व॒-  
नि॒षी॒ष्ट॒मे॒धिर॑ आव॒ नि॒षी॒ष्ट॒मे॒धिरः॑  
॥७॥

द्वि॒ता	द्वि॒धा (निघं० धार)	दो॑ प्रकार
यत्	यदा (विमर्केर्लुक्)	जब
इ॒म्	ए॒नम्	इस को
की॒स्तासः॑	की॒र्तनं॑ कुर्वन्तः	की॒र्तन॑ करते हुए
अ॒भि॒ऽद्यवः॑	द्यु॒लोका॑भिमुखाः	द्यु॒लोक॑ की ओर मुख वाले
न॒म॒स्यन्तः॑	नम॑स्कुर्वन्तः	नम॑स्कार करते हुए
उ॒प॒वोच॑न्त	उ॒पेत्य॑ स्तुतवन्तः	समीप॑ जाकर स्तुति॑ की
भृ॒गवः॑	भृ॒गवः॑	भृ॒गुवं॑शियों ने
म॒थ॒नन्तः॑	म॒थ॒नन्तः॑ (म॒न्य॒लोड॒ने, क॑यादिकः)	मथ॑न करते हुए
दा॒शा	(ह॒विः) द॑दानाः (दा॒श्र॒ह्म॒ने, वि॒मले॒रा॒त्वम्)	(ह॒वि को) दे॑ते हुए

भृगवः	भृगवः	भृगुवंशी
अग्निः	अग्निः	अग्नि
ईशे	ईश्वरोऽस्ति (‘लोपस्तः’-इतितलोपः)	स्वामी है
वसूनाम्	धनानाम्	धनों का
शुचिः	स्वच्छः	उज्ज्वल
यः	यः	जो
धारिः	धारयिता	धारण करने वाला
एषाम्	एषाम्	इन के
प्रियान्	प्रियान्	प्यारों को
अपिऽधीन्	तृप्तिपर्यन्तं दत्तान् (आ० फो०)	तृप्तिपर्यंत दिये हुओं को

वनिषीष्ट	स्वीकृतवान्	स्वीकार किया
मेधिरः	मेधावान् (अस्त्यर्थे इरष्)	बुद्धिमान ने
आ	आ+	—
वनिषीष्ट	आ+वनिषीष्ट, पूर्णतया स्वीकृ- तवान्	पूर्णता से स्वीकार किया
मेधिरः	मेधावान्	बुद्धिमान ने

संस्कृतार्थः ।

यदाद्युलोकाभिमुखाः भृगवः कीर्तनं कुर्वन्तो नम-  
स्कुर्वन्तः (च) एनम् (अग्निम्) उपेत्य द्विधास्तुतवन्तः,  
मन्थनं कुर्वन्तः हविर्ददामाः भृगवः (स्तुतवन्तः,) यः  
अग्निः शुचिः, एषांधनानां धारयिता, ईश्वरः (च)  
अस्ति (तदा) मेधावी (अग्निः) तृप्तिपथ्यं दत्तान्  
प्रियान् (पदार्थान्) स्वीकृतवान्, मेधावी (अग्निः)  
पूर्णतया स्वीकृतवान् ॥७॥

भाषार्थः ।

जब आकाशकी ओर मुख किये हुए भृगुवंशियों

ने कीर्त्तन करते हुए (और) नमस्कार करते हुए इस (अग्नि) के पास जाकर दो प्रकार से, स्तुतिकी, मन्थन करते हुए (और) हवि देते हुए (स्तुति की,) जो अग्नि पवित्र, इन धनों के धारण करने वाले (और) स्वामी हैं, (तब) बुद्धिमान् (अग्नि) ने तृप्ति पर्यन्त दिये हुए (पदार्थों) को स्वीकार किया, बुद्धिमान् (अग्नि) ने पूर्णता से स्वीकार किया ॥ ७ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्रुतः । १२।११।८।७।८।१२।८

वि॒भ्वा॑सा॒त्वावि॒शाप॑तिं ह॒वाम॑हे  
स॒र्वासा॑स॒मानं॑दम्प॒तिंभ॑जे स॒त्य-  
गि॒र्वाह॑संभुजे । अति॑थिं॒मानु॑षाणां  
पि॒तुर्न॑यस्या॒सया॑ । अ॒मीच॑वि॒भ्वे  
अ॒मृता॑स॒त्वाव॑यो ह॒व्यादे॒वेष्वा॑वयः  
॥ ८ ॥

वि॒प्रवा॑साम्	सर्वा॑साम्	सब के
त्वा	त्वाम्	तुझ को
वि॒शाम्	प्रजानाम्	प्रजाओं के
पति॑म्	स्वामिनम्	स्वामी को
ह्वाम॑हे	आह्वयामः	हम बुलाते हैं
सर्वा॑साम्	सर्वा॑साम्	सब के
स॒मा॒नम्	समानम्	समान को
दम्ऽपति॑म्	गृहस्य पालकम्	घर की रक्षा करने वाले को
भु॒जे	धारणार्थम् (जा० को०)	धारण करने के लिये
स॒त्यऽगि॑-	सत्याऽऽवाहनस्य	सच्चे आवाहन के
वा॑हसम्	बोढारम्	लेजाने वाले को
भु॒जे	धारणार्थम्	धारण करने के लिये

अतिथिम्	अतिथिम्	अतिथिर्को
मानुषाणाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के
पितुः	पितुः	पिता के
न	इव	की न्याईं
यस्य	यस्य	जिस के
आसया	मुखेन	मुख से
अमी०	अमी	वे
च	च	और
विश्वे	सर्वे	सब
अमृतासः	मरणरहिताः (असोऽसुणागमः)	मरण से रहित
आ	खलु	सच मुच



वयः	वलम्	वल को
हव्या	हव्यानि (शेर्लोपः)	हवियाँ
देवेषु	देवेषु	देवताओं में
आ	च (भा० को०)	और
वयः	वलम्	वल

संस्कृतार्थः ।

(हे अग्ने ! वयम्) सर्वासां प्रजानां स्वामिनं,  
सर्वासां समानम् (इष्टदेवम्) गृहस्यपालकम् (च) त्वां  
धारणार्थमाह्वयामः, सत्याऽऽवाहनस्य वोढारम् (त्वाम्)  
धारणार्थम् (आह्वयामः,) मनुष्याणामतिथिम् (त्वा-  
माह्वयामः) पितुरिव यस्य (तव) मुखेन अमी (मर्त्याः)  
सर्वे अमर्त्याः (च) वलं खलु (प्राप्नुवन्ति,) देवेषु ह-  
व्यानि वलं च (प्राप्नोति) ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(हे अग्नि ! ) हम सब प्रजाओं के स्वामी, सब  
के समान (इष्टदेव) (और) घर के पालक आपको

धारण करने के लिये बुलाते हैं, सच्चे आवाहन के  
ले जाने वाले (आप)को धारण करने के लिये (बुलाते  
हैं) मनुष्यों के अतिथि(आप)को (बुलाते हैं) पिता की  
न्याई जिस (आप) के मुख से ये मर्त्य (और) सब  
अमर्त्य बल को प्राप्त करते हैं [और] देवताओं में  
हवियाँ और बल (पहुँचता है) ॥ ९ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिद्वन्द्वः ११११२।८।८।८।१२।८

त्वमग्ने॑ सह॒सा॒सह॑न्तमः शु॒ष्मि-  
न्त॑मो जायसे दे॒वता॑ तये रु॒यिर्न॑ दे॒वता॑-  
तये । शु॒ष्मिन्त॑मो हिते॒मदी॑ द्यु॒ष्मिन्-  
न्त॑म॒उ॒त॒क्रतुः । अध॑स्माते॒परि॑-  
चरन्त्य॒जर शु॒ष्टी॒वानो॒नाज॑र । ९ ।

त्वम	त्वम्	तू
------	-------	----

अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि !
सहसा	बलेन	बल से
सहन्ऽतमः	अतिशयेनाऽभि- भविता (सहेरीणादिकः कनिन् )	खूब दवानेवाला
{ शुष्मिन् ऽतमः	बलवत्तमः	सब से अधिक बल वाला
जायसे	प्रादुर्भवसि	प्रकट होते हो
देवऽतातये	देवान् सेवितुम् (भा० को०)	देवताओं की सेवा करने के लिये
रयिः	धनम्	धन
न	इव	की न्याइँ
देवऽतातये	देवान् सेवितुम्	देवताओं की सेवा करने के लिये

{ शुष्मिन् ऽतमः	बलवत्तमः	तब से अधिक बल वाला
हि	खलु	सच मुच
ते	तव	तेरा
मदः	मदः	मद
{ द्युष्मिन् ऽतमः	यशस्वितमम्	तबसे अधिक, यश वाला
उत	च	और
क्रातुः	ज्ञानम्	ज्ञान
अध	अतः	इस लिये
स्म	(पूरणः)	-
ते	त्वाम् (द्वितीयार्थे पठ्यते)	तुझ को
परि	परि+	-

चरन्ति	परि+चरन्ति	सेवा करते हैं
अजर	हे जरारहित !	हे बुढ़ापे से रहित
श्रुष्टीऽवानः	शीघ्रतायुक्ताः (श्रुष्टीतिक्षिप्रनाम निघं० ४३ तस्मात् 'छन्दसीवनिपौ' इतिघनिप् प्रत्ययः)	शीघ्रकारी
न	इव	की न्याईं
अजर	हे जरारहित !	हे बुढ़ापे से रहित

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! बलेनाऽत्यन्तमभिभविता बलवत्तमः  
[च] त्वं देवान् सेवितुं प्रादुर्भवसि, धनमिव देवान्  
सेवितम् [प्रादुर्भवसि] तव मदो बलवत्तमो ज्ञानं च  
यशस्वितमं खलु, अतौ हे अजर ! [मनुष्याः] त्वां  
परिचरन्ति, हे जरारहित ! शीघ्रतायुक्ताः [परिचर-  
काः] इव (परिचरन्ति) ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! बल के कारण खूब देवाने वाले

(और) सब से अधिक बलवान आप देवताओं की सेवा के लिये उत्पन्न होते हो, धन की न्याई देवताओं की सेवा के लिये (उत्पन्न होते हो) सचमुच आपका मद सब से अधिक बलवाला (और) ज्ञान, सब से अधिक यशवाला (है,) इसलिये हे अजर ! मनुष्य आपकी सेवा करते हैं, हे जरारहित ! शीघ्रकारी (नौकरों) की न्याई (सेवा करते हैं) ॥ ९ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्लोकः । ११।११।८।७।८।११।७

प्र॒वो॒म॒हे॒स॒ह॒सा॒स॒ह॒स्व॒त॒ उ॒ष॒वु॒-  
धे॒प॒शु॒षे॒ना॒ग्न॒ये॒ स्तो॒मो॒व॒भू॒त्व॒ग्न॒ये॒ ।  
प्र॒ति॒य॒दो॒ह॒वि॒ष्मा॒न् वि॒प्र॒वा॒सु॒क्षा॒सु  
जो॒गु॒वे । अ॒ग्ने॒रे॒भो॒न॒ज॒र॒त॒क्व॒पू॒णां  
ज॒र्णि॒हो॒त॒क्व॒पू॒णाम् ॥ १० ॥

प्र	प्र-(भवतु) उद्ग-	उठे
वः	गच्छतु युष्माकम्	आप का
महे	पूज्याय (किप्)	पूज्य के लिये
सहसा	बलेन	बल से
सहस्वते	अभिभावयित्रे	जीतने वाले के लिये
उषःऽबुधे	उषः काले प्रबुद्धाय	उषा काल में जागे हुए के लिये
पशुऽसे	पशुप्रदात्रे (भा० को०)	पशु देने वाले के लिये
न	इव	की न्याई
अग्नये	अग्नये	अग्नि के लिये
स्तोमः	स्तोत्रम्	स्तोत्र .
वभूतु	प्र+वभूतु, उद्ग- गच्छतु	उठे

अ॒ग्नये॑	अ॒ग्नये	अ॒ग्नि के लिये
प्र॒ति॑	अ॒भिलक्ष्य॑	लक्ष रख कर
यत्	यत्	जो
इ॒म्	ए॒नम्	इस को
ह॒विष्मा॑न्	ह॒विर्यु॑क्तः	हविस्से युक्त
वि॒श्वा॑सु	स॒र्वा॑सु	सब में
क्ष॒ासु॑	भूमि॑भागेषु (क्षेति भूमि नाम निघं० १।१)	भूमि॑के भागों में
जो॒गुवे॑	अत्यन्तं॑ शब्दयति (गुडशब्दे यङ्लुगन्ता दस्माल्लङर्थे लिट्छु घडादेशः)	खूब॑ पुकारता है
अ॒ग्रे॑	अ॒ग्रे	आगे
रे॒भः॑	व॒न्दी (सा० भा०)	भाट



त	यथा	जैसे
प्रणाम्	स्तौति (निघं० ३।१४)	स्तुति करता है
ः	महताम् (आ०को०)	बड़ों के
ता	धावन्	दौड़ता हुआ
षणाम्	आह्वाता	पुकारने वाला
	महताम्	बड़ों के

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः ! ) युष्मदीया (वाणी) पूज्याय, बलेना-  
भावयित्रे, उषःकाले प्रवृद्धाय, पशुप्रदात्र इव  
(कारिणेच) अग्नये उद्गच्छतु, स्तोत्रम् अग्नये  
गच्छतु, यदेनमभिलक्ष्य सर्वेषु भूमिभागेषु हवि-  
रः (यजमानः) अत्यन्तं शब्दयति यथा मह-  
मग्रे वन्दीस्तौति (यथा) महताम् (अग्रे) आह्वाता  
वन् (गच्छति) ॥ १० ॥

मापार्थः ।

(हे आर्य्य लोगो!) आपकी (वाणी) पूज्य; बल से

जीतने वाले, प्रातःकाल में जागने वाले (और) पशु देने वाले की न्याईं (उपकारी) अग्नि के लिये उठे, स्तोत्र अग्नि के लिये उठे, क्योंकि सब स्थानों में इस (अग्नि) को लक्ष रख कर हवि से, युक्त (यजमान) खूब पुकारता है, जैसे बड़े अन्नदमियों के आगे भाट स्तुति करता है (जसे) बड़ों के (आगे) पुकारने वाला दौड़ता हुआ [चलता है] ॥ १० ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ११२।१२।८।८।१२।८

स॒नो॒ने॒दि॒ष्टं॒द॒दृ॒शान॒आ॒भ॒रा॒ग्ने॑  
दे॒वे॒भिः॒स॒च॒नाः॒सु॒चे॒तु॒ना॑ म॒हो॒रा॒यः  
सु॒चे॒तु॒ना॑।म॒हि॒श॒वि॒ष्ठ॒न॒स्त्व॒धि॒संच॑-  
क्षे॒भु॒जे॒अ॒स्यै॑ । म॒हि॒स्त्वो॒तृ॒भ्यो॑म॒घव॑-  
न्त॒सु॒वी॒र्यं॒ म॒थी॒रु॒ग्नो॒न॒श॒व॒सा ॥ ११ ॥

सः	सः	वह
नः	अस्माकम्	हमारे
नेदिष्ठम्	अतिसमीपम्	अत्यन्त समीप
दृष्टानः	दृश्यमानः	दीखता हुआ
आ	आ +	-
भर	आ + भर, आहर (दृश्य मत्वम्)	लाओ
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
देवेभिः	देवैः	देवताओं के साथ
सऽचनाः	सहचरः	सहचारी
सुऽचेतुना	हितबुद्ध्या (मौणादिकउपरायः)	हित बुद्धि से
महः	महान्ति	महानों को

रायः	धनानि	धनों को
सुऽचेतुना	हितबुद्ध्या	हितबुद्धि से
महि	महद्वयथास्या- सथा (क्रियाविशेषणम्)	महान
प्रविष्ठ	हे चलवत्तम!	हे सब से अधि- बल वाले
नः	अस्मान्	हम को
कुधि	कुरु	करो
सम्ऽचक्षे	सम्यग् द्रष्टुम् (वष्टिरीक्षण कर्मा नियं० १।११)	खूब देखने के निमित्त
भुजे	भोगाय	भोग के लिये
अस्यै	अस्याः (पठ्यते चतुर्थी)	इस के
महि	महत्	महान को

स्तोतृभ्यः	स्तोतृभ्यः	स्तोताओं के लिये
मघवन्	हे धनवन्!	हे धन वाले
सुवीर्यम्	शौर्यम्	वीरता को
मथीः	मथ (लोड्यैलड्यडमावः)	मथो
भयः	भयङ्करः	भयानक
न	इव	की न्याई
श्रवसा	बलेन	बल से

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! देवेभिः सहचरणशीलः सः [त्वम्]  
 अस्मदतिसमीपे दृश्यमानः (सन्) हितवुद्ध्या  
 (धनानि)आहर, हितवुद्ध्या महान्ति धनानि(आहार)  
 हे बलवत्तम ! अस्मानस्यै [ पृथिव्यै ] सम्यग्द्रष्टुं  
 भोगाय (च) महतःकुरु, हे धनवन् ! बलेन भयङ्करः  
 इव (त्वम्) स्तोतृभ्यो महच्छौर्यं मथ ॥ ११ ॥

। मापार्थः ।

हे अग्नि ! देवताओं के साथ रहने वाले वह (आप) हमारे अत्यन्त समीप दीखते हुए हित बुद्धि से (धनों को) लाकर दें, हित बुद्धि से बड़े २ धनों को (लाकर दें,) हे सबसे अधिक चल वाले ! इस (पृथिवी) को खूब देखने के लिये (और) भोगने के लिये हमको (आप) महान करें, हे धनवाले ! चल से भयंकर की न्याईं आप स्तुति करने वालों के लिये बड़ी वीरता को मर्थें ॥ ११ ॥

इति सप्तविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

# ऋ०मं०१ सू०१२८।

अग्निर्देवता परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः—

१-८ । एतत्सूक्तं पृष्ठयस्य पठेऽहनि आज्यशस्त्रत्वेन विनियुक्तम्  
(आ० ८।१।९)

## सूक्त का भाषार्थ ।

यह अत्यन्त पूज्यअग्नि भक्तोंके व्रत को निभानेके लिये मनुष्य-  
द्वारा अरणि से उत्पन्न हुए हैं, अपने व्रत को निभाने के लिये  
उत्पन्न हुए हैं, जो इनकी मित्रता चाहता है उसके लिये इन के  
चारों ओर कान हैं, जो यश की इच्छा करता है उस के लिये  
यह धनरूप हैं, यह अयाधित होता बन कर पूजा के स्थान में  
बैठने हैं, चारों ओर से घिरे हुए पूजा के स्थान में बैठते हैं । १।  
यह के साथक उस अग्नि की हम दैवी नियम के अनुकूल चलने  
से, हवियों से और नमस्कारों से टहल करते हैं, हवि लेकर देव-  
ताओं की सेवा करने से हम अग्नि की टहल करते हैं, यह उनकी  
कैसी अद्भुत कृपा है कि हमारी हवियों की भेट उन की जरा-  
बस्था को रोकती है, इसी देव को मातरिद्वा वायु दूर से मनु के  
लिये लाए थे, दूर से मनु के लिये चमकाया था\* । २ । अग्निरूप  
वीर्यवान् घैल बार बार निगलता हुआ और धाड़ता हुआ अपनी  
गति से पृथिवी के सब स्थानों में फैल जाता है, वीर्य को धारण

---

\* वायु द्वारा वृक्षों की परस्पर रगड़ से पर्वतों और वनों में  
अग्नि को देख सब से पहले मनु अग्नि को ग्राम में लाए थे, अगले  
मंत्र में स्पष्ट वन की अग्नि का वर्णन है ।

करता हुआ और धाड़ता हुआ फैल जाता है, सौ नेत्रों से देखता हुआ  
 यनों में दौड़ता हुआ नीचे मैदानों को और ऊँचे पर्वतों को अपना घर  
 बनाता है । ३ । अत्यन्त बुद्धिमान घर घर के पुरोहित वह अग्निदेव  
 कुटिलतारहित यज्ञ की ओर ध्यानसे दृष्टि करते हैं, वह बुद्धिसे यज्ञ  
 की ओर दृष्टि करते हैं, जो उनसे प्रार्थना करता है उस को वह बुद्धि  
 द्वारा सब जड़ चेतन का ज्ञान कराते हैं, इसीलिये यह धी खाने वाले  
 भतिथि उत्पन्न हुए हैं, हवियों के लेजाने वाले बुद्धिमान उत्पन्न हुए  
 हैं । ४ । जब हम प्रेमपूर्वक यज्ञ करके खाने योग्य हवियों द्वारा अग्नि-  
 का बल बढ़ाते हैं, जैसे प्रचण्ड वायु यनकी अग्नि का बल बढ़ाते हैं और  
 जैसे भोजन द्वारा भूरे का बल बढ़ाते हैं, तब वह सब सुख दान को  
 प्रेरण करते हैं और धनों के बल द्वारा कुटिलता करने वाले के पाप-  
 से हमारी रक्षा करते हैं, कुटिलता करने वाले के कुकर्म से और झूठे  
 कलंक से हमारी रक्षा करते हैं । ५ । महान अग्निदेव जो विश्वरूप हैं  
 और सबके स्वामी हैं, अपने दहिने हाथ में धनको लिये हुए हैं और  
 परोपकारी की न्याईं मुक्त हस्त से छोड़ते हैं, यज्ञ की कामना करने  
 वाले की न्याईं खुले हाथों से छोड़ते हैं, सब प्रार्थना करने वालों के  
 लिये देवताओं में हवि लेजाते हैं, सब शुभ कर्म करने वालों के  
 लिये यथेच्छ धन देते हैं, वह उनके लिये धनके द्वारों को खोल-  
 देते हैं । ६ । अग्नि देव मनुष्यों की मंडली में जयशील राजा की  
 न्याईं अत्यन्त सुखदायक होकर यज्ञों के लिये स्थापन किये गए हैं,  
 यज्ञों में प्रजा के प्यारे राजा की न्याईं स्थापन किये गए हैं, जो मनुष्य  
 स्तुति के साथ देवताओं को हवि देते हैं अग्नि उन हवियों के

---

१\* जो यज्ञ लोक दिखावे के लिये वा किसी कुटिल मनोरथ  
 से किया जाता है अग्नि उस की ओर दृष्टि नहीं करते, वह यज्ञ  
 देवताओं को नहीं पहुँचता और निष्फल होता है ।



स्वामी हैं, वह हमें वरुणके दण्ड से बचाएँगे, उस महान देव के दण्ड से बचाएँगे । ७ । धन को धारण करने वाले, सबके ईश्वर, अत्यन्त चेत वाले, देवताओं के बुलाने वाले प्यारे अग्नि को मनुष्य पूजते हैं और उनके पास पहुँचे हैं, हविर्यों को लेजाने वाले के पास पहुँचे हैं, सबके जीवन रूप, सम्पूर्ण धर्मों के स्वामी, पूजनीय, बुद्धिमान, होता, और सुन्दर अग्नि को देवता भी रक्षा के लिये प्राप्त हुए हैं, मनोहर अग्नि को धन की कामना वाले देवता भी स्तुतियों द्वारा प्राप्त हुए हैं ॥ ८ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिइच्छन्दः-१३।१२।८।८।१२।८

अयं जायत मनुषो धरो मणि हो-  
ताय जिष्ठ उशिजा मनुव्रत मग्निः  
स्वमनुव्रतम् । विश्वश्रुष्टिः सखीय-  
तेरयिरिव श्रवस्यते । अदब्धो होता  
निषददिल्लस्पदे परिवीत इल्लस्पदे । १

अयम्

अयम्

यह

जायत	अजायत (भडमावः)	उत्पन्न हुआ है
मनुषः	मनुष्यात् (मनेर्बाहुलकादुसि- प्रत्ययः)	मनुष्य से
धरीमणि	धारके	धारणकरनेवाले में
होता	होता	होता
यजिष्ठः	पूज्यतमः	सबसे अधिक पूजने योग्य
उग्निजाम्	भक्तानाम् (वशकान्तौ)	भ ९
अनु	अनु	अनुकूल
व्रतम्	व्रतम्	नियम को
अग्निः	अग्निः	अग्नि
स्वम्	निजम्	अपने को

अनु	अनु	अनुकल
व्रतम्	व्रतम्	नियम को
वेप्रवऽश्रुष्टिः	सर्वत्र कर्णयुक्तः	सब ओर कानों वाला
सखिऽयते	सखित्वमिच्छते	मित्रता की इच्छा करते हुए के लिये
रयिऽद्व	धनमिव	धन की न्याइ
अवस्यते	यशइच्छते	यश की इच्छा करते हुए के लिये
अदब्धः	अहिंसितः	न हिंसा किया हुआ
हीतः	होता	होता
नि	नि+	-
सदत्	नि+सदत्, निषी- दति (बढ़ये लड़क डभावः)	बैठता है
दूळः	पूजायाः (किप्)	पूजा के
पदे	स्थाने	स्थानं मं

परिऽवीतः	परिगतः (धीगतौ)	घिरा हुआ
इळः	पूजायाः	पूजा के
पदे	स्थाने	स्थान में

संस्कृतार्थः ।

अयं होता पूज्यतमः (चाऽग्निः) धारके (अर-  
णिद्वये) भक्तानां व्रतानुकूलं मनुष्यादुत्पन्नोऽभूत्,  
निजव्रतानुकूलम् (उत्पन्नोऽभूत्) (अयम्) मित्रतां  
कामयमानाय सर्वत्रकर्णयुक्तः, यशःकामयमानाय  
(च) धनमिव (अस्ति) (अयम्) अहिंसितो होता  
पूजायाः स्थाने निषीदति, पूजायाःस्थाने परिवृतः  
(निषीदति) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

यह होता (और) अत्यन्त पूज्य (अग्नि) अरणियों  
में भक्तों के नियम के अनुकूल मनुष्य से (उत्पन्न हुए  
हैं) अपने नियम के अनुकूल (उत्पन्न हुए हैं) (यह)  
मित्रता की कामना करने वाले के लिये सब ओर  
कानों वाले (हैं) (और) यश की कामना करने वाले  
के लिये धन की न्याई (हैं) (यह) न पीड़ित होने

वाले होता ( बनकर ) पूजा के स्थान में बैठते हैं, चारों ओर से घिरे हुए पूजा के स्थान में ( बैठते हैं ) ॥ १ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२

तं यज्ञसाधमपि वातयामस्यृतस्य

पथानमसाहविष्मता देवताताहवि

ष्मता । स न ऊर्जामपाभृत्य याक्व-

पानजूर्यति । यं मातरि प्रवामनवे

परावतो देवं भाः परावतः । २ ।

तम्

तम्

उस को

यज्ञसाधम्

यज्ञस्य साधकम्  
( कियण् )

यज्ञ के सिद्ध करने  
वाले को

अपि

अपि +

-

वा॒त॒या॒म॒सि॒	अपि+वा॒त॒या॒म॒सि॒ उपेत्य शुश्रूषा- महे (वा॒त॒से॒वने, घौ॒रा॒दि॒कः म॒स॒इ॒का॒रा॒ग॒मः)	हम समीप से सेवा करते हैं
ऋ॒त॒स्य॑	ऋ॒त॒स्य॑	ऋ॒त॒ के
प॒था॑	मा॒र्गे॒ण॑	मा॒र्ग॒ से
न॒म॒सा॑	न॒म॒स्का॒रे॒ण॑	न॒म॒स्का॒र॒ से
ह॒वि॒ष्म॒ता॑	ह॒वि॒र्यु॒क्ते॒न॑	ह॒वि॒ वा॒ली॒ से
दे॒व॒ता॒ता॑	दे॒वा॒नां॑ प॒रि॒च॒र॒णे॒न॑ (वि॒म॒के॒रा॒त्व॒म॑)	दे॒व॒ता॒ओं की सेवा से
ह॒वि॒ष्म॒ता॑	ह॒वि॒र्यु॒क्ते॒न॑	ह॒वि॒ वा॒ली॒ से
सः॑	सः॑	वह
नः॑	अ॒स्मा॒क॒म्	ह॒मा॒रे
ऊ॒र्जा॒म्	(ह॒वी॒रू॒पा॒णा॒म्) अ॒न्ना॒ना॒म्	(ह॒वी॒रू॒प) अ॒न्नो॒ं के

उपऽआभृति	उपाहरणे (उपाऽऽङ्पसृष्टाद् हरतेःक्तिन्, हस्य भत्वं सुपामिति सप्तम्यालुक्)	भेट करने में
अया	अनया (वर्णलोपश्छान्दसः)	इस से
कृपा	कृपया (सुपामितितृतीयायालुक्)	कृपा से
न	न	नहीं
जूर्यति	जीर्णो भवति	जीर्ण होता है
यम्	यम्	जिस को
मातरिश्वा	मातरिश्वा	मातरिश्वा
मनवे	मनवे	मनु के लिये
पराऽवतः	दूरात् (निघं०३२६)	दूर से
देवम्	देवम्	देव को

भाः०	भापितवान्	चमकाया
पराऽवतः	दूरात्	दूर से

संस्कृतार्थः ।

( वयम् ) तं यज्ञसाधकम् ( अग्निम् ) ऋतस्य मार्गेण हविर्युक्तेन नमस्कारेण ( च ) उपेत्य शुश्रूषामहे, हविर्युक्तया देवानां सेवया ( शुश्रूषामहे, ) सोऽस्मदीयानाम् ( हवीरूपाणाम् ) अन्नानामुपहारे अनया कृपया जीर्णं न भवति, यं देवं मातरिश्वा मनवे दूरात् ( आ-हृतवान् ) ( मनत्रे ) दूराद् भापितवान् ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हम यज्ञके सिद्ध करने वाले उस ( अग्नि ) को ऋतके मार्ग से ( और ) हवि से युक्त नमस्कार से पास जाकर शुश्रूषा करते हैं, हवि को लेकर देवताओं की सेवा द्वारा ( शुश्रूषा करने हैं, ) वह हमारे ( हविरूप ) अन्नों की भेट देने पर इस ( अद्भुत ) कृपा से जीर्ण नहीं होते, जिस देव को मनु के लिये मातरिश्वा दूर से ( लाए, ) ( मनु के लिये ) दूर से चमकाया ॥ २ ॥



क्र०सं० ७३-७४ अङ्कयोः शुद्धयशुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्	पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३२९६	१६	सुनो	सुनो	३३६१	४	प्रति	प्रति
३३०१	१२	(देवा) (देवैः)		३३६३	७	रेय	रेयु
३३०३	१६	(चतुर्थे) (चतुर्थ्यर्थे)		३३६४	१७	घता	घती
३३०९	३	एते	एते	३३६५	२	युपी-	युपी-
३३११	१७	(पर्व) (पूर्व)		३३६६	५	पूर्वे	पूर्वे
३३१३	५	धौत्	धौत्	३३६७	१८	का	की
३३१७	८	यह	ये	३३६८	१०	को	मदी
३३१९	७	एनम्	एनम्	३३६९	१२	पार	
३३३०	५	(दृश्यति) (दृश्यति)		३३७४	७	स्वस्	स्वस्
३३३१	१४	नय	नयु	"	११	लङ्)	लङ्)
३३३२	१६	शुशु	शुशु	३३७२	१०	रेघव	रेघवु
३३३८	१२	नम,	नम्,	"	११	सन्ते	सन्ते
३३४९	१५	मत्	मत्	"	१२	यन्ता	यन्ती
३३५४	१८	प्रकट	प्रकटै	३३८२	१०	ययतिः	ययति
३३५६	९	देयता ने	देयता	"	१२	जोडता	जोडती
"	१३	न	नु	३३८३	५	मनम्	मनम्
३३५७	११	विस्ता	विस्ती	३३८४	१०	पितु	पितु
३३५८	१२	नाश	नाशन	३३९०	२०	हाकर	होकर
३३६०	१५	पुर	पुर				

अंक ७७-७८]

[ कार्तिक १९६९ ]

# ऋग्वेद संहिता

## (वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद  
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर  
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री  
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने  
सम्पादन किया ।

लाहौर

पञ्जाब एकादमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर लाला  
लालमन के अधिकार से छपा ।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २ )

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥ )

७८ अंकों का मूल्य १४॥ )

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

एवे॑नस॒द्यःप॒ठ्ये॑ति॒पा॒र्थि॒वंमु॒हुर्गी-

रेतो॑हृष॒भःक॑नि॒क्रद॒ दध॒द्रेतः॒कनि॑क्र-

दत् । श॒तंच॒क्षा॑णोअ॒क्षभि॑ दे॒वोव॑नेषु

तुर्व॑णिः । स॒दोद॒धान॒उ॒परे॑षु॒सानु॑ष्व-

ग्निःप॒रेषु॑सानु॒षु ॥ ३ ॥

एवे॑न

गमनेन

गति से

स॒द्यः

सद्यः

तत्काल

परि॑

परि+

-

ए॒ति

पार + एति,<sup>१</sup>  
व्याप्नोति

फैल जाता है

पा॒र्थि॒वम्

पृथिवीसम्यन्धि

पृथिवीसम्वन्धी को

मुहुः५गीः	पुनःपुनर्गिरतीति	वार २ निगलने
रेतः	तथोक्तः वीर्यवान् (मतुपोलुक्)	वाला वीर्यवान
वृषभः	वृषभः	वैल
कनिक्रदत्	शब्दयन्	शब्द करता हुआ
दधत्	धारयन्	धारण करता हुआ
रेतः	वीर्यम्	वीर्य को
कनिक्रदत्	शब्दयन्	शब्द करता हुआ
शतम्	शतेन (विमक्तेः सुः)	सौ से
चक्षाणः	पश्यन् (चष्टिरीक्षणकर्मार्थं निघं० ३।११)	देखता हुआ
अक्षऽभिः	नेत्रैः	नेत्रों से
देवः	देवः	देव

वनेषु	वनेषु	बनों में
तुर्वणिः	शीघ्रगामी (निघं०४३)	शीघ्र चलने वालां
सदः	स्थानम्	स्थान को
दधानः	धारयन्	धरण करता हुआ
उपरेषु	अधोवर्तिषु	नीचे वालों में
सानुषु	भूपृष्ठेषु	मैदानों में
अग्निः	अग्निः	अग्नि
परेषु	उच्चेषु	ऊंचों में
सानुषु	शिखरेषु	शिखरों में

संस्कृतार्थः ।

पुनःपुनर्निगरणशीलः शब्दयन् वीर्यवान्  
 वृषभः (निज-) गत्वा सद्यः पार्थिवम् (स्थानम्)  
 व्याप्नोति, वीर्यधारयन् शब्दयन् (व्याप्नोति)

शतेननेत्रैः पश्यन् वनेषु शीघ्रगामी देवोऽग्निः अधोव-  
र्तिषु भूपृष्ठेषु समुच्छ्रितेषु शिखरेषु (च) स्थानं  
धारयन् (व्याप्नोति) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

धार २ निगलने वाला धाड़ता हुआ वीर्यवान  
बैल (अपनी) गतिसे पृथिवी के स्थानों में फैल जाता-  
है, वीर्य को धारण करता हुआ धाड़ता हुआ (फैल-  
जाता है) सौ नेत्रोंसे देखते हुए, वनों में शीघ्र चलने वाले  
अग्निदेव नीचे मैदानोंमें (और) ऊंचे शिखरोंमें स्थान  
को धारण करते हुए (फैलजाते हैं) ॥ ३ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

ससुक्रतुः पुरोहितो दमे दमेऽग्नि-  
र्यज्ञस्याऽध्वरस्य चेतति क्रत्वा यज्ञ-  
स्य चेतति । क्रत्वा विधाद्विषूयते वि-  
प्रवाजातानि पस्पशे । यतो घृतश्री-  
रतिथिर जायत वज्रिविधा अजायत । ४।

सः	सः	वह
सुऽक्रतः	अति मेधावी	अत्यन्त बुद्धिमान
पुरऽहितः	पुरोहितः	पुरोहित
दमेऽदमे	गृहे गृहे	घर घर में
अग्निः	अग्निः	अग्नि
यज्ञस्य	यज्ञम् (कर्मणि षष्ठी)	यज्ञ को
अध्वरस्य	अकुटिलम् (॥)	कुटिलता से रहित को
चेतति	(ध्यानेन) पश्यति	(ध्यानसे) देखता है
क्रत्वा	बुद्ध्या	बुद्धि से
यज्ञस्य	यज्ञम् (॥)	यज्ञ को
चेतति	पश्यति	देखता है

क्रत्वा	बुद्ध्या	बुद्धि से
वेधाः	मेधावी (निघं०३।१५)	बुद्धिमान
इषुऽयते	प्रार्थयमानाय	प्रार्थना करते हुए के लिये
विप्रवा	विश्वानि (शेर्लोपः)	सब को
जातानि	उत्पन्नानि	उत्पन्न हुआ को
प्रस्पृशे	स्पर्शयति (अन्तर्माधितण्यर्था- स्लङ्घ्ये लिट्)	स्पर्श कराता है
यतः	यतः	जिस से
घृतऽश्रीः	घृतं सेवमानः	घृत को सेवन करता हुआ
अतिथिः	अतिथिः	अतिथि
अजायत	अजायत	उत्पन्न हुआ है
वक्त्रिः	(हविषाम्) वोढा	(हवियोंके)लेजाने वाला



वेधाः	मेधावी	बुद्धिमान
अजायत	अजायत	उत्पन्न हुआ है
संस्कृतार्थः ।		

अतीवमेधावी गृहेगृहेपुरोहितः सोऽग्निः  
 कुटिलरहितं यज्ञम् (ध्यानेन) पश्यति, बुद्ध्या यज्ञं  
 पश्यति, ( सः ) मेधावी प्रार्थयमानाय विश्वानि  
 जातानि बुद्ध्या स्पर्शयति, यतः घृतं सेवमानः ( हवि-  
 षाम् ) वोढा, बुद्धिमानतिथिः प्रादुरभूत् ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

अत्यन्त बुद्धिमान, घर घरमें पुरोहित वह अग्नि  
 कुटिलता से रहित यज्ञ को ( ध्यान से ) देखते हैं, बुद्धि  
 से यज्ञ को देखते हैं, वह मेधावी प्रार्थना करने  
 वाले के लिये सब उत्पन्नमात्र को बुद्धि द्वारा  
 स्पर्श कराते हैं, जिस से धी को सेवन करने वाले  
 ( हवियों के ) पहुंचाने वाले बुद्धिमान अतिथि उत्पन्न  
 हुए हैं ॥ ४ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२२।१२।८।८।७।१२।८

क्रत्वायदस्य तविषीषु पृञ्चतेग्ने-

रवेणमरुतांनभोज्येष्टिरायनभोज्या ।

सहिष्मादानमिन्वति वसूनांचम-

जमना । सनस्त्रासतेदुरितादभि-

कृतःशंसादघादभिकृतः । ५ ।

क्रत्वा	यजेन	यज्ञ से
यत्	यदा	जब
अस्य	अस्य	इस के
तविषीषु	बलेषु (निघं०२।९)	बलों में
पृञ्चते	मिश्रयन्ति (पृचीसम्पर्क)	मिलाते हैं
अग्नेः	अग्नेः	—

अवेन	प्रेम्णा (भा०को०)	प्रेम से
मरुताम्	मरुताम्	मरुतों के
न	इव	की न्याई
भोज्या	भक्ष्याणि [हवींषि] (भोर्लोपः)	भक्षण करने योग्य [हावयों]
इषिराय	इच्छायुक्ताय (निघं० ४।३)	कामना वाले के लिये
न	इव	की न्याई
भोज्या	भक्ष्याणि	भक्षण करने योग्य
सः	सः	वह
हि	खलु	सचमुच
स्म	[पूरणः]	—
दानम्	दानम्	दान को

द्वन्वति	प्रेरयात	प्रेरण करता है
वसूनाम्	धनानाम्	धनों के
च	[पूरणः]	—
मज्जमना	बलेन (निघं० २।९)	बल से
सः	सः	वह
नः	अस्मान्	हम को
चासते	त्रायते (यस्य सत्त्वं छान्दसम्)	रक्षा करता है
दुःऽद्वितात्	पापात्	पाप से
अभिऽकृतः	कुटिलस्य (भा०को०)	कुटिल के
शंसात्	परिवादात्	कलंक से
अघात्	कुर्मणः	कुर्म से
अभिऽकृतः	कुटिलस्य	कुटिल के

यदा मनुष्याः अस्याग्नेः धलेषु प्रीत्या  
 यज्ञेन मरुताम् [बलम्] इव भोज्यानि [हवींषि]  
 मिश्रयन्ति, यथा इच्छायुक्ताय भोज्यानि (दीयन्ते),  
 स दानं खलु प्रेरयति, धनानां बलेन (च) अस्मान्  
 कुटिलस्य पापात् कुटिलस्य कुकर्मणः परिवादात्  
 [च] त्रायते ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

जब मनुष्य इस अग्नि के धलों में प्रेम से यज्ञ-  
 द्वारा मरुतों के (बल) की न्याईं खाने योग्य (हवियाँ)  
 मिलाते हैं, जैसे कामना करने वाले के लिये भोजन  
 (दिये जाते हैं,) तब वह सचमुच दान को प्रेरण करते  
 हैं, हम को कुटिलता करने वाले के पाप से कुटि-  
 लता करने वाले के कुकर्म से (और) कलंक से  
 बचाते हैं ॥ ५ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

वि॒श्वो॒ वि॒हा॒या अ॒रति॒र्वसु॒र्दधे॒  
 ह॒स्ते॒ दक्षि॑णे॒ तर॒णिर्न॑शि॒ अथ॒ च॒क्रव॒-  
 स्य॒या न॑शि॒ अथ॒त् । वि॒श्वस्मा॑द्दि॒षु-

ऊहिषे

आ+ऊहिषे, नयति ले जाता है

(लङ्घ्येति घघन-  
ध्यात्ययः)

विप्रवस्मै

सर्वस्मै

सब के लिये

इत्

एव

ही

सुऽकृते

सुकर्मणे

शुभ कर्म करने

वारम्

वरणीयम् (धनम्)

वाले के लिये

ऋणवति

प्रापयति

वरनेयोग्य (धन) को

(निघं० २।१४ गति कर्मा)

प्राप्त कराता है

अग्निः

अग्निः

आग्नि

ारा

द्वाराणि

(शेर्लोपः)

द्वारों को

िव

वि +

-

ऋणवति

वि + ऋणवति,  
समुद्रघाटयति

चौड़े खोल देता है

संस्कृतार्थः ।

विश्वात्मको

महेश्वरोऽग्निर्वृक्षिणो हस्ते धनं

धारयति, परोपकारीव (च) त्यजति यथा (धनी)  
 यशश्छया त्यजति, सर्वस्मै एव प्रार्थयमानाय देवेषु  
 हव्यं नयति, सर्वस्मै सुकर्मणे वरणीयम् (धनम्)  
 प्रापयति, द्वाराणि (च) समुद्घाटयति ॥ ६ ॥

मापार्थः ।

सब के रूप, महान ईश्वर अग्नि दहिने हाथ  
 में धन को धारण करते हैं, ( और ) परोपकारी की  
 न्याई छोड़ते हैं, जैसे ( धनी ) यश की इच्छासे  
 छोड़ता है, वह सब प्रार्थना करने वालों के लिये  
 देवताओं में हवि लेजाते हैं, सब सुकर्म करने वालों  
 के लिये बरने योग्य (धन)को प्राप्त कराते हैं (और)  
 द्वारों को चौड़ा खोल देते हैं ॥ ६ ॥

अग्निदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

समानुषेवृजनेशंतमोहितोऽग्नि-

र्यज्ञेषु जेन्योनविप्रपतिः प्रियोयज्ञेषु

विप्रपतिः । स हव्यामानुषाणा मिळा

कृतानिपत्यते । सनस्चासतेवरुण-

स्यधूर्तेर्महोदेवस्यधूर्तेः ॥ ७ ॥

सः	सः	वह
मानुषे	मनुष्यसम्बन्धिनि	मनुष्य संबंधी में
वृजने	प्राचीरे (भा० पौ०)	घेरे में
शम्भतमः	अत्यन्तं सुखरूपः	अत्यन्त सुखरूप
हितः	स्थापितः	स्थापन किया गया
अग्निः	अग्निः	अग्नि
यज्ञेषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
जन्यः	जयशीलः	जीतने वाला
न	इव	की न्याईं
विश्वपतिः	राजा	राजा



प्रि॒यः	प्रि॒यः	प्यारा
य॒ज्ञेष॑	य॒ज्ञेषु॑	य॒ज्ञों में
वि॒श्र॒पतिः॑	रा॒जा	रा॒जा
सः	सः	वह
ह॒व्या	ह॒व्यानि॑ (शे॒छोंपः)	ह॒वियों को
मा॒नु॒षा॒णाम्	मा॒नु॒ष्या॒णाम्	मा॒नु॒ष्यों की
हृ॒ळा	स्तु॒त्या सह	स्तु॒ति के साथ
कृ॒तानि॑	कृ॒तानि	की हुइयों को
प॒त्य॒ते	ई॒ष्टे (नि॒र्घ०२।२१)	स्वा॒मी है
सः	सः	वह
नः	अ॒स्मान्	हम को

चासते	त्रायते (यस्यसत्त्वम्)	रक्षा करता है
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण की
धूर्तः	हिंसातः	हिंसा से
महः	महतः	महान की
देवस्य	देवस्य	देव की
धूर्तः	हिंसातः	हिंसा से

संस्कृतार्थः ।

सोऽग्निर्मनुष्यसम्बन्धिनि प्राचीरे जयशीलोरा-  
जेव अत्यन्तं सुखरूपः (सन्) यज्ञेषुस्थापितः,  
यज्ञेषुप्रियोराजेव (स्थापितः,) सः स्तुत्या सह कृतानि  
मनुष्याणां हव्यानि ईप्ते, सोऽस्मान् वरुणस्य  
हिंसातः त्रायते, महतो देवस्य हिंसातः (त्रायते) ॥७॥

मापार्थः ।

वह अग्नि मनुष्यों के घेरे में जयशील राजा  
की न्याई अत्यन्त सुखरूप हुए २ यज्ञों में स्थापन

किये गए हैं, यज्ञों में प्रिय राजा की न्याईं स्थापन किये गए हैं, वह स्तुति के साथ की हुई मनुष्यों की हवियों के स्वामी हैं, वह हमें वरुण की हिंसा से बचाते हैं, महान देवता की हिंसा से बचाते हैं ॥ ७ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८।

अग्निं॑ हो॒ता र॑मी॒ळते॒व सु॑धितिं  
प्रि॒यं चे॒ति ष॑ठम॒रतिं॑ न्य॒रिरे॒ ह॒व्यवा॑हं  
न्य॒रिरे॒ । वि॒श्ववा॑युं वि॒श्ववे॑दसं॒ हो॒ता-  
रं य॒ज॒तं क॒विम् । दे॒वा सो॑र॒णव॑मव॒सेव-  
सू॒यवो॑ गी॒र्भो र॑णव॒ंसू॒यवः॑ ॥ ८ ॥

अग्निम्		अग्निम्		अग्नि को
होतारम्		होतारम्		होता को

ई॒ळ॒ते	पूज॑यन्ति	पूज॑ते हैं
वसु॑ऽधि॒तिम्	धन॑स्यधारयि- तारम्	धन॑ के धारण करने वाले को
प्रि॒यम्	प्रि॒यम्	प्यारे को
चेति॑ष्ठम्	अति॑चेतनाशीलम् (चेतु छन्दा दिष्टनिवृत्तलोपः)	अत्यन्प॑ चेतन को
अ॒र॒तिम्	ई॒श्वरम्	ई॒श्वर को
नि	नि+	-
ए॒रि॒रे	नि+ए॒रि॒रे, समीपं प्राप्त॑वन्तः,	समीप॑ पहुँचे हैं
ह॒व्य॑ऽवा॒हम्	ह॒विषां॑ वोढारम्	ह॒वियों॑के लेजाने वाले को
नि	नि+	-
ए॒रि॒रे	नि+ए॒रि॒रे समीपं॑प्राप्त॑वन्ता (रुगती)	समीप॑ पहुँचे हैं

वि॒श्वऽ	सर्वेषां जीवन-	सब के जीवन
आ॒युस्	रूपम्	रूप को
वि॒श्वऽ-	सर्वधनोपेतम्	सम्पूर्ण धनों वाले
वे॒दसम्		को
हो॒ता॒रम्	होतारम्	होता को
य॒ज॒तम्	यजनीयम्	यजन करने
क॒विम्	मेधाविनम्	योग्य को
दे॒वाः	देवाः	देवता
	(जसोऽसुगागमः)	
र॒ण॒वम्	रमणीयम्	रमणीय को
अ॒व॒से	रक्षार्थम्	रक्षा के लिये
व॒सु॒ऽय॒वः	धनकामाः	धन की कामना
गोः॒ऽभिः	स्तुतिभिः	वाले
		स्तुतियों से

रयवम्

रमणीयम्

रमणीय को

वसुऽयवः

धनकामाः

धनकी कामना  
वाले

संस्कृतार्थः ।

(मनुष्याः) होतारं धनस्यधारयितारं प्रियम्  
अत्यन्तचेतनाशीलम् (विश्वस्य) स्वामिनम् (च) अग्निं  
पूजयन्ति, (तत्-) समीपम् (च) प्राप्तवन्तः, हवियों को डारं  
नितरां प्राप्तवन्तः, सर्वेषां जीवनरूपं सर्वधनोपेतं होतारं  
यजनीयं मेधाविनं रमणीयम् (चाऽग्निम्) धनकामाः  
देवाः रक्षार्थम् (समीपं प्राप्तवन्तः,) धनकामाः (देवाः)  
रमणीयम् (अग्निम्) स्तुत्या [प्राप्तवन्तः] ॥८॥

भाषार्थः ।

[मनुष्य] होता, धनके धारण करने वाले,  
प्यारे, अत्यन्त चेतन [और सब के ] स्वामी अग्नि  
को पूजते हैं, [और उसके ] समीप पहुंचे हैं,  
हवियों के लेजाने वाले [के समीप पहुंचे हैं,] सब के  
जीवन रूप, सब धनों वाले, होता, यजन करने योग्य,  
बुद्धिमान (और) रमणीय (अग्नि) को धनकी कामना  
वाले देवता रक्षा के लिये [समीप पहुंचे हैं] धन का  
कामना वाले देवता स्तुतियों से समीप पहुंचे हैं ॥८॥

इत्यष्टाविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

# अ० मं० १ सं० १२६।

इन्द्रो देवता, परुच्छेपश्रुतिः ।

विनियोगः—

१-११ । एतत्सूक्त वृक्षरात्रस्य पण्डेऽङ्गि मरुत्तमीयशस्त्रे  
विनियुक्तम् । (आ० ८।११४।)

## सूक्त का भाषार्थ ।

हे बल वाले इन्द्र ! आप हमारी पूजा को ग्रहण करने के लिये जिस अपने रथ को आगे बढ़ाते हो, हे दोष रहित ! जिस को आप आगे बढ़ाते हो, उस को तत्काल हमारी रक्षा में नियुक्त करो, और आपकी इच्छा हो कि हमारा बल बढ़े, हे दोष रहित और शीघ्रकारी ! आप हम कवियों की वाणी को बुद्धिमानों की वाणी की न्याईं सुनो । १ । हे इन्द्र ! जो आप युद्ध की ललकारके समय धीरों से स्तुति किये जाकर बलयुक्त किये जाने योग्य हो, जय के लिये शूरवीरों से बलयुक्त किये जाने योग्य हो, जो आप शूरवीरों के साथ प्रकाश के जीतने वाले हो और बुद्धिमानों को यज्ञ के लिये प्रेरण करते हो, उस बलवान आप को ऐश्वर्यवान् भाराधन करते हैं जैसे युद्ध के लिये धेनुवान घोड़े को । २ । हे धीर ! गन्तव्य वाले धर्मरूप यादव को आप ही फुलाते हो, आप ही प्रत्येक विरोधी मनुष्य को हटाते हो, विरोधी मनुष्य का परित्याग करते हो, हे इन्द्र ! मैं उस प्रसिद्ध स्तोत्र को आपके लिये उच्चारण करता हूँ, स्वयं यश वाले रुद्र के लिये मित्र और वरुण के लिये और धी के लिये

२ "शूरवीरों के साथ प्रकाश के जीतने वाले" अर्थात् इस तामसी वस्तुओं के देश में सनोगुणी आर्यजाति की सभ्यता का प्रकाश फैलाने वाले ।

उच्चारण करता हूँ, अत्यन्त दयालु धरुण के लिये विषयात स्तोत्र-  
को उच्चारण करता हूँ । ३। हे भार्यगण ! आप की रक्षा के  
लिये हम अपनेसखा सख के जीवनरूप और प्रबल सहायक  
इन्द्र की कामना करते हैं, युद्ध में प्रबल सहायक इन्द्र की कामना  
करते हैं, हे इन्द्र ! आप सब युद्धों में रक्षा के लिये हमें स्तोत्र  
उच्चारण करने के लिये प्रेरण करो, आपसे शत्रु नहीं बच सकता  
जिस को आप घेर लेते हो, जिन सब शत्रुओं को आप घेर लेते  
हो । ४। हे उग्र ! प्रत्येक शत्रु के घमंड को नीचा करो, जलती  
हुई लकड़ियों से मानो नीचा करो और हम को अपनी  
रक्षाओं से पहले की न्याईं रस्ता दिखाओ, हे शूर ! आप निष्पाप  
जाने गए हो, इसलिये भगवैया बनकर मनुष्य के सब पापों को दूर  
करके उस की रक्षा करते हो, यह आप हमारे समीप ठहर कर हमारे  
नेता बनो । ५। जो बलवान सोम सब से बुलाने योग्य इन्द्र की  
न्याईं स्तोत्र को प्रेरण करता है, राक्षसों के मारने वाले स्तोत्र को  
प्रेरण करता है, मैं उस से यह प्रार्थना करूँ कि यह निन्दक की  
दुष्टबुद्धि को बध करने के शस्त्रों द्वारा हम से दूर हटावे और  
पाप की प्रशंसा करने वाला अत्यन्त नीचे गिरे और अणु की  
न्याईं नष्ट हो । ६। हे धनवान इन्द्र ! हम ध्यान युक्तवाणी द्वारा यह  
घर माँगे, धन और बड़ी बीरताको माँगे, रमणीय और बड़ी बीरता  
वाले धन की माँगे, कठिनता से मनाने योग्य इन्द्र को सुन्दर स्तोत्रों  
से और हवियों द्वारा प्रसन्न करें, पूजने योग्य को प्रबल पुकारों  
से प्रसन्न करें । ७। हे भार्यगण ! जो इन्द्र यश की इच्छा से हमारे  
और आपके समान रक्षक हैं, यह दुष्ट विचित्र वाले विरोधियों को  
दूर हटाने में तत्पर हों, दुष्ट विचित्र वालों के चौर डालनेमें तत्पर  
हों, जो वज्र राक्षसों ने हमारी ओर फेंका है यह स्वयं उन्हीं को  
मारनेके लिये लीटे, हम तक न पहुँचे, फेंका हुआ शक्तिभस्त्र हम तक  
न पहुँचे । ८। हे इन्द्र ! आप हमारे पास बहुत धन लेकर आधे, विष्णु-



रहित मार्ग से आवें, राक्षसरहित मार्ग से आवें, हम घर से दूर हों  
 वा समीप, दोनों अवस्थाओं में आप हमारे साथ रहें, आप दूर और  
 समीपमें अपनी रक्षाओं द्वारा हमारा पालन करें, सदा रक्षाओं द्वारा  
 पालन करें । ९ । हे सबसे अधिक बली ! पालन कर्ता ! रक्षक ! मरण  
 रहित ! इन्द्र ! आप हमारे पास तारने वाले धन को लेकर आवें, मित्र  
 की न्याय रक्षाके लिये आने वाले आप का बल बढ़े, हे प्रत्येक धीर  
 के रक्षक ! वज्रधारी ! हमसे अन्य किसी दूसरे को पीड़ित करो, हे  
 यज्ञी ! जो हम को पीड़ा देना चाहता है उसको पीड़ित करो । १० ।  
 हे इन्द्र ! आप जो बहुत स्तुति किये गये हैं और पाप धीतनों वालों को  
 नीचे गिराने वाले हैं, आप जो देवता होकर पाप धीतने वालों को नीचे  
 गिराते हैं, आप जो पापी राक्षस के मारने वाले और, मुझ सरीखे  
 स्तोता की रक्षा करने वाले हैं, ऐसे आप हमें पीड़ा से बचावें, हे  
 धन वाले ! इसीलिये आप को पिता ने जना है, हे धन वाले ! राक्षसों  
 के मारने वाले आप को जना है ॥ ११ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । ११ । १२ । ७ । ८ । १४ । ८

य॒न्त॒र्व॒र॒थ॒मिन्द्र॑मे॒धसा॑तये प्रा॒क्ता  
 स॒न्त॒मि॒षिर॑प्र॒णय॑सि प्रा॒नव॑द्यनयसि ।  
 स॒द्यश्चि॑त्त॒मभि॑ष्टये करो॒वश॑श्च  
 वा॒जिन॑म् । सो॒स्माक॑मनवद्यतू-  
 तुजा॑नवे॒धसा॑ मि॒मांवा॑च॒नवे॒धसाम् । १ ।

यम्	यम्	जिस को
त्वम्	त्वम्	तू
रथम्	रथम्	रथ को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मेधऽसातये	यज्ञस्य प्राप्तये (आ०को०)	यज्ञ की प्राप्ति के लिये
अपाका	पश्चादवस्थितम् (आ०को०, सुषामिति विम केरात्यम्)	पाँछे ठैरे हुए को
सन्तम्	सन्तम्	हुए २ को
इषिर	वलवन् ! (आ०को०)	हे बलवान्
प्रऽनयसि	अग्नेनयसि	आगे ले जाते हा
प्र	प्र +	—
अनवद्य	हे अनिन्य !	हे निन्दा से रहिन

नयसि	प्र + नयसि, अग्रे नयसि	आगे ले जाते हो
सद्यः	सद्यः	तत्काल
चित्	एव	ही
तम्	तम्	उस को
अभिष्टये	रक्षायै (आ०को०)	रक्षा के लिये
करः	कुरु (लेटि व्यत्ययेन शप्)	करो
वशः	कामयस्व (लेटि घडागमः)	इच्छा करो
च	च	और
वाजिनम्	वलम् (आ०को०)	वल को
सः	सः	वह
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारी

अ॒न॒व॒द्य	हे दोषरहित !	हे दोष सेरहित
त॒त॒जान	हे त्वरमाण (निघं०२।१५)	हे शीघ्रकारी
वे॒ध॒साम्	कवीनाम् (मा०को०)	कवियों की
इ॒माम्	इमाम्	इस को
वा॒च॒म्	वाचम्	वाणी को
न	इव	की न्याई
वे॒ध॒साम्	मेधाविनाम्	बुद्धिमानों की

संस्कृतार्थः ।

हे धलवन् ! इन्द्र ! त्वम् (अस्मद्-) यज्ञस्य प्राप्त-  
ये पश्चादवस्थितं यम् (निज-) रथम् अग्रे नयसि, हे  
अनिन्य ! (यं त्वम्) अग्रे नयसि, तं सद्यः (अस्मत्-)  
रक्षायै कुरु, (अस्मदर्थम्) वलम् (च) कामयस्व, हे दोष-  
रहित ! त्वरमाण ! (इन्द्र ! ) सः (त्वम्) अस्माकं कवी-  
नाम् इमां वाचं मेधाविनाम् (वाचम्) इव (शृणु) ॥१॥

हे बलवान् इन्द्र ! आप (हमारे) यज्ञकी प्राप्ति के लिये पीछे ठैरे हुए जिस (अपने) रथ को आगे बढ़ाते हो, हे निन्दा से रहित ! जिसको (आप) आगे बढ़ाते हो, उसको तत्काल हमारी रक्षा के लिये करो (और) हमारे लिये बल की कामना करो, हे दोष से रहित ! शाघ्रकारी (इन्द्र ! ) वह (आप) हम कवियों की इस बाणी को बुद्धिमानोंकी (बाणी की) न्याईं (सुनो) ॥१॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

सः॑ शु॒धियः॑ स्म॒पृ॒त॒ना सु॒का सु॒-  
चि॑ ह॒क्षा॒य॒ इन्द्र॑ भ॒र॒हू॒त॒ये नृ॒भि र॒सि  
प्र॒तू॒र्त॒ये नृ॒भिः । यः॑ शू॒रः स्व॑ शः स॒नि॒ता  
यो वि॒प्रैर्वा॒जं त॑रुता । त॒मी॒शाना॑ स॒द्वर-  
ध॒न्त॒वा॒जिनं॑ पृ॒क्ष॒म॒त्यं न॒वा॒जिन॑म् ॥२॥

सः	सः	वह
श्रुधि	श्रृणु	सुनो :
यः	यः	जो
स्म	(पूरणः)	-
पृतनासु	संग्रामेषु (निघं०२।१७)	युद्धों में
कासु	कासु + चित् सर्वेष्वपि	सब में
चित्	+चित्	-
दृष्टायः	बलीकार्यः	बलयुक्त करने योग्य
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
भरऽहूतये	संग्रामसम्बन्धिन- आह्वानार्थम् (भरऽतिसंग्राम नाम निघं०२।७)	युद्ध की पुकार के लिये

नृ॒भिः	वीरः	वीरों के साथ
अ॒सि	असि	तू है
प्र॒त॒र्त॒ये	जयाय	जय के लिये
नृ॒भिः	नरः	नरों के साथ
यः	यः	जो
शू॒रः	शूरैः	शरवीरों के साथ
स्वः०	प्रकाशम्	प्रकाश को
स॒नि॒ता	जेता	जीतने वाला
यः	यः	जो
वि॒प्रैः	मेघाविभिः	बुद्धिमानों के साथ
वा॒ज॒म्	यज्ञम्	यज्ञ को

त॒रु॒ता	प्रेरयिता (ईकारस्योकारश्चाह- सः)	प्रेरण करनेवाला
तम्	तम्	उस को
ई॒शाना॑सः	ऐश्वर्य्यवन्तः (जसोऽसुगोचरः)	ऐश्वर्य्यवाले
इ॒र॒ध॒न्त	आराधयन्ति (इरध् आराधने कण्डवादेराकृतिगण- त्याच्छान्दसंरूपम्)	आराधना करते हैं
वा॒जिन॑म्	बलवन्तम्	बलवान को
पृ॒क्षम्	युद्धार्थम् (निघ० २।१७ चतुर्थ्यर्थे द्वितीया)	युद्ध के लिये
अ॒त्यम्	अश्वम् (निघ० १।१४)	घोड़े को
न	इव	जैसे
वा॒जिन॑म्	वेगवन्तम्	वेग वाले को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! सः (त्वम्) शृणु, यः (त्वम्) सर्वेष्वपि  
युद्धेषु सङ्ग्रामसम्बन्धिन आह्वानार्थं वीरैः प्रवलीका-  
र्य्यः जयार्थं नरैः (प्रवली कर्तव्यः) असि, शूरैः प्रकाशस्य



जेता (असि,) यः(चत्वम्) मेधाविभिर्यज्ञस्य प्रेरयता  
(असि,) तं बलवन्तम् (त्वाम्) ऐश्वर्य्यवन्तो युद्धाय  
वेगवन्तम् अश्वमिव आराधयन्ति ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! वह आप सुनें, जो आप सब युद्धों में  
संग्राम की पुकार के लिये बलयुक्त करने योग्य  
(हैं) जय के लिये नरों से (बल युक्त करने  
योग्य) हैं, जो (आप) शूरवीरों के साथ प्रकाश के जीतने  
वाले हैं (और) जो (आप) बुद्धिमानों के द्वारा यज्ञ के  
प्रेरण करने वाले हैं, उस बलवान (आप को)  
ऐश्वर्य्यवान आराधन करते हैं जैसे युद्ध के लिये वेग-  
वाले घोड़े को (आराधन करते हैं) ॥ २ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिद्वन्द्वः । १२।१२।८।८।१२।८,

द॒स्मोहि॑ष्म॒माह॑ष॒णं॒पि॒न्व॑सि॒तव॑चं

क॒ञ्चि॑द्द॒यावी॑र॒रु॑शू॒रम॑र्त्य॒परि॑हृण-

क्षि॒म॑र्त्य॒म् । इन्द्रो॒ततु॑भ्यंत॒द्विवे॑-

तद्रद्रायस्वयशसे । मित्रायवोचंवरु-  
णायसप्रथः सुमृलीकायसप्रथः । ३।

द॒स्मः

अद्भुतः

अद्भुत

हि

एव

ही

स्म

(पूरणः)

—

वृषणम्

वर्षणशीलम्

बरसने वाले को

पिन्वसि

आप्याययसि

फुलाते हो

त्वचम्

चर्म

चर्म को

कम्

कम्+चित्, प्रत्ये-  
(या०को०) कम्

प्रत्येक को

चित्

+चित्

—

यावीः

पृथक्करोषि  
(यु अमित्रणे लड्ये  
लुड्यडमावः)

अलग करदेते हो

अ॒र॒क्ष॒म्	श॒त्रु॒म् (आ०को०)	श॒त्रु॒ को
श॒र॒	हे श॒र !	हे श॒र॒वी॒र
म॒र्त्य॑म्	म॒नु॒ष्य॑म्	म॒नु॒ष्य॑ को
प॒रि॒ऽहृ॒ण॒क्षि॑	प॒रि॒त्य॑ज॒सि	प॒रि॒त्या॑ग॒ कर॑ते हो
म॒र्त्य॑म्	म॒नु॒ष्य॑म्	म॒नु॒ष्य॑ को
इ॒न्द्र॑	हे इ॒न्द्र	हे इ॒न्द्र
उ॒त॒	च	औ॒र
तु॒भ्य॑म्	तु॒भ्य॑म्	ते॒रे लिये
तत्	तत्	उ॒स को ,
दि॒वे	दि॒वे	धौ॒ के लिये
तत्	तत्	उ॒स को

रुद्राय	रुद्राय	रुद्र के लिये
स्वऽयशसे	स्वतोयशास्विने	स्वयं यशस्वी के लिये
मित्राय	मित्राय	मित्र के लिये ;
वोचम्	ब्रवीमि (लडपें लुडघडभावः)	कहता हूं . . .
वरुणाय	वरुणाय	वरुण के लिये
सुऽप्रथः	प्रथितम्	विख्यात को
सुऽमृळीकाय	अतिकृपालवे	अत्यन्त कृपालु के लिये
सुऽप्रथः	प्रथितम्	विख्यात को

संस्कृतार्थः ।

हे शूर ! 'अद्भुतः (त्वम्) एव वर्षणशीलं चर्म-  
आप्याययसि, (त्वम्) प्रत्येकं विरोधिनं मनुष्यं पृथक्-  
रोषि, (विरोधिनम्) मनुष्यं पणित्यजसि, हे इन्द्र !  
(अहम्) तुभ्यं, दिवे, स्वतोयशस्विने रुद्राय, मित्राय,

।रुणाय च सुप्रख्यातम् ( तत् स्तोत्रम् ) ब्रवीमि,  
प्रतिकृपालवे(वरुणाय)सुप्रख्यातम्(स्तोत्रं ब्रवीमि)॥३॥

भाषार्थः ।

हे शूरवीर ! अद्भुत आप ही वरसने वाले चर्म  
को फुलाते हो, आप प्रत्येक विरोधी मनुष्य को अलग  
करते हो, प्रत्येक (विरोधी) मनुष्य का परित्याग करते  
हो, हे इन्द्र ! मैं आपके लिये, द्यौ के लिये, स्वयं यज्ञवाले  
रुद्र के लिये, मित्र के लिये और वरुण के लिये विख्यात  
उस (स्तोत्र) को कहता हूँ, अत्यन्त कृपालु (वरुण)  
के लिये विख्यात (स्तोत्र) को ( कहता हूँ ) ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ॥१२॥१२।।।।।१२।।

अ॒स्माकं॑ व॒इन्द्र॑मु॒ग्रम॑सी॒ष्टये॒ स-  
खा॑यं वि॒प्रवा॑युं प्रा॒सह्यु॑जं वा॒र्जेषु॑ प्रा॒स-  
ह्यु॑जम् । अ॒स्माकं॑ ब्र॒ह्मो॒तये॑ वा॒पृत्सु॑-  
पु॒कासु॑चित् । न॒हि त्वा॒शत्रुः॑ स्त॒रते॑  
स्तृ॒णोपि॑यं वि॒प्रवं॑श॒न्नुस्तृ॑णोपि॒यम् ॥४॥

स्तरते	तरति	उल्लाघता है
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढक लेते हो
यम्	यम्	जिस को
विप्रवम्	सर्वम्	सब को
शत्रुम्	शत्रुजातम् (जातावेकवचनम्)	शत्रुओं को
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढक लेते हो
यम्	यम्	जिस को

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः! वयम्) युष्मद्रक्षार्थम् अस्मत्सखायं सर्वेषां जीवनभूतं प्रबलं सहचरम् इन्द्रं कामयामहे, युद्धेषु प्रबलं सहचरम् (इन्द्रं कामयामहे) (हे इन्द्र! त्वम्) सर्वेषु युद्धेषु रक्षार्थम् अस्माकं स्तोत्रं प्रेरय, त्वां शत्रुर्नतरति यम् (त्वम्) आच्छादयसि, यं सर्वं शत्रुजातमाच्छादयसि ॥ ४ ॥

मापार्थः ।

( हे आर्यो ! ) आप की रक्षा के लिये, हम अपने सखा, सब के जीवन रूप, प्रबल साथी इन्द्र की कामना करते हैं, युद्ध में प्रबल साथी ( इन्द्रकी कामना करते हैं ) ( हे इन्द्र ! ) आप सब युद्धों में रक्षा के लिये हमारे स्तोत्र को प्रेरण करो, आप को शत्रु नहीं उलांघ सकता जिसको ( आप ) आच्छादन कर लेते हो, जिस सब शत्रुसमूह को आप आच्छादन कर लेते हो ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, विराडत्यष्टिश्छन्दः ॥ १२ ॥ १२।७।७।१२।७

निषू॒न॒मा॒ति॒म॒तिं॒क॒य॒स्य॒चि॒त्ते-  
जि॒ष्ठा॒भि॒र॒र॒णि॒भि॒र्नो॒ति॒भि॒रु॒ग्रा॒भि-  
रु॒ग्रो॒ति॒भिः॑ । ने॒षि॒णो॒य॒था॒पु॒रा॒ने॒नाः  
शू॒र॒म॒न्य॑से । वि॒श्वानि॒पू॒रोर॒प॒र्षि॒व-  
क्लि॒रा॒सा॒व॒क्लि॒र्नो॒अ॒च्छ ॥ ५ ॥

अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
वः	युष्माकम्	तुम्हारी
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
उग्रमसि	कामयामहे (घशकान्तौ मस- इकारागमः)	हम कामना करते हैं
दृष्टये	रक्षार्थम्	रक्षा के लिये
सखायम्	मित्रम्	मित्र को
{ विप्रवऽ आयुम्	सर्वेषां जीवनभूतम्	सब के जीवन रूप को
प्रऽसहम्	प्रबलम्	खूब बलवान को
युजः	सहचरम्	साथी को
वाजेष	संग्रामेषु (निघं० २१०)	युद्धों में



प्रऽसहम्	प्रबलम्	प्रबल को
युजम्	सहचरम्	साथी को
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
ब्रह्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
ऊतये	रक्षार्थम्	रक्षा के लिये
अव	प्रेरय	प्रेरण करो
	(भा०को०)	
पृथुसुषु	युद्धेषु	युद्धों में
कासु	कासु+चित्,	प्रत्येक में
चित्	प्रत्येकेषु	-
नहि	+ चित्	नहीं
त्वा	नहि	तुझ को
शत्रुः	त्वाम्	शत्रु
	शत्रुः	

स्तरते	तरति	उलांघता है
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढकलेते हो
यम्	यम्	जिस को
विप्रवम्	सर्वम्	सब को
शत्रुम्	शत्रुजातम् (जातावेकपचनम्)	शत्रुओं को
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढकलेते हो
यम्	यम्	जिस को

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः! वयम्) युष्मद्रक्षार्थम् अस्मत्सखायं सर्वेषां जीवनभूतं प्रबलं सहचरम् इन्द्रं कामयामहे, युद्धेषु प्रबलं सहचरम् (इन्द्रं कामयामहे) (हे इन्द्र! त्वम्) सर्वेषु युद्धेषु रक्षार्थम् अस्माकं स्तोत्रं प्रेरय, त्वां शत्रुर्नतरति यम् (त्वम्) आच्छादयसि, यं सर्वं शत्रुजातमाच्छादयसि ॥ ४ ॥

मापार्थः ।

( हे आर्यो ! ) आप की रक्षा के लिये, हम अपने सखा, सब के जीवन रूप, प्रबल साथी इन्द्र की कामना करते हैं, युद्ध में प्रबल साथी ( इन्द्रकी कामना करते हैं ) ( हे इन्द्र ! ) आप सब युद्धों में रक्षा के लिये हमारे स्तोत्र को प्रेरण करो, आप को शत्रु नहीं उलांघ सकता जिसको ( आप ) आच्छादन कर लेते हो, जिस सब शत्रुसमूह को आप आच्छादन कर लेते हो ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, विराडत्यष्टिश्छन्दः । १२ । १२ । ७ । ७ । १२ । ७

निषू॒न॒मा॒ति॒म॒ति॒क॒य॒स्य॒चि॒त्ते-  
जि॒ष्ठा॒भि॒र॒र॒णि॒भि॒र्नो॒ति॒भि॒रु॒ग्रा॒भि-  
रु॒ग्रो॒ति॒भिः । ने॒षि॒णो॒य॒था॒पु॒रा॒ने॒नाः  
शू॒र॒म॒न्य॒से । वि॒श्व॒नि॒पू॒रो॒र॒य॒य॒र्वि॒व-  
ह्नि॒रा॒सा॒व॒ह्नि॒र्नो॒अ॒च्छ ॥ ५ ॥

नि	नि +	—
सु	सु +	—
नमः	नि + सु + नम, नितरां नमय (अन्तर्भावित्वात्पर्यः)	खूब नमाओ
अतिऽमतिम्	मिथ्यागवम् (अतिक्रान्तामतिर्येन तम)	झूठे अभिमान को
कस्य	कस्य + चित्, प्रत्येकस्य (यकारोपजनदृष्टान्दसः)	प्रत्येक के
चित्	+ चित्	—
तेजिष्ठाभिः	अतिज्वलद्भिः	अत्यन्त जलते हुओं से
अरणिऽभिः	काष्ठैः	काष्ठों से
न	इव	की न्याई
रुतिऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं से

उ॒ग्र॒भिः	प्र॒व॒लाभिः	प्र॒व॒लो॑ से
उ॒ग्र	हे उ॒ग्र !	हे उ॒ग्र
ऊ॒तिऽभिः	र॒क्षाभिः	र॒क्षाओ॑ से
ने॒षि	न॒य (लोडयेंलट्, छान्दसः शापोलुक्)	ले च॒लो
नः	अ॒स्मान्	हम॑ को
य॒था	य॒था	जै॒से ।
पु॒रा	पु॒रा	प॒हिले
अ॒ने॒नाः	पा॒प॒र॒हितः	पा॒प से र॑हिन
शू॒र	हे शू॒र !	हे शू॒रवी॒र
म॒न्य॒से	ज्ञा॒य॒से	जा॒ने जा॒ते हों
वि॒प्र॒वा॒नि	स॒र्वा॒णि	स॒ब को

प्र॒रोः	मनु॒ष्यस्य	मनु॒ष्य के
—	(निघं० २।३)	—
अप	अप+	—
प॒र्षि	अप+प॒र्षि,	दूर हटाते हो
—	अपवारयसि	—
व॒न्निहः	नेता	अगवैया
आ॒सा	समीपम्	समीप
—	(निघं० २।१६, धि॒म॒क्ते॒रात्यम्)	—
व॒न्निहः	नेता	अगवैया
नः	अस्मान्	हम को;
—	—	—
अ॒च्छ	अभिलक्ष्य	लक्ष रखकर

संस्कृतार्थः ।

हे उग्र ! (त्वम्) प्रत्येकस्य (शत्रोः) मिथ्यागर्वम्  
अतिज्वलद्भिः काण्टेरिव नितरां नमय, अस्मान्(च)  
(स्व-) रक्षाभिः प्रबलाभिरक्षाभिः पूर्वकाल इव नय,  
हे गूर ! (त्वम्) पापरहितो ज्ञायसे(अतः)नेता(सन्)

मनुष्यस्य सर्वाणि (पापानि) अपवारयसि, (स त्वम्)  
अस्मान्भिलक्ष्य समीपे (स्थित्वा) नेता (भव) ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे उग्र! आप प्रत्येक (शत्रु) के मिथ्या अभिमान को खूब  
नमन करो, जैसे अत्यन्त जलते हुए काष्ठों से (करते हैं)  
और हमें (अपनी) रक्षाओं से प्रबल रक्षाओं से पहले  
की न्याईं रस्ता दिखाओ, हे शूरवीर ! आप पाप से  
रहित जाने गए हो (इसलिये) अगवैया होकर मनुष्य के  
सब (पापों) को दूर हटाते हो, (वह आप) हमारे  
समीप ठहर कर (हमारे) अगवैया बनो ॥ ५ ॥

इन्दुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ॥ १२ ॥ १२ ॥ ८ ॥ ८ ॥ १२ ॥ ८

प्रत॒क्षो॒चेयं॒ भव्या॒येन्द॒वे ह॒व्यो॒नय॒द्दु-  
ष॒वा॒न्मन्म॒रेज॒ति र॒क्षो॒हामन्म॒रेज॒-  
ति । स्व॒यं॒सो॒ अ॒स्म॒दानि॒दो व॒धैर॒जे-  
तदु॒र्म॒तिस् । अ॒व॒स्त्र॒वेद॒घ॒र्श॒सो॒व-  
त॒र म॒व॒क्षु॒द्रमि॒व॒स्त्र॒वेत् ॥ ६ ॥

प्र	प्र+	-
तत्	एतत् (एकारोपजनः)	यह
वोचेयम्	प्र + वोचेयम् प्रकर्षेणकथयेयम् (वचेलिङ्घ्याशियङ्, वचउम् )	भली प्रकार कहूँ
भव्याय	वर्तमानाय	वर्तमान के लिये
इन्द्रवे	सोमाय	सोम के लिये
हव्यः	आह्वातव्यः (इन्द्रः)	बुलाने योग्य [इन्द्र]
न	इव	की न्याई
यः	यः	जो
इपऽवान्	वलवान्	पलवान्
सन्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
रेजति	प्रेरयति	प्रेरण करता है



वक्षः॥हा	रक्षोघ्नम् (विमर्कडो)	राक्षसों के मारने वाले को
मन्त्र	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
रेजति	प्रेरयति	प्रेरण करता है
स्वयम्	स्वयम्	अपने आप
सः	सः	वह
अस्मत्	अस्मत्तः	हम से
आ	आ +	—
निदः	निन्दितुः (निदिक्तुःसायाम्, क्विप् प्रत्ययः)	निन्दा करने वाले की
वधैः	हननसाधनैः	वध के साधनों से
अजेत	आ + अजेत, अपनयेत् (नजक्षेपणे)	दूर हटावे

दुः॒ऽम॒तिम्	दुर्बु॒द्धिम्	खोटी बुद्धि को
अ॒व	अव+	-
स्र॒वेत्	अव+स्रवेत्, पतेत्	गिरे
अ॒घ॒ऽशंसः	पापस्य प्रशंसिता	पाप की प्रशंसा करने वाला
अ॒व॒ऽत॒रम्	अधोऽधः	अत्यन्त नीचे
अ॒व	अव+	-
क्षु॒द्रम्॒ऽद्व॒व	अणुरिव (आ०को०)	अणु की न्याई
स्र॒वेत्	अव + स्रवेत्, विनश्येत्	नष्ट हो

संस्कृतार्थः ।

(अहमस्मै) विद्यमानाय सोमाय एतत् (वक्ष्यमाण-  
मभ्यर्थनम्) प्रकर्षेण कथयेयम्, यो बलवान् आह्वानव्यः  
(इन्द्रः) इव स्तोत्रं प्रेरयति, रक्षोघ्नं स्तोत्रं प्रेरयति,  
स स्वयं निन्दितदुर्बुद्धिं हननसाधनेः अस्मत्तो-

ऽपनयेत्, पापशंसिता (च) अधाऽधः निपतेत्, अणुरिव  
(च) विनश्येत् ॥ ६ ॥

भावार्थः ।

(मैं इस) वर्तमान सोम के लिये यह (प्रार्थना)  
करूँ, जो बलवान् बुलाने योग्य (इन्द्र) की न्याईं  
स्तोत्र को प्रेरण करता है, राक्षसों के मारने वाले  
स्तोत्र को प्रेरण करता है, वह निन्दा करने वाले की  
खोटी बुद्धि को बध के साधनों द्वारा स्वयं हम  
से दूर हटावे, पाप की प्रशंसा करने वाला अत्यन्त  
नीचे गिरे (और) अणु की न्याईं नष्ट हो ॥ ६ ॥  
इन्द्रो देवता, विराडित्यष्टिश्छन्दः । ११ । १२ । ८ । ८ । ११ । ८

वनेम॒त॒हो॒त्र॒याचि॒तन्त्या॑ वने-

मर॒यिं॑रयि॒वः सु॒वी॒र्यं॑ र॒ण॒वं॑सन्तं सु-

वी॒र्य॑म् । दु॒र्म॒न्मा॑नं॒सम॑न्तुभि॒रेमि॑-

प्रा॒पृ॒ची॑महि । आ॒स॒त्याभि॑रिन्द्रं॒द्यु-

म्न॑हूतिभि॒र्यज॑चंद्यु॒म्नहू॑तिभिः । ७ ।

वनेम	याचेम (आ०को०)	हम माँगे
तत्	एतत् (एकारलोपः)	यह
होत्रया	वाचा (निघ० १।११)	वाणी से
चितन्त्या	ध्यानपरया	ध्यानयुक्त से
वनेम	याचेम	हम माँगे
रयिम्	धनम्	धन को
रयिऽवः	हे धनवन् !	हे धन वाले
सुऽवीर्यम्	महाशौर्योपेतम्	बड़ी वीरता वाले को
रगवम्	रमणीयम्	रमणीय को
सन्तम्	सत्	हुए २ को
सुऽवीर्यम्	महाशौर्योपेतम्	बड़ी वीरता वाले को

दुःसमन्मा-	अतियत्नेन सन्तुं	अत्यन्त यत्न से
नम्	शक्यम्	मनने योग्य को
सुमन्तुऽभिः	शोभनैःस्तोत्रैः	सुन्दर स्तोत्रों से
आ	आ +	-
ईम्	(पूरणः)	-
इषा	(हवीरूपेण) अन्नेन	(हवीरूप) अन्न से
पृचीमहि	(निघं० २।७)	
आ	आ+पृचीमहि,	हम प्रसन्न करें
	तर्पयाम	
	आ(पृचीमहि),	हम प्रसन्न करें
	तर्पयाम	
सत्याभिः	सत्याभिः	सच्चिद्यों से
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
दुम्नहू-	प्रबलाभिर्द्वृतिभिः	प्रबल युक्तों से
तिऽभिः	(मा०को०)	

यजत्रम्	यजनीयम्	पूजने योग्य को
{ द्युम्नहू-	प्रवलाभिर्हूतिभिः	प्रवल पुकारों से
{ तिऽभिः		

संस्कृतार्थः ।

हे धनवान् ! ( इन्द्र ! ) वर्य ध्यानपरया वाचा एतत्  
( वरम् ) याचेम, महाशौर्योपेतं धनं याचेम, रमणायं  
सद् महाशौर्योपेतम् ( धनं याचेम ) अतियत्नेन मन्तुं  
शक्यं शोभनैः स्तोत्रैः ( हवीरूपेण ) अन्नेन ( च ) तर्प-  
याम, इन्द्रं सत्याभिः प्रवलाभिः [ च ] हूतिभिः [ तर्पयाम, ]  
यजनीयं प्रवलाभिर्हूतिभिः तर्पयाम ॥ ७ ॥

मापार्थः ।

हे धनवान् [ इन्द्र ! ] हम ध्यानयुक्त वाणी से यह  
( वर ) मांगें, बड़ी वीरता वाले धन को मांगें, रमणीय और  
साथ ही बड़ी वीरता वाले धन को मांगें, अत्यन्त यत्न  
से मनने योग्य को सुन्दर स्तोत्रों से [ और हविरूप ] अन्न  
से प्रसन्न करें, इन्द्र को सच्ची प्रवल पुकारों से प्रसन्न  
करें, पूजने योग्य को प्रवल पुकारों से प्रसन्न करें ॥ ७ ॥

इन्द्रोदेवता, अतिशक्तीछन्दः। १२। १०। ७। ७। ७। ७। ७। ७।

प्र॒प्रा॒वो॒अ॒स्मे॒स्वय॑शोभि॒रु॒ती परि॑-  
व॒र्ग॒इन्द्रो॑दु॒र्म॒तीनां॑ दरी॒म॒न्दु॒र्म॒ती-  
नाम् । स्वयं॑सा॒रि॒ष्य॒ध्वै॒यान॑उ॒पे॒षे  
अ॒त्रैः। ह॒ते॒म॒स॒न्न॒व॒क्षति॑क्षि॒प्ताजू॒र्णि-  
न॒व॒क्षति॑ । ८।

प्र॒ऽप्र	अ॒ग्रेऽग्रे	आगे आगे
वः	यु॒ष्माकम्	तुम्हारा
अ॒स्मे॒०	अ॒स्माकम् (त्रिमर्शः शो नादेशः)	हमारा
स्वय॑शः॒ऽभिः	निज॑यशोभिः	अपने यशो' से
ऊ॒ती	रक्ष॑कः (पूर्वसर्पणदीर्घः)	रक्षा करने वाला

अचैः	राक्षसैः	राक्षसों से
हता	विनष्टा	नष्ट हुई २
ईम्	एव	ही
असत्	भवेत् (अस्मिन्वि, लोटघडागमः)	हो
न	न	नहीं
वक्षति	प्राप्नोतु (घहतेल्लोटघडागमः)	प्राप्त हो
क्षिप्ता	क्षिप्ता	फेंकी हुई
जूर्णः	शक्तिः (निघं०, ४३)	घरछी
न	न	नहीं
वक्षति	प्राप्नोतु	प्राप्त हो

संस्कारार्थः ।

[हे आर्याः!] निजयशोमिः यूप्याञ्जल्यङ्गलम्  
[च] रक्षक इन्द्रः दुर्मतियुक्कानाम् [ विराजितान् ]



परिवर्जने अग्रेऽग्रे (भवतु,) दुर्मतियुक्तानां विदारणे  
[अग्रेऽग्रेभवतु,] या [शक्तिः] अस्मान् प्रतिप्राप्तुं  
राक्षसैः[प्रेरिता] सा स्वयं [तान् एव] हिसितुम् [निव-  
र्तेत,] [सा] हता एव भवेत्. [अस्मान्] न प्राप्नोतु,  
प्रक्षिप्ता [सा] शक्तिः (अस्मान्) न प्राप्नोतु ॥ ८ ॥

मापार्थः ।

[हे आर्यो !] अपने यशोंके द्वारा तुम्हारे [और]  
हमारे रक्षक इन्द्र खोटी बुद्धि वाले [विरोधियों] के  
दूर हटाने में आगे आगे [हों,] खोटी बुद्धि वालों के  
चीर डालने में (आगे आगे हों,) जो (बरछी) हमारी-  
ओर आने के लिये राक्षसों ने चलाई है वह स्वयं (उन  
ही को) मारने के लिये (लौटे,) हमारे पास न पहुँचे, फँकी  
हुई (वह) शक्ति (हमारे पास) न पहुँचे ॥ ८ ॥

इन्द्रो देवता, अतिशक्वरी छन्दः १०।८।८।८।७।११।८

तवं न इन्द्राया परीणसा याहि  
पथाँ अनेहसा परीयाह्यरक्षसा । सच-  
म्बनः पराकथा सचस्वास्तमीकथा ।

पाहि॒नोदू॒रादा॒राद॒भिष्टि॒भिः सदा॑  
पा॒ह्यभि॒ष्टिभिः ॥ ६ ॥

त्वम्

नः

इन्द्र

राया

परी॒णसा

या॒हि

पथा

अ॒ने॒हसा

प॒रः

त्वम्

अस्माकम्

हे इन्द्र !

धनेन सह

बहुना  
(निघं०३१)

प्राप्नुहि

मार्गेण

विघ्नरहितेन

अग्रतः

तू

हमारे

हे इन्द्र !

धन के साथ

बहुत के साथ

प्राप्त हो

मार्ग से

निर्विघ्न से

आगे

याहि	प्राप्नुहि	प्राप्त हो
अरक्षसा	राक्षसरहितेन	राक्षसोंसे रहित
सचस्व	आ + सचस्व, सहवर्तिः	हुंश २ से साथि रहो
नः	अस्मान्	हम को
पराके	दूरे (निघं० ३।२६)	दूर में
आ	+आ	-
सचस्व	आ+सचस्व, सहतिष्ठ	साथ ठैरो
अस्तम्भुके	समीपे (निघं० २।१६)	समीप में
आ	+आ	-
पाहि	पाहि	पालन करो
नः	अस्मान्	हम को

दूरात्	दूरात्	दूर से
आरात्	समीपात् (अव्ययम्)	समीप से
{ अभिष्टि- ऽभिः	रक्षाभिः	सहायताओं से
सदा	सदा	सदा
पाहि	पाहि	पालन करो
{ अभिष्टि- ऽभिः	रक्षाभिः	सहायताओं से

संस्कृताथः ।

हे इन्द्र ! त्वमस्मान् बहुनाधनेन विघ्नरहितेन  
मार्गेण प्राप्नुहि, राक्षसरहितेन मार्गेण अग्रतः प्रा-  
प्नुहि, दूरे (सन्) अस्माभिः सह वर्तस्व, समीपे (सन्)  
(अस्माभिः) सह तिष्ठ, अस्मान् दूरान् समीपात् (च  
स्व-) रक्षाभिः पाहि, सदा रक्षाभिः पाहि ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र! आप हमको बहुत धन के साथ निर्विघ्न मार्ग से प्राप्त हों, राक्षसरहित मार्ग से सामने (आकर) प्राप्त हों, आप दूर होने पर हमारे साथ रहें, (और) समीप होने पर साथ ठहरें, आप दूर से (और) समीप से (अपनी) रक्षाओं द्वारा हमारा पालन करें, सदा रक्षाओं के द्वारा पालन करें ॥ ९ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृदत्यष्टिश्छन्दः । ११।१२।८।८।८।१२।८

त॒वं न॒ इन्द्रा॒या त॒रुष॒सो ग्र॑चि॒त्त्वा  
महि॒मा स॒क्षद॒वसे॑ म॒हे मि॒त्रं ना॒वसे॑ ।  
ओजि॑ष्ठ॒चा त॒रवि॒ता रथं॑ कज्जि॒चद॑-  
म॒र्त्य । अ॒न्यम॒स्मद्वि॑रि॒षेः कज्जि॑चद॒-  
द्विषो॑ रि॒रि॒क्षन्तं॑ चि॒दद्वि॑वः ॥ १० ॥

त्वम्

त्वम्

तू

नः	अस्मान	हम को
इन्द्र	हे इन्द्र!	हे इन्द्र
राया	धनेन	धन से
तरुषसा	तारयित्रा (निपातनात्साधुः)	तारने वाले से
उग्रम्	उग्रम्	उग्र को
चित्	खलु	सचमुच
त्वा	त्वाम्	तुझ को
महिमा	बलम् (भा०को०)	बल
सक्षत्	प्राप्नोतु (सक्षतिर्गतिकर्मा निघं० २।१४, लङ्येरलङघडभावः)	प्राप्त हो
अवसे	यशोऽर्थम् (भा० को०)	यश के लिये

म॒हे	मह॑ते	महान् के लिये
मि॒त्रम्	मित्र॑म्	मित्र
न	इव	की न्याई
अ॒व॒से	रक्ष॑णार्थम्	रक्षा के लिये
ओ॒जि॒ष्ठ	हे बल॑वत्तम !	हे सब से अधिक बल वाले
चा॒तः	हे पाल॑यितः !	हे पालने वाले
अ॒वि॒तः०	हे रक्ष॑क !	हे रक्षक
रथ॑म्	रथो॑पलक्षितं वीर॑म्	वीर को
कम्	कम् + चित्, प्रत्ये॒	प्रत्येक को
चि॒त्	कम् + चित्	—
अ॒म॒र्त्य	हे मरण॑रहित !	हे मरण से रहित

अन्यम्	अन्यम्	दूसरे को
अस्मत्	अस्मत्तः	हम से
रि॒रि॒षेः	पीडय (रिपहिंसायां लिङ्गविक- रणस्य इच्छाच्छान्दसः)	पीड़ा दो
कम्	कम् + चित्	किसी को
चित्	+ चित्	—
अ॒द्रि॒ऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी
रि॒रि॒क्षन्तम्	पीडयितुमिच्छ- न्तम् (सन्नि किस्वाद् गुणा- भावः)	पीड़ा देने की इच्छा करते हुए को
चित्	खलु	सच मुच
अ॒द्रि॒ऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी

संस्कृतार्थः ॥

हे बलवत्तम ! पालयितः ! मरणरहित ! इन्द्र !  
त्वमस्मान् तारयित्रा धनेन ( प्राप्नुहि, ) उग्रं त्वां  
मित्रमिव यशोऽर्थं बलं प्राप्नोतु, महते यशसे (बलं



प्राप्नोतु), हे प्रत्येकं वीरं रक्षितः ! वज्रिन् ! अस्मत्तो-  
 ऽन्यं कञ्चित् पीडय ! हे वज्रिन् ! (अस्मान्) पीड-  
 यितुमिच्छन्तं खलु (पीडय) ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे सब से अधिक बल वाले ! पालने वाले !  
 मरण से रहित ! इन्द्र ! आप हमें तारने वाले धन  
 के साथ (प्राप्त हों,) उग्ररूप आपको मित्र की  
 न्याईं यश के लिये बल प्राप्त हो, बडे, यश के लिये  
 (बल प्राप्त हो) हे प्रत्येक वीर के रक्षक ! वज्रधारी !  
 हमसे दूसरे किसी को पीडित करो, हे वज्री ! जो  
 (हमको) पीड़ा देने की इच्छा करता है सचमुच उस  
 को (पीडित करो) ॥ १० ॥

इन्द्रोदेवता, स्वराडित्यष्टिश्छन्दः ॥ १० ॥ ११ ॥ ७ ॥ ८ ॥ १२ ॥ १०

प्राहि॑न् इन्द्र॑ सु॒ष्टु तस्मि॑न् धो व॒याता-

सद॑मिहु॒र्मम॑तीनां दे॒वः सन्तु॑र्म॒मती॑

नाम् । ह॒न्ता पा॒पस्य॑ र॒क्षस॑स॒चाता॑ विप्र-

स्य॑ मा॒वतः॑ । अधा॒हित्वा॑ ज॒निता॑ जी-

जनद्व॑सो रक्षो॒ह॑णं॒ त्वा॒जी॒जनद्व॑सो । ११ ।

पा॒हि	पाहि	रक्षा करो
नः	अस्मान्	हम को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
सु॒ऽस्तु॒त	हे सुष्टुत !	हे भली प्रकार से स्तुति किये गए
स्त्रि॒धः	पीडातः	पीडा से
अ॒व॒ऽया॒ता	अधः प्रापयिता (अन्तर्भावितव्यर्थः)	नीचे लेजानेवाला
स॒दम्	सदा	सदा
इत्	एव	ही
दुः॒ऽम॒ती॒नाम्	पापवृद्धीनाम्	पापवृद्धिवालों के
दे॒वः	देवः	देव

सन्	सन्	हुआ २
दुः॒ऽम॒ती॒नाम्	पापबुद्धीनाम्	पापबुद्धि वालों के
ह॒न्ता	हन्ता	नाश करने वाला
पा॒प॒स्य॑	पापिनः	पापी के
र॒क्ष॒सः	राक्षसस्य	राक्षस के
चा॒ता	रक्षिता	रक्षा करने वाला
वि॒प्र॒स्य॑	स्तोतुः	स्तुतिकरनेवालेकी
मा॒ऽव॒तः	मादृशस्य	मुझ सरीखे की
अ॒ध	अतः (सा० मा०)	इस लिये
हि	एव	ही
त्वा	त्वाम्	तुझ को

ज॒नि॒ता	पिता	पिता ने
जी॒जनत्	उत्पादितवान् (मदमावः)	उत्पन्न किया है
व॒सो०	हे धनवन् !	हे धन वाले
र॒क्षः॑ ह॒नम्	राक्षसानां हन्तारम्	राक्षसों के मारने वाले को
त्वा	त्वाम्	तुझ को
जी॒जनत्	उत्पादितवान् (,,)	उत्पन्न किया है
व॒सो०	हे धनवन् !	हे धन वाले

संस्कृतार्थः ।,

हे सुष्ठुत ! इन्द्र ! सदैव पापवुद्धीन् अधः प्रापयिता, देवः सन् पापवुद्धीन् अधः प्रापयिता पापिनो राक्षसस्य हन्ता मादृशस्य स्तोतुस्त्राता (च त्वम्) अस्मान् पीडातः पाहि, हे धनवन् ! अतएव पिता त्वामुत्पादितवान्, हे धनवन् ! राक्षसानां हन्तारं त्वामुत्पादितवान् । ११ ।

भाषार्थः ।

हे भली प्रकार से स्तुति किये गए ! इन्द्र ! सदा पाप वृद्धि वालों को नीचे ले जाने वाले, देवता होकर पापवृद्धि वालों को (नीचे ले जाने वाले,) पापी राक्षसों के नाश करने वाले ( और ) मुझ सरीखे स्तोता की रक्षा करने वाले आप हमें पीडा से बचावें, हे धन वाले ! इसी लिये पिता ने आपको उत्पन्न किया है, हे धनवान ! राक्षसों के मारने वाले आप को उत्पन्न किया है ॥ ११ ॥

इत्येकोनत्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

# ऋ० मं० १ सू० १३० ।

अग्निदेवता, परुच्छेपऋषिः ।

विनियोग :-

१-१० । एतत्सूक्तं पृष्ठवपडहस्य पठेऽहनि निष्केचलयम् (आ० ८।१।१७)

१ । 'एन्द्र'-इत्येवा महाप्रते माध्यन्दिनसवने ब्राह्मणाच्छंसिनोऽ-  
नुरूपतृचेऽपि विनियुक्ता (ऐ० आ० ५।१।१७)

२ । 'पियासोममिन्द्र'-इत्येवा होतुः पुरस्ताद् विनियुक्ता, "पठेऽहनि-  
माध्यन्दिनसवने प्रस्थितयाज्यानां पुरस्तादन्याश्रुचः प्रक्षेपणीयाः"  
इत्युक्तेः ।

## सूक्त का भावार्थ ।

हे इन्द्र ! आप दूर से हमारे पास आओ, जैसे सप्तपुरुषों के  
पालक भग्निदेव यज्ञों में आते हैं और जैसे सप्तपुरुषों के पालक राजा  
किसी के घर में आते हैं, हम सोम को निचोड़ कर दधियों को  
लिये हुए इकट्ठे मिलकर आप को बल की प्राप्ति के लिये बुलाते हैं,  
जैसे पुत्र पिता को बुलाते हैं, वैसे पूज्य आप को हम बल की प्राप्ति  
के लिये बुलाते हैं । १ । हे इन्द्र ! आप पत्थरों से निचोड़े हुए सोम  
को पीवें, जैसे मेघ से साँचे हुए तलाओं को घैल पीता है, अत्यन्त  
प्यासा घैल पीता है, वह सोम आप के लिये अत्यन्त बलकारक पान  
हो, मदकारी और कान्ति के देने वाला हो, आप को घोड़े सूर्य  
की न्याईं लायें, जैसे सय दिन सूर्य को लाते हैं । २ । परंतु मैं छिपे  
हुए निधि को जो गुफा में रक्खा हुआ था जैसे पक्षी का अण्डा  
पाथरों के बीच में छिपा रहना है ऐसे सीमारहित पत्थरों में  
छिपे हुए सूर्यके प्रकाशरूपी निधि को अद्विरामों में प्रधान इन्द्र  
भाकाश में से निकाल कर लाएँ, जैसे कोई गौमां के गोष्ठ को प्राप्त  
करने की इच्छा करता है ऐसे वज्रो इन्द्र ने छिपे हुए प्रकाश के गोष्ठ

को प्राप्त करके बलों को खोल दिया, छिपे हुए बलों के द्वार को खोल दिया । ३। इन्द्र ने वज्र को दानों हाथों में छड़ पकड़ कर फेंकने के लिये ऐसा पैनाया है कि जिस से जल की सी पतली धार हो, हे इन्द्र ! आप तेज, बल, और सामर्थ्य से युक्त होकर वृत्र को ऐसे काटते हो जैसे बढई धन के घृक्षों को, ऐसे काटते हो जैसे कोई कुल्हाड़े से काटता है । ४। हे इन्द्र ! आप ने नदियों को समुद्र में जाने के लिये सहज से रथों की न्याईं हांक दिया है जैसे बल की इच्छा से रथों को हांकते हैं, इस संगम से आगे इन उपकारी नदियों ने अपने क्षयरहित इकट्ठे धन को मिला दिया है, मानो ये मनुष्य के लिये सब धनों को देने वाली गोएँ इकट्ठी हुई २ हैं, जैसे मनुष्य जातिके लिये सब धनों को देने वाली गोएँ इकट्ठी होती हैं । ५। हे मेधावी इन्द्र ! धन की इच्छा करने वाले मनुष्यों ने इस स्तोत्र को आपके लिये ऐसे बनाया है जैसे बुद्धिमान कारीगर रथ को बनाते हैं, आपको सिंगारने के लिये यह स्तोत्र बनाया है जैसे युद्ध में वेग वाले यशस्वी घोड़े को सिंगारते हैं, जैसे बल और धनों की प्राप्ति के लिये घोड़े को सिंगारते हैं, सब धनों की प्राप्ति के लिये सिंगारते हैं । ६। हे नट ! इन्द्र ! आपने पूर के लिये और परम भक्त दिवोदास के लिये शनुओं के नव्वे गदों को तोड़ा है, हे नट ! आपने वज्र से गदों को तोड़ा है, मयानक इन्द्र ने अपने बल के द्वारा अतिथिग्व को बड़े बड़े धन देते हुए शम्बर दस्यु को पर्यंत से नीचे गिराया है, अपने बल द्वारा सब धनों को देते हुए नीचे गिराया है । ७। सैकड़ों रक्षाओं के साथ आकर इन्द्र ने अपने भक्त आर्य की युद्धों में स्वरक्षा की है, सब युद्धों में रक्षा की है, इस दस्युभूमि में उग्र सम्यता का प्रकाश फैलाने

३ सूर्य का प्रकाश ही इस पृथिवी पर सब बलों का उत्पादक है ।

के निमित्त किये हुए युद्धों में खूब रक्षा की है, वतहीन दस्युओं को खूब दंड देते हुए काले घमड़े<sup>०</sup> को मनु की सन्तान के अधीन किया है, यह अत्यन्त लोभी दस्युओं को जलाते हुए की न्याई नाश करते हैं, दुःखदाई दस्युजाति का अत्यन्त नाश करते हैं । १८। सूर्य ने उदय होकर बल से प्रकाश की परिधि को बढ़ाया है, यह लाली के होते ही असुरों की घाणी को हर लेते हैं, ईश्वर करते हुए सब ओर से हरलेते हैं, हे इन्द्र ! आप जो प्रेम करते हुए रक्षा के लिये दूर से आए हो, यह शीघ्रता करने वाले आप मनुष्य मित्र की न्याई संपूर्ण सुखों के देने वाले हो, समय दिनों शीघ्रता करते हुए की न्याई सुखों के देने वाले हो । १९। हे धीरों के कर्म करने वाले ! गढ़ों के तोड़ने वाले ! इन्द्र ! आप हम को नए स्तोत्र सुझा कर और हम से शुभ कर्म करवा कर अपनी रक्षाओं से हमारा पालन करो, और विद्योदास के वंश में उत्पन्न हुए जो हम हैं उन हम से स्तुति किये जाकर रूप बढ़ो जैसे दिन के प्रकाश से आकाश बढ़ता है ॥ १० ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

एन्द्रया॑ह्युप॑नःपरा॑वतो॑ नाय-

मच्छा॑वि॒दथा॑नीव॒सत्प॑ति॒ रस्तं॑रा-

जेव॑सत्पतिः । ह्वाम॑हेत्वाव॒यं प्र-



यस्वन्तःसुतेसचा । पुचासोनपित-  
 रंवाजसातये संहिष्ठंवाजसातये ।१।

आ	आ +	-
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
याहि	आ+याहि	आओ
उप	प्रति	की ओर
नः	अस्मान्	हम को
पराऽवतः	दूरदेशात् (निघं० ३।२६)	दूरदेश से
न	यथा	जैसे
अयम्	अयम्	यह
अच्छ	प्रति	की ओर

{ विदधानि- ऽइव	यजनस्थानानीव (निघं०।३।१७)	यज्ञ के स्थानों को जैसे
सत्ऽपतिः	सतां पालकः	सज्जनों के पालने वाला
अस्तम्	एहम् (निघं०।३।४)	घर को
राजाऽइव	राजेव	राजा की न्याई
सत्ऽपतिः	सतांपालकः	सज्जनों के पालने वाला
हवामहे	आह्वयामः	बुलाते हैं
त्वा	त्वाम्	तुझ को
वयम्	वयम्	हम
प्रयस्वन्तः	(हवीरूपेण)अन्नेन युक्ताः	(हवीरूप) अन्न से युक्त
सुते	(सोमे)निष्पीडिते	[सोमके] निचोड़े जाने पर

सचा	सहभूत्वा (यास्कः)	मिल कर
पचासः	पुत्राः (जसोऽसुगागमः)	पुत्र
न	इव	जैसे
पितरम्	पितरम्	पिता को
वाजऽसातये	बलस्य प्राप्तये	बल की प्राप्ति के लिये
मंहिष्ठम्	पूजनीयम्	पूजनीय को
वाजऽसातये	बलस्य प्राप्तये	बलकी प्राप्ति के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! ( त्वम् ) दूरादिवाऽस्मान्प्रत्यागच्छ  
यथा सतांपतिरयम् ( अग्निः ) यजनस्थानानि यथा  
( च ) सतांपतीराजा ( कस्यचित् ) गृहम् ( आगच्छति, )  
( सोमे ) निष्पीडिते ( हवीरूपेण ) अन्नेन युक्ता वयं सह-  
भूत्वा त्वां बलस्य प्राप्तये आह्वयामः यथा पुत्राः पित-  
रम् ( आह्वयन्ति, ) पूज्यम् ( त्वाम् ) बलस्य प्राप्तये  
( आह्वयामः ) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! आप दूरसे मानो हमारे पास आओ जैसे सज्जनों के पालक यह (अग्नि) यजनके स्थानों की ओर ( आते हैं और ) जैसे सज्जनों के पालक राजा (किसी के) घर में (आते हैं,) (सोम के) निचोड़े जाने पर (हवीरूप) अन्न से युक्त हम इकट्ठे होकर आपको बलकी प्राप्ति के लिये बुलाते हैं, जैसे पुत्र पिता को ( बुलाते हैं,) ( वैसे ) पूज्य आप को (हम) बल की प्राप्ति के लिये बुलाते हैं ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

पिवा॒सीम॑मिन्द्रसुवा॒नमद्रि॑भिः

को॒शेन॑सि॒क्तम॑व॒तंन॑वंस॒ग स्ता॑तृषा-

णो॒नवंस॑गः । मदा॑य॒हृद्य॑ताय॒ते तु-

वि॒ष्टमा॑य॒धाय॑से । आ॒त्वाय॑च्छन्तु

ह॒रितो॑न॒सृद्य॑ म॒हावि॒श्वेव॑सू॒द्यम् । २।

पिब	पिब	पीओ
सोमम्	सोमम्	सोम को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
सुवानम्	सयमानम् (कर्मणिकर्तृप्रत्ययः)	निचोडे, जाते हुए को
अद्रिऽभिः	प्रावभिः	पथरों से
कोशेन	मेघेन (निघं०१।१०)	मेघ के द्वारा
सिक्तम्	सिक्तम्	सींचे हुए को
अवतम्	जलाशयम् (आ०को०)	तलाओ को
न	इव	जैसे
वंसगः	बलीवर्दः	बैल
ततृषाणः	अतितृषितःसन्	अत्यन्त प्यासा हुआ २

न	इव	जैसे
वंसगः	बलीवर्दः	वैल
मदाय	मदाय	मद के लिये
हृर्यताय	कान्तये (हर्यतिःकान्तिकर्मा, निघ०२।८)	कान्ति के लिये
ते	तव	तेरे
तुविऽतमाय	वलवत्तमाय	अत्यन्त बलवान्
धायसे	पानाय (धेदपाने छान्दसोऽ- सुन् )	के लिये पान करने के लिये
आ	आ +	-
त्वा	त्वाम्	तुझ को
यच्छन्तु	आ+यच्छन्तु, आवहन्त	लावें

ह॒रितः॑	अश्वाः	घोडे
न	इव	जैसे
सूर्य॑म्	सूर्यम्	सूर्य को
अ॒ह्ना॑	अहानि ( शैलौषः )	दिन
वि॒प्र॒वाऽद्व॑व	सर्वाणीव ( " )	सचकी न्याईं
सूर्य॑म्	सूर्यम्	सूर्य को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! ( त्वम् ) ग्रावभिःसूयमानं सोमं पिव, यथा मेघेन सिक्तं जलाशयं वलीवर्दः ( पिवति, ) अतीव तृपितः वलीवर्दः ( पिवति, स सोमः ) तव मदाय, कान्तये, चलवत्तमाय पानाय ( च भवतु ) त्वामश्वा सूर्यमिव आवहन्तु यथा सर्वाणि दिनानि सूर्यम् ( आवहन्ति ) । २

माषार्थः ।

हे इन्द्र ! आप पत्थरों से निचोड़े जाते हुए सोम को पीवें जैसे मेघ से सींचे हुए तलाओं को

वैल पीता है, अत्यन्त प्यासा वैल पीता है, (वह सोम) आप के मद के लिये, कान्तिके लिये और अत्यन्त बलकारक पानके लिये (हो,) आपको घोड़े सूर्य की न्याड़ लावें जैसे सब दिन सूर्य को (लाते हैं) ॥२॥

इन्द्रोदेवता, निचृदत्यष्टिश्छन्दः।१२।११।८।८।८।१२।८

अविन्दद्वि॒वोनि॒हितं॒गुहानि॒धिं

वे॒र्नग॒र्भपरि॑वी॒तम॒शम॑न्य न॒न्तेअ॒न्तर॒-

श॒मनि॑ । ब्र॒जं॒व॒ज्री॒गवा॑मि॒व सि॒षास॒-

न्नङ्गि॑रस्तमः । अ॒पा॒वृ॒णो॒दिष॒इन्द्रः॒

परी॑वृ॒ता॒द्वा॒र॒दूषः॒परी॑वृ॒ताः । ३ ।

अविन्दत्	अन्विष्यलब्धवान्	ढूँढकर प्राप्त किया
दिवः	दिवः	द्यौ से



निऽहितम्	स्थापितम्	रक्खी हुई को
गुहा	गुहायाम् (सप्तम्यालुक्)	गुफा में
निऽधिम्	निधिम्	निधि को
वेः	पक्षिणः	पक्षी के
न	इव	की न्याई
गर्भम्	अण्डम्	अण्डे को
परिऽवीतम्	परिवेष्टितम् (वीगतौ)	चारों ओर से ढके
अश्रमनि	अश्मनि	पत्थर में हुए को
अनन्ते	सीमारहिते	सीमा से रहित में
अन्तः	मध्ये	बीच
अश्रमनि	पर्वते	पर्वत में

व्रजम्	गोष्ठम्	गोष्ठ को
वज्री	वज्रधारी	वज्रधारी
गवाम्ऽद्व	गवामिव	गौओं के जैसे
सिसासन्	प्राप्तुमिच्छन् (पण सम्मत्तौ)	प्राप्त करने की इच्छा करता हुआ
अङ्गिरःऽतमः	अङ्गिरस्सु मुख्यः	अंगिराओं में मुख्य
अप	अप +	—
अवृणोत्	अप+अवृणोत्, अपावृतवान्	खोल दिया है
दूषः	बलानि	बलों को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र ने
परिऽवृताः	परिवेष्टितानि	ढके हुआं को
द्वारः	द्वाराणि	द्वारों को

दूषः	अन्नस्य	अन्न के
परिवृताः	परिवेष्टितानि	ढके हुआँ को

संस्कृतार्थः ।

अङ्गिरस्सु मुख्य इन्द्रः पक्षिणः अण्डमिव अश्मनि परिवेष्टितं सीमारहितपर्वतमध्ये ( परिवेष्टितम् ) गुहायां निहितं निधिं दिवोऽन्विष्य लब्धवान्, वज्री (सः) गवांगोष्ठमिव (ज्योतिर्गोष्ठम्) प्राप्तु-  
मिच्छन् परिवेष्टितानि चलानि अपावृतवान्, परिवे-  
ष्टितानि चलस्य द्वाराणि अपावृतवान् ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

अंगिराओं में मुख्य इन्द्र ने पक्षी के अंडे की न्याई पत्थर में चारों ओर से ढके हुए सीमारहित पर्वत में (ढके हुए) गुफा में रखे हुए खजाने को धी से ढूँढकर प्राप्त किया, (उस) वज्री ने गौओं के गोष्ठ की न्याई (प्रकाश के गोष्ठ) को प्राप्त करने की इच्छा करते हुए ढके हुए चलों को खोल दिया, ढके हुए चल के द्वारों को खोल दिया ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिइन्द्रः । १२।१२।८।८।१२।८

दाहृहाणोवज्रमिन्द्रो गभस्तयोः

क्ष॒प्ते॒व॒ति॒ग्म॒म॒स॒ना॒य॒सं॒ग्र॒य॒ द॒हि॒ह॒-  
 त्या॒य॒सं॒ग्र॒य॒त् । सं॒वि॒व्या॒न॒ओ॒ज॒सा॒ श॒-  
 वो॒भि॒रि॒न्द्र॒म॒ज्ज॒म॒ना॒ । त॒ष्टे॒व॒हृ॒क्षं॒व॒नि॒-  
 नो॒नि॒हृ॒क्ष॒च॒सि॒ पर॒प्र॒वे॒व॒नि॒हृ॒क्ष॒च॒सि॒ ।४।

द॒ह॒हा॒णः	दृढं गृह्णन् (दृहवृद्धौ, लिटः कानच्)	दृढ पकड़ता हुआ
व॒ज्र॒म्	वज्रम्	वज्र को
इ॒न्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र ने
ग॒भ॒स्त्वोः	बाह्योः (निघं० २।४)	दोनों भुजाओं में
क्ष॒प्ते॒व॒हृ॒क्ष	उदकमिव (निघं० १।१२)	जल की न्याई
ति॒ग्म॒म्	तीक्ष्णं यथास्या- त्तथा	जैसे पैना हो

असनाय

क्षेपणाय

फैंकने के लिये

सम्

सम्+

-

प्रयत्

सम्+प्रयत्, सम्यक्

खूब पैनाया है

तनूकृतवान्

(शोतनूकरणे, ओताइय  
नीत्योकारलोपोऽ  
डमाघइव)

{ अहिऽह-  
त्याय

वृत्रस्यहननाय  
(लिङ्गव्यत्ययः)

वृत्र के मारने के  
लिये

सम्

सम्+

-

प्रयत्

सम्+प्रयत्,  
सम्यक् तनूकृत-  
वान्

खूब पैनाया है

{ सम्ऽवि  
व्यानः

संयुक्तः सन्  
(योगतौ लिङाकानच्)

मिला हुआ

ओजसा

तेजसा

तेज से

शवःऽभिः	शक्तिभिः	शक्तियों से
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मज्जमना	बलेन	बल से.
तष्टाऽद्भुव	तष्टेव	जैसे तक्षक
वृक्षम्	वृक्षम्	वृक्ष को
वनिनः	वनसम्बन्धिनः	वनों के
नि	नि +	—
वृक्षचसि	नि + वृक्षचसि, नितरां छिनत्सि (ग्रन्थ छेदने)	खूब काटते हो
परश्रवाऽद्भुव	परशुनेव	कुल्हाड़े से मानो
नि	नि +	—
वृक्षचसि	नि + वृक्षचसि, नितरां छिनत्सि	खूब काटते हो

संस्कृतार्थः ।

इन्द्रः वज्रं बाह्वोः दृढंधारयन् क्षेपणार्थं उदक-  
मिवतीक्ष्णीकर्तुं सम्यक्तनूकृतवान्, वृत्रस्यहननाऽर्थं  
सम्यक्तनूकृतवान्, हे इन्द्र ! (त्वम्) तेजसा शक्तिभि-  
र्बलेन (च) संयुक्तः सन् तष्टावनवृक्षमिव (तं वृत्रम्)  
नितरां छिनत्सि, परशुना इव छिनत्सि ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

इन्द्रने वज्र को दोनों भुजाओं में दृढ पकड़ कर  
फैंकने के लिये जलकी न्याईं धार देने के लिये खूब  
पैनाया है, वृत्रके मारने के लिये खूब पैनाया है, हे  
इन्द्र ! आप तेजसे शक्तियोंसे (और) बलसे युक्त होकर  
उस (वृत्र) को खूब काटते हो जैसे तक्षक (बढ़ई) वन  
के वृक्षों को (काटता है, आप उस वृत्रको) ऐसे काटते  
हो मानो कुल्हाड़े से (कोई काटता है) ॥४॥

इन्द्रोदेवता अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

त्वं वृथा न द्य इन्द्र स त्वे च्छास-

तज्जति ७७७ समानमर्थमधि-

तम् । धेनूरिवमनवेविप्रवदोहसो ज-  
नायविप्रवदोहसः ॥ ५ ॥

त्वम्	त्वम्	तूने
वृथा	अनायासेन	सहज से
नद्यः	नदीः (द्वितीयार्थे प्रथमा)	नदियों को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हेइन्द्र
सर्वे	गन्तुम्	चलने के लिये
अच्छ	प्रति	की ओर
समुद्रम्	समुद्रम्	समुद्र को
असजः	सृष्टवानसि	छोड़ा है
रथान्ऽइव	रथानिव	जैसे रथों को



वाज॑ऽय॒तः	वल॑मिच्छ॒तः	वल की इच्छा
रथान्॑ऽइव	रथानि॑व	करने वालों को जैसे रथों को
इ॒तः	इ॒तः	यहां से
ऊ॒तीः	साहाय्य॑दा॒त्र्यः (सुणामितिपूर्वसवर्ण- दीर्घः)	सहायता देने वालों ने
अ॒यु॒ज्ज॒त	योजित॑व॒त्यः	मिलाया है
स॒मा॒नम्	स॒मा॒नम् (क्रियाविशेषणम्)	इकट्ठे को
अ॒र्थम्	ध॒नम् (॥)	धन को
अ॒क्षि॑तम्	क्षय॑रहितम्	नाश न होने वाले को
धे॒नूऽइ॒व	गाव॑इव	गौओं की न्याईं
म॒न॒वे	मनु॑ष्याय	मनुष्य के लिये

{ विप्रवऽदो हसः	सर्वार्थदोग्ध्यः	सम्पूर्ण धनों के देने वाली
जनाय	मनुष्यजातये	मनुष्य जाति के लिये
{ विप्रवऽदो हसः	सर्वार्थदोग्ध्यः	सम्पूर्ण धनों के देने वाली

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! त्वं नदीः अनायासेन समुद्रं प्रति गन्तुं  
रथानिव विसृष्टवानसि, बलमिच्छतो रथानिव  
(विसृष्टवानसि,) साहाय्यदात्र्यः (एताः) क्षयरहितं  
समानंधनमितोऽग्रेयोजितवत्यः यथा सर्वार्थदोग्ध्यः  
गावोमनुष्याय, यथा सर्वार्थदोग्ध्यो मनुष्यजातये । ५।

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! आपने सहजसे नदियों को समुद्र की  
ओर जाने के लिये रथों की न्याईं छोड़ा है, बल चाहने  
वाले रथों की न्याईं (छोड़ा है) इन सहायता देने  
वालिओं ने नाश न होने वाले समान धन को, यहां  
से आगे मिलाया है जैसे मनुष्य के लिये सब धनो

क०मं०१ सू०१३०मं०६ ( ३५७६ )

को देने वाली गौएँ, मनुष्य जाति के लिये सब  
धनों को देने वाली (गौएँ) ॥ ५ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ॥ १२॥१२॥८८॥१२॥८

इ॒मां॒ते॒वा॒चं॒व॒सू॒यन्त॑ आ॒य॒वो रथं॑ न

धी॒रः॒स्व॒पा॒थ॒तक्षि॑षुः सु॒म्ना॒य॒त्वा-

म॒तक्षि॑षुः । शु॒म्भन्तो॒जे॒न्य॑यथा॒वा॒जै-

षु॒वि॒प्र॒वा॒जि॒नम् । अ॒थ॒य॒मि॒व॒श॒व॒से॒सा-

त॒ये॒ध॒ना॒ वि॒प्र॒वा॒ध॒ना॒नि॒सा॒त॒थे ॥ ६ ॥

इ॒मा॒स्

इ॒मा॒म्

इस को

ते

तु॒भ्य॒म्

तेरे लिये

वा॒च॒म्

वा॒णी॒म्

वाणी को

वसु॒ऽयन्तः॑	धनं कामयमानाः	धन की कामना करते हुए
आयवः॑	मनु॒ष्याः (निघं० २।३)	मनु॒ष्यों ने
रथम्	रथम्	रथ को
न	इव	जैसे
धीरः॑	धीमन्तः (सु॒षामिति विम॒लैः सुः)	बुद्धिमान्
सु॒ऽअपाः॑	कुर्मकशलः (अप॒रति कर्मनाम निघं० २।१ सु॒षामिति विम॒लैः सुः)	कारीगर
अत॒क्षि॒षुः	निर्मितवन्तः	बनाया है
सु॒म्नाय॑	सुखाय (निघं० ३।६)	सुख के लिये
त्वाम्	त्वाम्	तुझ को
अत॒क्षि॒षुः	निर्मितवन्तः	बनाया है

शुम्भन्तः	अलङ्कुर्वन्तः	सिंगारते हुए
जन्यम्	जयशीलम्	जीतने वाले को
यथा	यथा	जैसे
वाजेषु	सङ्ग्रामेषु (निघं० २१७)	युद्धों में
विप्र	हे मेधाविन् !	हे विशेष बुद्धिवाले
वाजिनम्	वेगवन्तम्	वेगवाले को
अत्यम्ऽद्वय	अश्वमिव	घोड़े को जैसे
शवसे	बलाय	बल के लिये
सातये	प्राप्तये	प्राप्त के लिये
धना	धनानि (शैल्लोपः)	धनों को
विप्रवा	सर्वाणि (,,)	सब को

धनानि

धनानि

धनों को

सातये

प्राप्तये

प्राप्ति के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे मेधाविन् ! (इन्द्र ! ) धनं कामयमानामनुष्याः  
 तुभ्यमिमाम् (स्तोत्ररूपाम्) वाचं निर्मितवन्तः यथा  
 बुद्धिमन्तः कर्मकुशलाः (तक्षकाः) रथम् (निर्मितम्)  
 त्वामलङ्कुर्वन्तः (सन्तः) सुखाय (इदंस्तोत्रं निर्मित-  
 वन्तः) यथा संग्रामेषु वेगवन्तः जयशीलम् (चाऽश्व-  
 मलङ्कुर्वन्ति) यथा बलाय धनप्राप्तये (च अलङ्कु-  
 र्वन्ति) सर्वाणि धनानि प्राप्तुम् (अलङ्कुर्वन्ति) ॥ ६॥

भाषार्थः ।

हे मेधावी (इन्द्र ! ) धन की इच्छा करने वाले  
 मनुष्यों ने आपके लिये इस (स्तोत्ररूप) वचन को  
 बनाया है जैसे बुद्धिमान कारीगर रथ को (बनाते  
 हैं) आप को सिंगारते हुए सुख के लिये (यह स्तोत्र  
 बनाया है) जैसे युद्धमें वेगवाले (और) जयशील (घोड़े)  
 को (सिंगारते हैं) जैसे बल (और) धनों की प्राप्ति के  
 लिये घोड़े को (सिंगारते हैं) सम्पूर्ण धनों की प्राप्ति  
 के लिये (सिंगारते हैं) ॥ ६॥

इन्द्रो देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

भि॒नत् पु॒री न॒व॒ति मि॒न्द्र पू॒र वे॒ दि॒वो-  
दा॒सा य॒म हि॒दा शु॒षे नृ॒तो व॒ज्रे॒ण दा॒शु-  
षे नृ॒तो । अ॒ति॒थि॒ग्वा य॒श॒म्ब॒रं गि॒रे रु॒-  
ग्यो अ॒वा॒भ॒रत् । म॒हो॒ध॒ना नि॒द॒य॒मा॒न-  
ओ॒ज॒सा वि॒श्व॒ा ध॒ना न्यो॒ज॒सा ॥ ७ ॥

भि॒नत्	विदारितवानसि (अडनावोषधन व्यत्ययश्च)	तूने तोड़ा है
पु॒रः	पुराणि	गढ़ों को
न॒व॒तिम्	नवतिम्	नव्वे को
इ॒न्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
पू॒र वे॒	पूरवे	पूरू के लिये

{ दिवः५ दासाय	दिवोदासाय	दिवोदास के लिये
महि	महते (चतुर्थ्यर्थे सप्तमी)	महान के लिये
दाशुषे	भक्ताय	भक्त के लिये
नृतो०	हे नर्तक !	हे नट
वज्रेण	वज्रेण	वज्र से
दाशुषे	भक्ताय	भक्त के लिये
नृतो०	हे नर्तक !	हे नट
{ अतिथिः५ गवाय	अतिथिगवाय	अतिथिग्व के लिये
शम्बरम्	शम्बरम्	शम्बर को
गिरेः	पर्वतात्	पर्वत से



उग्रः	उग्रः	उग्र ने
ध्रुव	अव+	-
अभरत्	अव+अभरत्, अधःपातितवान्	नीचे गिराया है
महः	महान्ति	महानों को
धनानि	धनानि	धनों को
दयमानः	ददानः (दयदाने)	देता हुआ
ओजसा	तेजसा	तेज से
विप्रवा	सर्वाणि (शेर्लोपः)	सब को
धनानि	धनानि	धनों को
ओजसा	बलेन	बल से

संस्कृतार्थः ।

हे नर्तक ! इन्द्र ! (त्वम्) पूरवे, महते भक्ताय दिवो

# क्र० सं० ७५-७६ अङ्कयोः शुद्धचशुद्धि पत्रम् ।

पृ० पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्	पृ० पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३३९४	१२	सुऽ सुऽ	३४४९	१२	भायवे भायवे
३३८८	७	घोरणा घोरणा	३४५२	१५	शुमेत शुमेत
३३९९	१३	घृतस्य घृतस्य	३४५४	१३	(गेलोप)
३४०९	१	सुप्रताः सुप्रताः			(गेलोपः)
३४१३	११	य यः	३४५५	१	हृषी हृषी
३४१७	७	कक्षा कक्षी	३४६०	१०	मृजे मृजे
३४१८	११	अस्यः अस्यः	३४६३	४	देवेप देवेप
३४२२	१३	मन मन	३४६४	१३	त्वम त्वम्
३४२२	१४	सुमन्ध सुमन्ध	३४६६	८	वत वत
३४२२	१६	पजाः पजाः	३४६७	१३	सेवितम्
३४२४	२	जिह्वोने जो			सेवितुम्
३४२५	१५	परऽ परिऽ	३४६७	१२	देवान देवान्
३४२६	६	ह्यम् मह्यम्	३४६७	१४	अतो अतो
३४२८	१४	सम्यक् सम्यक्	३४६८	१०	मनये । मनये ।
३४३७	२	जुतये जुतये	३४७०	११	(गुड) (गुड्)
३४३८	१	शुक्र शुक्र	३४७४	३	महि महि
३४४३	१५	का की	३४७५	१२	(आहार)
३४४४	४	पुरुणि पुरुणि			(आहर)
३४४४	१२	अन+ अनु+	३४८०	८	योग्य योग्य
३४४५	१०	हवि हवि	३४८३	७	मुपा मुपा
३४४८	१०	सुदर्श सुदर्श	३४८४	११	त्वम त्वम्
			३४८५	२	ऽऽक् ऽऽक्

अंक ७९-८०]

[मार्गशीर्ष-पौष १९६९]

# ऋग्वेद संहिता

## (वैदिक जीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद  
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर  
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदेवशास्त्री  
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने  
सम्पादन किया ।

लाहौर

पञ्जाब एकाग्रीमीकल बन्धालय में प्रिण्टर साहू  
खालसन के अधिकार से छपा ।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

८० अंकों का मूल्य १४॥॥)

दासाय(च)नवतिम्(शत्रु-)पुराणि विदारितवानसि, हे  
नर्तक ! (त्वम् ) भक्ताय वज्रेण (विदारितवानसि,)   
उग्रः (स इन्द्रः) तेजसा अतिथिग्वाय महान्ति धनानि  
ददानः (सन्) शम्बरं पर्वतादधःपातितवान्, तेजसा  
सर्वाणि धनानि (ददानःसन्नधःपातितवान् ) ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे नट ! इन्द्र ! आपने पुरुके लिये [और] बड़े  
भक्त दिवोदास के लिये [शत्रुओं के] नब्बे गढ़ों को  
तोड़ा है, हे नट ! अपने भक्त के लिये वज्र से (तोड़ा है)  
उस उग्र ने (अपने) तेज से अतिथिग्व को बड़े बड़े  
धन देते हुए शम्बर को पर्वत से नीचे गिराया है,  
ने सब धनों को (देते हुए नीचे गिराया है) ॥७

देवता, अत्यष्टिइन्द्रः १२।१२।८।८।१२।८

इन्द्रः सुमत्सुयजमानमाय्यं प्रा-

स्वेषु शतमूतिराजिषु स्वमौल्य-  
हेष्वाजिषु । मनवेशा सद्व्रतान् त्वचं

कृष्णामरन्धयत् । दक्षन्नविप्रवंत-

तृषाणमोषति न्यर्शसानमोषति । ८ ।

इन्द्रः

इन्द्रः

इन्द्र ने

समत्सु

सङ्ग्रामेषु  
(निघ० २।१७)

युद्धों में

यजमानम्

यजमानम्

यजन करते  
हुए को

आर्यम्

आर्यम्

आर्य को

प्र

प्र+

-

आवत्

प्र+आवत्, प्रक-  
र्षेण रक्षितवान्

खूब रक्षा की है

विप्रवेषु

सर्वेषु

सब में

शतम्ऽजतिः

शतरक्षोपेतः

सैकड़ों रक्षाओं से

आजिषु

सङ्ग्रामेषु

युक्त  
युद्धों में

{ स्वःऽ मीळहेषु	ज्योतिर्निमित्तेषु सङ्ग्रामेषु	प्रकाश के निमित्त युद्धों में
आजिषु	सङ्ग्रामेषु	युद्धों में
मनवे	मनोः प्रजायै	मनु की प्रजा के लिये
शासत्	शासत्	दंड देता हुआ
अव्रतान्	व्रतरहितान्	व्रतहीनों को
त्वचम्	त्वचम्	त्वचा को
कृष्णाम्	कृष्णाम्	काली को
अरन्धयत्	आयत्तीकृतवान्	बस में किया है
धक्षत्	दहन्	जलाता हुआ
न	इव,	मानो
विश्वम्	सर्वम्	सब को

त॒तृ॒षाण॑म्	अतिलोभिनम्	अत्यन्त लोभी को
ओ॒ष॒ति	नाशयति (भा० को०)	नाश करता है
नि	नि +	-
अ॒र्श॒सान॑म्	दुःखदायिनम्	दुःख देने वाले को
ओ॒ष॒ति	नि + ओषति, नितान्तं नाशयति	अत्यन्त नाश करता है

संस्कृतार्थः ।

शतरक्षोपेतइन्द्रः संग्रामेषु विश्वेषु संग्रामेषु यज-  
मानमार्य्यं प्रकर्षेण रक्षितवान्, ज्योतिर्निमित्तेषु संग्रा-  
मेषु (प्ररक्षितवान्) व्रतरहितान् शासत् (सन्) कृष्णां  
त्वचं मनोःप्रजायै आयत्तीकृतवान्, (सः) सर्वमति-  
लोभिनम् (दस्युसमूहम्) दहन्निव नाशयति, दुःख-  
दायिनम् (दस्युजातम्) नितान्तं नाशयति ॥८॥

भाषार्थः ।

सैकड़ों रक्षाओं से युक्त इन्द्र ने युद्धों में सब  
युद्धों में आर्य्य भक्त की खूब रक्षा की है, प्रकाश  
निमित्त युद्धों में (खूब रक्षा की है) व्रत हीनों को

दंड देते हुए काली त्वचा को मनु की सन्तान के अधीन किया है, वह सब अत्यन्त लोभी (दस्यु समूह को) जलाते हुए की न्याई नाश करते हैं, दुःख देने वाली (दस्युजाति का) अत्यन्त नाश करते हैं ॥ ८॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

सूर॑प्र॒चक्रं॑प्र॒हृज्ज॒जात॑ओज॒सा प्र-  
पि॒त्वेवा॑च॒मरु॒णोमु॑षायती शान॒आमु॑-  
षाय॑ति। उ॒शना॑यत्प॒राव॑तो ऽज॒गन्नु॑-  
तये॑कवे। सु॒म्नानि॑वि॒श्वाम॑नु॒षेव॑तर्व-  
णि र॒ह्यावि॑श्वेवतुर्व॒णिः ॥ ८ ॥

सूरः	सूर्यः]	सूर्य
चक्रम्	परिधिम्	घेरे को



प्र	प्र +	-
वृ॒ह॒त	प्र + वृ॒ह॒त्, प्रवर्धित॑ वान्	बढ़ाया
जा॒तः	उदितः (सन्)	उदय होकर
ओज॑सा	बलेन	बल से
प्र॒ऽपि॒त्वे	सामीप्ये (निघं० ३।२६)	निकट आने पर
वाच॑म्	वाचम्	वाणी को
अ॒रु॒णः	अरुणतायाः (प्रत्ययलोपे सति विभक्तोः सुः)	लाली के
मु॒षा॒य॒ति	अपहरति (मुपस्तेये, अहावपि शायजादेशदछान्दसः)	हरता है
ई॒शानः	ऐश्वर्य्य॑ दधानः	ऐश्वर्य्यवान्
आ	आ +	-
मु॒षा॒य॒ति	आ + मु॒षा॒य॒ति, सर्वतोऽपहरति	सब ओरसे हरता है

उ॒श॒ना॑	कामयमानः	कामना करता हुआ
यत्	यः (सुप्तामिति विमर्केर्लुक्)	जो
प॒रा॒ऽव॒तः॑	दूरदेशात् (निघं०) ३।२६	दूर देश से
अ॒ज॒गन्	प्राप्तवानसि (गमेःसिपि शपः श्लु- दृष्टान्दसः, हल्लुङ्घा- ब्लोपे 'भोनोधातोः' इतिनत्थम)	प्राप्त हुए हो
ऊ॒तये॑	रक्षणार्थम्	रक्षा के लिये
क॒वे	हे मेधाविन्!	हे विशेषबुद्धिवाले
सु॒म्नानि॑	सुखानि (निघं० ३।६)	सुखों को
वि॒प्र॒वा	सर्वाणि (श्लोषः)	सब को
म॒नु॒षा॒ऽइव॑	मनुष्य इव (विमर्केरात्वम्)	मनुष्य की न्याई

तुर्वणिः	त्वरायुक्तः (निघं० ४३)	शीघ्रता से युक्त
अह्ना	अहानि (अत्यन्तसयोगे द्वितीया)	दिनों में
विप्रवाऽद्वव	सर्वाणीव	सब में मानो
तुर्वणिः	त्वरायुक्तः	शीघ्रता से युक्त

संस्कृतार्थः ।

सूर्य्यउदितः (सन्) चलेन<sup>१</sup>[प्रकाशस्य] परिधिं प्रवर्धितवान्, (सः) अरुणतायाः सामीप्ये (रक्षसाम्) वाचमपहरति, ईशानः (सन्) सर्वत अपहरति, हे मेधाविन् ! (इन्द्र ! ) यः (त्वम्) कामयमानः (सन्) रक्षणार्थं दूरदेशात्प्राप्तवानसि (सः) त्वरमाणः (त्वम्) मनुष्य इव सर्वाणि सुखानि (ददासि,) सर्वाणि अहानि त्वरायुक्त इव (सुखानि ददासि) ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

सूर्य्य ने उदय होकर बलद्वारा (प्रकाश की परिधि को घटाया है (वह) लाली के आते ही (राक्षसों की) वाणी को हरते हैं, ईशान करते हुए सब ओर से हरते हैं, हे मेधावी इन्द्र ! आप जो प्रेम करते

हुए दूर से रक्षा के लिये आए हो, वह शीघ्रता करने वाले आप मनष्य (मित्र) की न्याईं सब सुखों को देते हो, सब दिनों शीघ्रता करते हुए की न्याईं (सुखों को) देते हो ॥९॥

इन्द्रो देवता, निचृत्त्रिष्टुप्लन्दः । ११ । ११ । १० । ११

स॒नो॒न॒व्ये॑भि॒र्हृष॑क॒र्मन्नु॒क्मैः

पु॒रां॑ द॒र्तः॒ प्रा॒युभिः॑ पा॒हि॒श॒ग्मैः । दि॒वो-

दा॒सेभि॑रिन्द्र॒स्तवा॑नो वा॒व॒धी॒था-

अ॒होभि॑रि॒व॒द्यौः । १० ।

सः	सः	वह
नः	अस्मान्	हम को
न॒व्येभिः	नूतनैः	नयों से
हृष॒क॒र्मन्	हे वीरकर्मन् !	हे वीरता के काम करने वाले

उ॒क्थैः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
पु॒राम्	पुराणाम्	गढ़ों के
द॒र्तः०	हे दारयितः !	हे तोड़ने वाले
पा॒युऽभिः	रक्षाभिः	सहायताओं से
पा॒हि	पाहि	रक्षा करो
श॒र्मैः	कर्मभिः (निघ०२।१)	कर्मों से
{ दि॒वःऽ	दिवोदासवंशीयैः	दिवोदास-
{ दा॒सेभिः		वंशीयों से
इ॒न्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
स्त॒वानः	स्तूयमानः (कर्मणि कर्तृप्रत्ययः)	स्तुति किया जाता
व॒ध्धी॒थाः	प्रवधंस्व (वृधेलिङि शपः प८१छान्दसः)	हुआ बढ़ो

अहोभिःऽइव	दिनैरिव	जैसे दिनों से
द्यौः	द्यौः	आकाश

संस्कृतार्थः ।

हे पुराणांदारयितः ! वीरकर्मन् ! इन्द्र ! सः  
(त्वम्) अस्मान् नूतनैः स्तोत्रैः कर्मभिः (स्व-)  
रक्षाभिः (च) पाहि, दिवोदासवशीर्यैः [च] स्तूयमानः  
(सन्) दिनेराकाशइव प्रवर्धस्व ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे गढ़ों के तोड़ने वाले ! वीरता के काम करने  
वाले ! इन्द्र ! वह (आप) नए स्तोत्रों से, कर्मों से  
(और अपनी) सहायताओं से हमारी रक्षा करो (और)  
दिवोदासवशीर्यों से स्तुति किये जाकर खूब बढ़ो  
जैसे दिन से आकाश [बढ़ता है] ॥१०॥

इति त्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ॥

# ऋ० मं० १ सू० १३१ ।

इन्द्रो देवता परच्छेपकृषिः ।

विनियोगः—

१-७ । पृष्ठघस्य पष्ठेऽहनि माध्यन्दिनसवने आद्यास्तित्तो मैत्रावरुणस्य, तृतीयाद्यास्तित्तो ब्राह्मणाच्छसिनः, पञ्चम्याद्यास्तित्तोऽच्छायाकस्य । (आ० ७ । १ । ४०) तत्रैवाऽहनि तस्मिन्नेव सवने प्रशास्तादीनां प्रस्थितयाज्याभ्यः पुरस्ताद् आदितः पटुचः प्रक्षेपणीयाः (आ० ८ । १ । १४) 'इन्द्रायहि' इति वृत्तो महाभते निष्केधल्ये वैकल्पिकानुरूपद्वितीयः (दे० भा० ५ । १)

## सूक्त का भावार्थ ।

बलवान् आकाश इन्द्र के सामने झुका है, यह विशाल पृथिवी जिस में बड़े २ चौड़े देश हैं इन्द्र के सामने झुकी है, चौड़े देशों के साथ प्रकाश की प्राप्ति के लिये झुकी है, सब देवताओं ने एक-विस्त होकर इन्द्र को अगवैया बनाया है, इसलिये मनुष्यों के यश इन्द्र के लिये हों, मनुष्यों के दान इन्द्र के लिये हों ॥ १ ॥ हे इन्द्र ! सब मनुष्य यशों में सब के साथ आप की ही धीर मानते हुए अलग अलग आपको प्राप्त होते हैं, प्रकाश की कामना करते हुए अलग अलग आप को प्राप्त होते हैं, उस नाव की न्याई पार लंधाने वाले आपको यशों से मागो घेत कराते हुए हम मनुष्य बलों का धुरंधर बनाते हैं, हम मनुष्य स्तोत्रों द्वारा इन्द्र को बलों का धुरंधर बनाते हैं ॥ २ ॥ हे इन्द्र ! रक्षा चाहने वाले स्त्री पुरुषों के जोड़े गीमों के झुंड की प्राप्ति के लिये हवि छोड़ते हुए आपको चारों ओर से घेरे हुए हैं, आपके पास जाते हुए और हवि को छोड़ते हुए चारों ओर से घेरे हुए हैं । हे इन्द्र ! अब दो जातियाँ गीमों की इच्छा करती

हुई और प्रकाश\* की इच्छा करती हुई एक देश में इकट्ठी होती हैं तब आप साथ में रहने वाले अपने वीर्यवान घज्र को प्रकट करते हो, साथ में रहने वाले घज्र को प्रकट करते हो † ॥ ३ ॥ हे इन्द्र ! आप के इस पराक्रम को मनुष्य जानते हैं जो आपने शरद ऋतु में बनाए हुए गढ़ों को तोड़ा है, दस्युओं को दबाते हुए आपने गढ़ों को तोड़ा है, हे सब बलों के स्वामी ! आपने यह न करने वाले दस्यु को दण्ड दिया है और इस विशाल पृथिवी और इन बलों को आर्यभक्त के लिये हरण किया है, मदयुक्त होकर पृथिवी और जलों को हरण किया है ॥ ४ ॥ हे वीर ! जब २ आपने सोम के मद में भक्तों की रक्षा की है और जब २ आपने मित्रता चाहने वालों की रक्षा की है तब २ आपके इस वीर्य को मनुष्यों ने प्रख्यात किया है, आपने इन आर्यभक्तों को युद्ध में प्रवृत्त करने का यत्न किया है, इसीलिये इन्होंने एक एक करके सब नदियों को ‡ जीत लिया है यश की इच्छा से जीत लिया है ॥ ५ ॥ आज की प्रभात में इन्द्र हमपर अवश्य प्रसन्न हों और पुकारों के साथ की हुई स्तुति और हवि की ओर ध्यान दें, प्रकाश की प्राप्ति के लिये पुकारों के साथ की हुई स्तुति और हवि की ओर ध्यान दें, हे घज्र-धारी वीर ! आप जो शत्रुओं के मारने की इच्छा करते हो यह आप सब से नए इस कवि के स्तोत्र को सुनो, इस सब से नए के स्तोत्र को सुनो ॥ ६ ॥ हे इन्द्र ! जो आप बल के लिये उत्पन्न हुए

\* प्रकाश से आन्तरिक प्रकाश या सभ्यता का प्रकाश अभि-प्रेत है ॥

† घज्र को प्रकट करने से तात्पर्य यह है कि उन जातियों में अवश्य युद्ध रहता है ॥

‡ अर्थात् पहले सिन्धु को फिर वितस्ता, मलिक्नी, पद्मणी, विपासा, शतद्र, गंगा, यमुना आदि को ॥



श्र०मं०१सू०१३१ मं०१ ( ३५९६ )

हो, खूब बढ़ते हुए और हम को चाहते हुए वह आप शत्रुता करने वाले उस मनुष्य को मारो जो हमें दुःख देने की इच्छा करता है, आप जो घड़े यशवाले हो वह आप हमारी सुनो और जैसे छोड़ता हुआ कष्ट दूर हो जाता है ऐसे हमारी दुर्बुद्धि को दूर करो, सम्पूर्ण दुर्बुद्धि को दूर करो ॥ ७ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः१२।१२।८।८।८।१२।८

इन्द्राय॑ हि॒ दी॒र॒सु॒रो॒अ॒न॒म॒न्ते॒-

न्द्राय॑ म॒ही॒पृ॒थि॒वी॒व॒री॑ म॒भिर्दु॑म्न॒सा-

ता॒व॒री॑ म॒भिः । इन्द्रं॑ वि॒प्र॒वै॒स॒जोष॑सी

दे॒वा॒सो॒द॒धि॒रे॒पुरः॑ । इन्द्राय॑ वि॒प्र॒वा॒स-

व॒ना॒नि॒मा॒नु॒षा रा॒ता॒नि॒स॒न्तु॒मा-

नु॒षा ॥ १ ॥

इन्द्राय	इन्द्राय	इन्द्र के लिये
हि	खलु	सचमुच

द्यौः	द्युलोकः	द्युलोक
असुरः	प्राणवान्, बलवा- नित्यर्थः	बलवान
अनमनत	नतवान् (ममेलङ्गिकर्मकर्तव्या- त्मनेपदं यगमावः छान्दसाशपाद्भुः, अनुनासिकलोपश्च)	झुका है
इन्द्राय	इन्द्राय	इन्द्र के लिये
मही	महती	विशाल
पृथिवी	पृथिवी	पृथिवी
वरीमऽभिः	उरुप्रदेशैः	चौड़े देशों के साथ
द्युम्नऽसाता	प्रकाशस्य प्राप्तये (विमक्तेरात्वम्)	प्रकाश की प्राप्ति के लिये
वरीमऽभिः	उरुप्रदेशैः	चौड़े देशों के साथ
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को

वि॒ष्ट्वै	सर्वे	सब
सऽजो॒षसः	समानमनस्काः	एक चित्त वाले
दे॒वासः	देवाः (जसोऽसुगागमः)	देवताओं ने
द॒धि॒रे	स्थापितवन्तः	रक्खा है
पु॒रः	अग्ने	आगे
इन्द्रा॒य	इन्द्राय	इन्द्र के लिये
वि॒ष्ट्वा	विश्वाः (शेर्लोपः)	सब
स॒वनानि	सोमाहुतयः	सोम की आहुतियाँ
मा॒नु॒षा	मनुष्यैर्दत्ताः (शेर्लोपः)	मनुष्यों से दाहुई
रा॒तानि	दानानि	दान
स॒न्तु	सन्तु	हों

मानुषा । मनुष्य-सम्बन्धानि । मनुष्यसंबन्धा  
(शैलेंपः)  
संस्कृतार्थः ।

इन्द्राय खलु बलवान् द्युलोको नतवान्, इन्द्राय  
उरुप्रदेशैः सह महती पृथिवी (नतवती,) उरुप्रदेशैः  
सह प्रकाशस्य प्राप्तये (नतवती,) इन्द्रं समान-  
मनस्काः सर्वे देवा अग्रे स्थापितवन्तः, इन्द्राय मनु-  
ष्यैर्दत्ताः सर्वाः सोमाहुतयो मनुष्यसम्बन्धीनि दा-  
नानि (च) सन्तु । १ ।

भाषार्थः ।

सचमुच इन्द्र के लिये बलवान् द्युलोक झुका  
है, इन्द्र के लिये चौड़े देशों के साथ विशाल पृथिवी  
झुकी (है,) चौड़े देशों के साथ प्रकाश का प्राप्ति के  
लिये (झुकी है,) इन्द्र को एकचित्त होकर सब देव-  
ताओं ने आगे रक्खा है, इन्द्र के लिये मनुष्यों से  
दी हुई संपूर्ण सोम की आहुतियाँ (और) मनुष्यों के  
(सब) दान हों । १ ।

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

विप्रवेष्टुह्रित्वा सवनेषु तु च्छजते ।

स॒मा॒न॒मे॒कं॒ वृ॒ष॒म॒ग॒य॒वः॒ पृ॒थ॒क् स्वः॑ स॒नि॒  
 ष्य॒वः॒ पृ॒थ॒क् । तं॒ त॒वा॒ना॒वं॒न॒प॒र्ष॒णिं॑ शू॒  
 ष॒स्य॑ धु॒रि॒धी॑ म॒हि । इ॒न्द्रं॒ न॒य॒ज्ञै॒रि॒च॒  
 त॒य॒न्त॒ आ॒य॒वः॒ स्तो॒मै॒भि॒रि॒न्द्र॒मा॒  
 य॒वः॑ ॥ २ ॥

वि॒पू॒र्वै॒षु	सर्वे॑षु	स॒व॒ म
हि	ख॒लु	स॒च॒मु॒च
त्वा	त्वा॒म्	तु॒झ॒ को
स॒व॒ने॒षु	सो॒म॒य॒ज्ञे॒षु	सो॒म॒य॒ज्ञों॑ में
तु॒ज्ज॒ते	प्राप्नु॑वन्ति	प्राप्त॑ होते हैं
स॒मा॒न॒न्	स॒मा॒न॒म्	सा॒झे॒ को

ए॒कम्	ए॒कम्	ए॒क को
वृ॒षऽम॒न्यवः	वी॒रं जा॒नन्तः	वी॒र जा॒नते हु॒ए
पृथ॑क्	पृथ॑क्	अ॒लग
स्वः०	प्र॒काश॑म्	प्र॒काश॑ को
स॒नि॒ष्ट्यवः	प्रा॒प्तुका॑माः	प्रा॒प्त कर॑ने की का॒मना॑ वाले
पृथ॑क्	पृथ॑क्	अ॒लग
तम्	तम्	उ॒स को
त्वा	त्वा॑म्	तुझ को
ना॒वम्	ना॒वम्	ना॒ओ को
न	इ॒व	की न्याई
प॒र्प॒णिम्	पा॒रयि॑तारम्	पा॒र कर॑ने वाले को

शूषस्य	बलरूपस्य (निघं० २।९)	बलरूप के
धुरि	धुरि	धुरे में
धीमहि	स्थापयामः	हम स्थापन करते हैं
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
न	इव	मानो
यज्ञैः	यज्ञैः	यज्ञों से
चितयन्तः	चेतयन्तः	चेत कराते हुए
आयवः	मनुष्याः	मनुष्य
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों के द्वारा
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
आयवः	मनुष्याः (निघं० २।३)	मनुष्य

संस्कृतार्थः ।

( हे इन्द्र ! सर्वे मनुष्याः ) सर्वेषु खलु सोमयज्ञेषु  
 ( सर्वेषाम् ) समानमेकं त्वां वीरं जानन्तः ( सन्तः ) पृथक्  
 प्राप्नुवन्ति प्रकाशप्राप्तिकामाः पृथक् ( प्राप्नुवन्ति )  
 नावमिव पारयितारं तं त्वामिन्द्रं यज्ञैश्चेतयन्त इव  
 ( वयम् ) मनुष्या बलस्य धुरि स्थापयामः, ( वयम् )  
 मनुष्याः स्तोत्रैरिन्द्रम् ( बलस्य धुरि स्थापयामः ) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

( हे इन्द्र ! सब मनुष्य ) सबसे संपूर्ण सोमयज्ञों  
 में ( सब के ) सांझे एक आपको वीर जानते हुए  
 अलग-अलग प्राप्त होते हैं, प्रकाश की प्राप्ति की कामना  
 वाले अलग-अलग ( प्राप्त होते हैं, ) नाओं की न्याईं पार  
 करने वाले उस आप इन्द्र को यज्ञों से मानो चेत  
 कराते हुए ( हम ) मनुष्य बल के धुरे पर स्थापन  
 करते हैं, ( हम ) मनुष्य स्तोत्रों से इन्द्र को ( बल के  
 धुरे पर स्थापन करते हैं ) ॥ २ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

वित्वा॑ततस्त्रे॑मि॒थुना॑ अव॒स्यवो॑

ब्रज॑स्यसा॒ताग॑व्यस्यनिःसृजः॑ सच्च-



न्तद्द्वन्द्वनिःसृजः । यद्गव्यन्ताद्वा  
 जना स्वश्यन्तासमूहसि । आविष्क-  
 रिक्रद्वषणसचाभुववजमिन्द्रसचा-  
 भुवम् । ३ ।

वि	वि +	-
त्वा	त्वाम्	तुझ को
ततस्ते	वि + ततस्ते परिवेष्टितवन्तः (लिटि 'इत्योरे' इतिरे भावः)	चारों ओर से घेरे हुए हैं
मिथुनाः	पत्नीसहिता- मनुष्याः	पत्नीसहित मनुष्य
अवस्यवः	रक्षाकामाः	रक्षा की कामना वाले
व्रजस्य	यूथस्य	समूह की
साता	प्राप्तये (विभक्त्येवात्मन्)	प्राप्ति के लिये

गव्यस्य	गवांसम्बन्धिनः	गौओं के
निःसृजः	(हविः) उत्सृजन्तः (किप्)	(हविको) छोड़ते हुए
सञ्चन्तः	गच्छन्तः (निघ० २ १४)	जाते हुए
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
निःसृजः	(हविः) उत्सृजन्तः	(हवि को) छोड़ते हुए
यत्	यदा	जब
गव्यन्ता	गाः कामयमानौ (विभक्तेरात्वम्)	गौओं की कामना वालों को
द्वा	द्वौ (,)	दो को
जना	जनसमूहौ (,)	जन समूहों को
स्वः	स्वः+	-
यन्ता	स्वः + यन्ता, प्रकाशकामयमानौ	प्रकाश की इच्छा वालों को

{ सम्ऽ	सङ्गमयसि	इकट्ठा कराते हो
ऊहसि		
आविः	आविः+	-
करिक्तत्	आविः+करिक्तत्,	प्रकट करता हुआ
वृषणम्	प्रादुष्कुर्वन्	वीर्यवान को
	वीर्यवन्तम्	
सचाऽभुवम्	सहभवितारम्	साथ रहनेवाले को
वज्रम्	वज्रम्	वज्र को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
सचाऽभुवम्	सहभवितारम्	साथ रहने वाले को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! रक्षाकामाः सपत्नीका मनुष्या गोयूथस्य प्राप्तये (हविः) उत्सृजन्तः (सन्तः) त्वां परिवेष्टितवन्तः (त्वां प्रति) गच्छन्तः (हविः) उत्सृजन्तः (च परिवेष्टितवन्तः) यदा (त्वम्) गाःकामयमानौ

प्रकाशं कामयमानौ ( च ) द्वौ जनसमूहौ सङ्ग-  
मयसि ( तदा ) सह भवितारं वीर्यवन्तम् ( वज्रम् )  
प्रकटयन् तिष्ठसि, हे इन्द्र ! सह भवितारं वज्रम्  
( प्रकटयन् ) तिष्ठसि ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! रक्षा की कामना वाले सपत्नीक  
मनुष्य गौओं के समूह की प्राप्ति के लिये ( हवि को )  
छोड़ते हुए चारों ओर से आपको घेरे हुए हैं, आप  
की ओर जाते हुए ( और हवि को ) छोड़ते हुए ( घेरे  
हुए हैं ) हे इन्द्र ! जब आप गौओं की कामना वाले  
( और ) प्रकाशकी कामना वाले दो मनुष्यसमुदाय को  
इकट्ठा करते हो तब साथ रहने वाले वीर्यवान वज्र  
को प्रकट करते हुए ( ठैरते हो, हे इन्द्र ! ( आप ) साथ  
रहने वाले वज्रको ( प्रकट करते हुए ठैरते हो ) ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

वि॒दु॒ष्टे॑ अ॒स्य॒वी॒र्य॑स्य॒पूर॒वः॑ पु॒रो  
यदि॑न्द्र॒शार॑दी॒रवा॑तिरः सास॒हानो॑  
अ॒वा॒तिरः॑। शा॒स॒स्तमि॑न्द्र॒मर्त्य॑मय-

ज्युंशवसस्पते। महीममुष्णाः पृथिवी  
मिमात्रपो मन्दसान्द्रमात्रपः । ४।

विदुः

जानन्ति

जानते हैं

ते

तव

तेरे

अस्य

इदम्  
(कर्मणिपठ्ठी)

इस को

वीर्यस्य

वीर्यम्  
(,)

बल को

पूरवः

मनुष्याः  
(निघं०२०३)

मनुष्य

पुरः

पुराणि

गढ़ों को

यत्

यत्

जो

इन्द्र

हे इन्द्र !

हे इन्द्र

शारदीः

शरत्सम्बन्धीनि | शरत्संबन्धियों को

अव॒ऽअति॑रः	विनाशितवानसि (निघं०२।१९)	तूने नाश-किया है
स॒स॒हानः	भृशमभिभवन् (यङ्लुगन्तात्सहेस्ता- च्छीलिकश्चानश्)	खूब दबाता हुआ
अव॒ऽअति॑रः	विनाशितवानसि	तूने नाश किया है
शा॒सः	शिष्टवानसि (अडभावः)	तूने शासन किया है
तम्	तम्	उस को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मर्त्य॑म्	मनुष्यम्	मनुष्य को
अय॑ज्युम्	अयष्टारम्	यज्ञ न करने वाला को
श॒व॒सः	बलस्य	बल के
प॒ते	हे पत !	हे स्वामी
म॒हीम्	महतीम्	विशाल का

अ॒सु॒ष्ट्याः	अप॒हृत॒वान॒सि	तूने हरण किया है
पृ॒थि॒वीम्	पृथि॒वीम्	पृथिवी को
इ॒माः	इ॒माः	इन को
अ॒पः	अ॒पः	जलों को
म॒न्द॒सानः	मोद॒माः	मोद को प्राप्त होता हुआ
इ॒माः	इ॒मानि	इन को
अ॒पः	अ॒पः	जलों को

संस्कारार्थः ।

हे इन्द्र ! तवेदं वीर्यं मनुष्या जानन्ति यत्  
(त्वम्) शरत्सम्बन्धीनि पुराणि विनाशितवानसि,  
(दस्यून) अभिभवन् (सन्) विनाशितवानसि, हे  
वलस्यपते ! इन्द्र ! (त्वम्) अयष्टारं तं मनुष्यं शिष्ट-  
वानसि, महर्तो पृथिवीमिमा अपः (च) अपहृतवानसि,  
मोदमानः (सन्) इमा अपः (अपहृतवानसि) ॥४॥

मापार्थः ।

हे इन्द्र ! आपके इस वीर्य्य को मनुष्य जानते हैं, जो आपने शरद्वृष्टु के गढ़ों को नाश किया है, (दस्युओं को) दबाते हुए नाश किया है, हे बल के स्वामी इन्द्र ! आपने यज्ञ न करने वाले उस मनुष्य को दंड दिया है, (और) विशाल पृथिवी (और) इन जलों को हरण किया है, मोद करते हुए इन जलों को (हरण किया है) ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

आदि॑त्ते॒अस्य॑वी॒र्य्यस्य॑चवि॒रन्

मदे॑षु॒वृष॑न्नशि॒जोय॑दाविथ सखीय-

तीय॑दाविथ । च॒कर्त्त॑का॒रमे॑भ्यः पृ॒त-

नास॑प्रव॒न्तवे॑ । ते॒अ॒न्याम॑न्या॒नद्य॑स-

नि॒ष्णात॑ अ॒वस्य॑न्तःसनि॒ष्णात॑ । ५ ।

आत्

| अनन्तरम्

| पीछे



इत्	खलु	सचमुच
ते	तव	तेरे
अस्य	एतत् (द्वितीयार्थे पण्ठी)	इस को
वीर्यस्य	वीर्यम् (११)	वीर्य को
चर्किरन्	प्रथितवन्तः (यङ्लुगन्तादस्माद्व्य- त्ययेन शः)	फैलाया है
मदेषु	मदेषु	मदों में
वृषन्	हे वीर !	हे वीर
उग्निजः	भक्तान् (पशकान्तौ)	भक्तों को
यत्	यदा	जब
आविध	प्रवर्धितवानसि (मयशूद्री, अन्तर्माधि- तत्पर्यः)	तूने बढ़ाया है
सखिऽयतः	मित्रत्वंकामयमा- नान्	मित्रता की काम ना वालों को

यत्	यत्	जो
आविथ	रक्षितवानसि	तूने रक्षा की है
चकथ	कृतवानसि	तूने किया है
कारम्	यत्नम्	यत्न को
एभ्यः	एभ्यः	इन के लिये
पृतनासु	संग्रामेषु	युद्धों में
प्रवन्तवे	प्रवर्तितुम् (तुमर्थे तवेन्)	लगने के लिये
ते	एते (एकारलोपश्छान्दसः)	ये
{ अन्याम् अन्याम्	एकामेकाम्	एक एक को
नद्यम्	नदीम् (यणादेशश्छान्दसः)	नदी को
सनिष्णत	प्राप्तवन्तः (सनेर्देविसिण)	प्राप्त किया

श्रवस्यन्तः	यशःकामयमानाः	यश की कामना
सनिष्णत	प्राप्तवन्तः (,)	करने वालों ने प्राप्त किया

संस्कृतार्थः ।

हे वीर ! अनन्तरं खलु तवैतद् वीर्यम् (मनुष्याः) प्रथितवन्तः यदा (त्वम्) मदेषु भक्तान् रक्षितवानसि, मित्रत्वं कामयमानान् रक्षितवानसि, (त्वम्) एभ्यः सङ्ग्रामेषु प्रवर्तितुं यत्नं कृतवानसि, (अतएव) एतेः एकामेकां नदीम् (जयैन) प्राप्तवन्तः यशस्कामाः [सन्तः] प्राप्तवन्तः ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे वीर ! पीछे सचमुच आपके इस वीर्य को (मनुष्यों ने) प्रख्यात किया जब (आपने) मद में भक्तों की रक्षा की मित्रता की कामना वालों की रक्षा की, (आपने) इनके लिये युद्धों में प्रवृत्त होने का यत्न किया (इसीलिये) इन्होंने एक एक नदी को (जीत कर) प्राप्त, किया यश की इच्छा से (प्राप्त किया) ॥ ५ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिछन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

उतो नो अस्या उ प्र सो ज पे त ह्य १

कस्य॑ बो॒धि॒ह॒विषो॑ह॒वीम॑भिः स्व॒र्षा-  
 ता॒ह॒वीम॑भिः । यदि॑न्द्र॒ह॒न्त॒वेमृ॑धो  
 वृषा॑वजि॒ज्जिच॑के॒तसि॑ । आ॒मै॒अ॒स्यवे॒-  
 ध॒सो॒न॒वीय॑सो म॒न्म॑श्रु॒धि॒न॒वीय॑सः॥६॥

उ॒तो०	अपिच	और भी
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
अ॒स्याः	अस्याम् (सप्तम्यर्थे षष्ठी)	इस में
उ॒ष॒सः	उपसि	उपा में
जु॒षे॒त	” प्रीयेत	प्रसन्न हो
हि	खलु	सचमुच
अ॒क॒स्य	स्तुतिम् (आ०प्र०, द्वितीयार्थे षष्ठी)	स्तुति को

बोधि	बुध्येत (लिङ्ये लृङ्यङमावः)	जाने
हविषः	हविः (द्वितीयार्थे पठ्ठी)	हवि को
हवीमऽभिः	आह्वानैः	पुकारों से
स्वऽसाता	ज्योतिःप्राप्त्यै (विभक्तैरात्म)	प्रकाश की प्राप्ति
हवीमऽभिः	आह्वानैः	के लिये पुकारों से
यत्	यत्	जो
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
हन्तवे	हन्तुम् (तुमर्धे तणेन्)	मारने के लिये
मृधः	शत्रून् (आ० को०)	शत्रुओं को
वृषा	वीरः	वीर
वज्रिन्	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी

चिकेतसि	इच्छसि (,,)	इच्छा करते हो
आ	खलु (मा०को०)	सचमुच
मे	मम	मेरे
अस्य	अस्य	इस के
वेधसः	कवेः (निघं० ३।१५)	कवि के
नवीयसः	नवतरस्य	अत्यन्त नवीन के
मन्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
श्रुधि	शृणु	सुनो
नवीयसः	नवतरस्य	अत्यन्त नवीन के

संस्कृतार्थः ।

अपिच ( इन्द्रः ) अस्यामुषसि अस्मभ्यं प्रीयेत,  
आह्वानैः सह ( कृताम् ) स्तुतिं हविः ( च ) खलु  
बुध्येत, प्रकाशस्यप्राप्त्ये आह्वानैः सह ( कृतां ) स्तुतिं  
बुध्येत, हे वज्रिन् ! इन्द्र ! यद् वीरः ( त्वम् ) शत्रून्

हन्तुमिच्छसि, (स त्वम्) खलु अस्य सम नवतरस्य  
कवेः स्तोत्रं शृणु, नवतरस्य (स्तोत्रं शृणु) ॥६॥

मापार्थः ।

और (इन्द्र) इस प्रभात में हम पर प्रसन्न हों  
(और) पुकारों के साथ (की हुई) स्तुति को (और)  
हमारी) हवि को सचमुच जानें, प्रकाश की प्राप्ति  
के लिये पुकारों के साथ (की हुई स्तुति को जानें,)  
हे वज्रधारी इन्द्र! जो वीर (आप) शत्रुओं को मारने  
की इच्छा करते हो (वह आप) इस मुझ अत्यन्त  
नवीन कवि के स्तोत्र को सुनो, अत्यन्त नवीन के  
(स्तोत्र को सुनो) ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिइच्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

त्वं तमिन्द्रवाहधानो अस्मयु रमिच-  
यन्तं तु विजातमर्त्यं वज्रं शरमर्त्यम् ।  
जह्यीनो अघायति शृणुष्व सुश्रव-  
स्तमः । रिष्टं नयामन्नपभूतदुर्म-  
तिं विप्रवापभूतदुर्मतिः । ७ ।

त्वम्	त्वम्	तू
तम्	तम्	उस को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
वृधानः	प्रवर्धमानः	खूब बढ़ता हुआ
अस्मद्युः	अस्मान् कामय- मानः	हमें चाहता हुआ
{ अमित्रय- न्तम्	शत्रुवदाचरन्तम्	शत्रु की न्याईं आचरण करते हुए को
तुविज्ञात	हे बलाय जात !	हे बलके लिये उत्पन्न !
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
वज्रेण	वज्रेण	वज्र से
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
जहि	जहि	मारो



यः	यः	जो
नः	अस्मान्	हम को
अघऽयति	दुःखयितुमिच्छति	दुःख देने की इच्छा करता है
श्रृणुष्व	शृणुष्व	सुनो
सुश्रवऽतमः	अतिशयेन सुयशः	अत्यन्त सुन्दर यश वाला
रिष्टम्	कष्टम्	कष्ट
न	इव	की न्याई
यामन्	गच्छत्	जाता हुआ
अप	अप+	-
भूतु	अप+भूतु, दूरी- भवतु (गणोलृक्)	दूर हो
दुऽमतिः	दुर्वृद्धिः	दुष्ट वृद्धि
विप्रवा	सर्वा	सम्पूर्ण

अप	अप +	-
भूत	अप + भूत, दूरी- भवतु	दूर हो
दुःस्मृतिः	दुर्वृद्धिः	दुष्ट वृद्धि

संस्कृतार्थः ।

हे बलाय जात ! इन्द्र ! प्रवर्धमानोऽस्मान्काम-  
यमानः (च) त्वं शत्रुवदाचरन्तं तं मनुष्यं जहि योऽ-  
स्मान् दुःखयितुमिच्छति, हे शूर ! वज्रेण ( तम् )  
मनुष्यं जहि, अतिशयेन सुयशाः (त्वम्) शृणु, गच्छतु,  
कण्टमिव दुर्वृद्धिर्दूरीभवतु सर्वादुर्वृद्धिर्दूरीभवतु ॥७॥

भाषार्थः ।

हे बल के लिये उत्पन्न ! इन्द्र ! खूब बढ़ते हुए  
(और) हमें चाहते हुए आप शत्रु की न्याईं आचरण  
करने वाले उस मनुष्य को मारें जो हमें दुख देने  
की इच्छा करता है, हे शूरवीर वज्र से (उस)  
मनुष्य को मारें, अत्यन्त सुन्दर यश वाले आप  
सुनें, जाते हुए कण्ट की न्याईं दुष्टवृद्धि दूर हो,  
सब दुष्टवृद्धि दूर हो ॥ ७ ॥

इत्येकत्रिंशदक्षरशततमं सूक्तम् ।

## अ० सं०१ सू०१३२ ।

इन्द्रोदेवता परच्छेपकृषिः ।

विनयोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे धनी इन्द्र ! आप जो प्राचीन समय में युद्ध में हमारी रक्षा करते थे ऐसे आप के साथ हम वैरियों को दमन करें और सताने वालों को सतायें, आज के दिन यह मैं, मृच्छ सोम निचोड़ने वाले के लिये आप आशीर्वाद दो जिससे हम इस युद्ध में खूब लूट को बटोरें, हम बल की इच्छा करते हुए खूब लूट को बटोरें ॥१॥ यह प्रसिद्ध है कि जो अत्यन्त उत्साही है जो उषा काल में उठ कर इन्द्र को युलाता है और जो स्वयं शीघ्रता करता है उसके शशुओं को प्रकाशनिमित्त<sup>०</sup> किए हुए युद्धों में इन्द्र ने मारा है, आलस्य-हीन और स्वयं शीघ्रता करने वाले के शशुओं को मारा है, इस लिये यह सब से खिर झुका कर प्रणाम करने योग्य हैं, हे इन्द्र ! आपके दान हमारा साथ न छोड़ें, आप कल्याणकारक के दान हमारा कल्याण करें । २ । हे इन्द्र ! यह चमकता हुआ हवि का धन्व पूर्ण की न्याई आपही के लिये है, क्योंकि पूर्वकाल में हमारे, पूर्वज सृष्टि नियम की हानि को रोकने वाले आप ही की पूजा से हानि को रोकते थे, इसलिये आभो हम सब स्त्री पुरुषों के जोड़े इस ध्वज को कहें, क्योंकि चमकती हुई हवि के देने वाले ही किरणों द्वारा अपने शरीर के भीतर देख सकने ह, और इन्द्र गोमों के भी लोभी हैं, जो उनके साथ धन्वुनाव रखते ह उनके लिये शशुओं

---

० जिन से पृथिवी में प्रकाश फैले और अविद्या और अस्म्यता, रूपी अन्धकार का नाश हो ॥

को गौओं के भी लोभो है \* । ३ । हे इन्द्र ! यह आप का कर्म पूर्व की न्याई अब भी प्रख्यात करने योग्य है जो आपने अंगिरा-पंशियों के लिये गौओं के गोठ को खोल दिया, गौओं को बाँटते हुए गोठ को खोल दिया, † जिस प्रकार आपने उन के लिये अन्धकार रूपी असुरों से युद्ध करके जय को प्राप्त किया वैसे हमारे लिये भी करें, आप प्रत्येक प्रतहीन दस्यु को सोम निचोड़ने वालों के अधीन करें, क्रोध करने वाले प्रतहीन को हमारे अधीन करें । ४ । जब शूरवीर इन्द्र मनुष्यों को युद्ध द्वारा धिक्की बनाते हैं तब यश की इच्छा से कोई तो युद्ध के उपस्थित होने पर शत्रु पर धावा करते हैं और कोई खूब यश करते हैं, ‡ जब कोई विपत्ति पड़ती है तो मनुष्य सन्तान और जीवन की रक्षा के लिये उसी की स्तुति के योतों को बलपूर्वक गाते हैं, उनके स्तोत्र इन्द्र में ही आश्रय को पाते हैं, मानो देवताओं को लक्ष्य करके इन्द्र में आश्रय को पाते हैं । ५ । हे इन्द्र ! हे हिमालयभादि पर्यंतो ! युद्ध में हमारे आगे लड़ने वाले आप जो जो हम से लड़ने की इच्छा करे उस उस को मार कर पीछे हटाओ, वज्र से मार कर पीछे हटाओ, जो वज्र

\* आशय यह है कि इन्द्र को यज्ञ में हवि देने से तीन लाभ हैं, एक तो यह कि सृष्टिनियम की हानि के रोकने से सर्व प्रकार की हानि रक जाती है, दूसरा यह कि भीतर प्रकाश होकर भ्रान्त और पापरूपी अन्धकार का नाश होजाता है, और तीसरे यह कि इन्द्रके साथ बन्धुभाव होनेसे गौ आदि धन में भाग मिलता है ॥

† गौओं का गोठ सूर्य की किरणों का समूह है, महीनों लंबी अनन्त जैसी मेरुसमीप देशों की रात्रि के पीछे सूर्य की किरणों की बखेर इन्द्र की बड़ी उदारता को प्रकट करती है ॥

‡ आशय यह है कि युद्ध में लड़ने और यश करने का एक सा पुण्य है ॥

क०म०१सू०१३२ मं०१ ( ३६२४ )

दूर भागे हुए को भी नहीं छोड़ता और दुर्गम स्थान में भी पहुँच जाता है, हे शूरवीर ! हमारे शत्रुओं को सब ओर से खूब चीरो, चीरने वाले आप सब ओर से खूब चीरो ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिऋतुः । १२।१२।८।८।८।१२।८

त्वयावयमवन्पूर्वधन इन्द्र-

त्वोताः सासह्यामपृतन्यतो वनु-

यामवनुष्यतः । नेदिष्ठेऽस्मिन्न-

हन्य धिवोचानुसुन्वते अस्मिन्यज्ञे

विचयेमाभरेकृतं वाजयन्तोभरे

कृतम् ।१।

त्वया

वयम्

त्वया (सह)

वयम्

तेरे साथ

हम

स॒घ॒ऽव॒न्	हे धनवन् !	हे धनवाले ।
पू॒र्व्ये	पुरातने	प्राचीन में
ध॒ने	सङ्ग्रामे	युद्ध में
{ इन्द्र॑त्वा ऽज॒ताः	इन्द्रेणत्वया रक्षिताः (प्रत्ययोत्तर- इतिवादेशः, आस्य छान्दसम्)	तुझ इन्द्र से रक्षा किये हुए
स॒स॒ह्या॒म	अभिभवेम	हम दबावें
पृ॒त॒न्य॒तः	वैरिणः (आ०को०)	वैरियों को
व॒नु॒याम	हिंसाम (वनु हिंसायाम्)	हम पीडा दें
व॒नु॒ष्य॒तः	हिसतः	पीडा देने वालों क
ने॒दि॒ष्ठे	अत्यन्तं सन्निहिते	अत्यन्त निकट
अ॒स्मिन्	अस्मिन्	आने वाल में इस में

अ॒ह॒नि

दि॒ने

दि॒न में

अ॒धि

अ॒धि+

—

वो॒च

अ॒धि+वो॒च,  
अ॒धिब्रू॒हि  
(छोटि व्यत्ययेनाङ्,  
घचउम्)

आशीर्वाद वो

न

खलु

सचमुच

सु॒न्व॒ते

सोमं निष्पीडयते

सोम को निचो-  
ड़ते हुए के लिये  
इसमें

अ॒स्मिन्

अ॒स्मिन्

इसमें

य॒ज्ञे

य॒ज्ञे

यज्ञ में

वि

वि+

—

च॒ये॒म

वि+च॒ये॒म, विचि-  
नु॒याम  
(चिनोतेर्व्यत्ययेनश्प्)

हम खूब चटोरें

भ॒रे

सङ्ग्रामे  
(मिघं० २।१७)

युद्ध में

कृतम्	लोप्त्रम् (आ०को०)	लूट को
वाजऽयन्तः	बलमिच्छन्तः	बल की इच्छा करते हुए
भरे	सङ्ग्रामे	युद्ध में
कृतम्	लोप्त्रम्	लूट को

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन् ! प्राचीने सङ्ग्रामे इन्द्रेण स्वया रक्षिता  
वयं स्वया ( सह ) वैरिणोऽभिभवेम, हिंसतः ( च )  
हिंसाम, ( त्वम् ) अतिसन्निहितेऽस्मिन् दिने अस्मिन्  
यज्ञे सोमं निष्पीडयते खलु आशिपं देहि ( यद् वयम् )  
सङ्ग्रामे लोप्त्रं विचिनुयाम, बलमिच्छन्तो लोप्त्रं  
विचिनुयाम ॥ १ ॥

भावार्थः ।

हे धन वाले ! प्राचीन संग्राम में आप इन्द्र से  
रक्षा किये हुए हम आपके साथ वैरियों को दबावें,  
( और ) पीड़ा देने वालों को पीड़ा दें, आप अत्यन्त  
समीप आने वाले आज के दिन इस यज्ञ में सोम  
निचोड़ने वाले के लिये सचमुच आशीर्वाद दो ( कि )  
हम युद्ध में लूट को खूब बटोरें, बल की इच्छा करते  
हुए लूट को खूब बटोरें ॥ १ ॥



इन्द्रोदेवता, विशाङ्गित्यष्टिश्छन्दः। १२। १०। ८। ८। ८। १२। ८

स्वर्जेषेभर आप्रस्यवक्म न्युप्रबुधः

स्वस्मिन्नञ्जसि क्राणस्यस्वस्मि-  
न्नञ्जसि । अहन्निन्द्रोयथाविदे

शीष्णाशीष्णोपवाच्यः । अस्मजाते

सध्यक्सन्तुरातयो भद्राभद्रस्य  
रातयः । २।

स्वःऽजेषे  
भरे

प्रकाशस्य प्राप्त्यै  
सञ्जाते  
सङ्ग्रामे

प्रकाश के लिये  
हुए २ में  
युद्ध में

आप्रस्य  
वक्मनि

अत्युत्सुकस्य  
(मा०को०)  
सम्बोधने

अत्यन्तउत्साह  
वाले के  
बुलाने पर

उषः॑ऽवुधः॑	उषः॑कालेप्रवुद्धस्य॑ (क्विप्)	उषः॑काल में। जागेहुए के
स्वस्मिन्॑	स्वस्मिन्	अपने में ।
अञ्ज॑सि	शीघ्रतायाम् (भा०को०)	शीघ्रता होने पर
क्राण॑स्य	कुर्वाणस्य, अन- लसः॑ इत्यर्थः (करोतेःशतरिच्छान्दसः शपोलुक् )	आलस्यहीन के
स्वस्मिन्॑	स्वस्मिन्	अपने में
अञ्ज॑सि	त्वरायाम् (भा०को०)	शीघ्रता होने पर
अहन्॑	हतवान्	मारा हैं
इन्द्रः॑	इन्द्रः	इन्द्र ने
यथा॑	यथा	जैसे
विदे॑	विज्ञायते (विकरणस्यलुक् 'ओपस्त्व' इतिबोधेप१)	प्रसिद्ध है

{ शी॒ष्णा॑ऽ	शिरसा शिरसा	प्रत्येक।सर से
{ शी॒ष्णा॑		
उप॒वा॒च्यः॑	प्रणम्यः	प्रणाम करने योग्य
अ॒स्म॒ञ्चा	अस्मासु (सप्तम्यर्थे चा प्रत्ययः)	हम में
ते	तव	तेरे
स॒ध॒य॒क्	सहचराणि . (विमर्शेर्लक्)	साथ रहने वाले
स॒न्तु	सन्तु	हों
रा॒तयः॑	दानानि	दान
भ॒द्राः	कल्याणानि	कल्याण रूप
भ॒द्र॒स्य॑	कल्याणस्य	कल्याण रूप के
रा॒तयः॑	दानानि	दान

संस्कृतार्थः ।

यथा विज्ञायते, इन्द्रः उपःकाले प्रबुद्धस्य अत्युत्सु-  
 कस्य सम्बोधने (सति तस्य) स्वस्मिन् शीघ्रतायाम् (च  
 सत्याम्) प्रकाशप्राप्त्यै सज्जाते सङ्ग्रामे (शत्रून्) हत-  
 वान्, ( तस्य ) अनलसः स्वस्मिन् त्वरायाम् (सत्यां  
 शत्रून् हतवान्) (अतः सः) शिरसा शिरसा प्रणम्यः  
 ( अस्ति, हे इन्द्र ! ) तव दानानि अस्मात् सहच-  
 राणि सन्तु, कल्याणरूपस्य तव दानानि कल्याण-  
 रूपाणि ( सन्तु ) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

जैसा प्रसिद्ध है, इन्द्र ने उपा काल में जागने  
 वाले अत्यन्त उत्साही के बुलाने पर (और उसकी)  
 अपनी शीघ्रता होने पर प्रकाश के निमित्त होने  
 वाले संग्राम में शत्रुओं को मारा है, (उस) आलस्य-  
 हीन की अपनी शीघ्रता होने पर (शत्रुओं को मारा है)  
 (इसलिये वह) प्रत्येक सिर से प्रणाम करने योग्य (है),  
 ( हे इन्द्र ! ) आप के दान हममें साथ रहने वाले हों,  
 कल्याणरूप (आप) के दान कल्याणकारी (हों) ॥ २ ॥

इन्द्रो देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ॥ १२ ॥ १२ ॥ १२ ॥ १२ ॥

तत्तुप्रयः प्रत्नथातिशुश्रूषणं य-

स्मिन्<sup>१</sup>यज्ञे<sup>२</sup>वार<sup>३</sup>म<sup>४</sup>क्षय<sup>५</sup>वत<sup>६</sup>क्षय<sup>७</sup> मृत<sup>८</sup>स्य<sup>९</sup>  
 वार<sup>१०</sup>सि<sup>११</sup>क्षय<sup>१२</sup>म् । वित<sup>१३</sup>द्वी<sup>१४</sup>चे<sup>१५</sup>रध<sup>१६</sup>हिता-  
 न्तः<sup>१७</sup>प्र<sup>१८</sup>यन्ति<sup>१९</sup>रश्मि<sup>२०</sup>भिः । स<sup>२१</sup>घा<sup>२२</sup>विदे<sup>२३</sup>  
 अन्वि<sup>२४</sup>न्द्रो<sup>२५</sup>ग<sup>२६</sup>विष<sup>२७</sup>णो बन्धु<sup>२८</sup>क्षि<sup>२९</sup>द्भ्यो-  
 ग<sup>३०</sup>विष<sup>३१</sup>णः ।३।

तत्

एतत्  
(एकारलोपः)

यह

तु

तु

तो

प्रयः

अन्नम्

अन्न

प्रत्नऽथा

पुरातनमिव  
(इयार्थे थाल्)

प्राचीन की न्याई

ते

तव

तेरा

शुशुक्वनम्	अतिदीप्तम् (शुचिर्दीप्तिकम्मा)	अत्यन्त दीप्ति वाला
यस्मिन्	यस्मि	जिस में
यज्ञे	यज्ञे	यज्ञ में
वारम्	वारणम्	रोक को
अकणवत	कृतवन्तः	किया है
क्षयम्	क्षयस्य (पष्ठघर्षे द्वितीया)	क्षय के
कृतस्य	कृतसम्बन्धिनः	कृत संबंधी के
वाः	वारकः (किप्)	रोकने वाला
असि	असि	तू है
क्षयम्	क्षयस्य (पष्ठघर्षे द्वितीया)	क्षय के
वि	वि+	—
तत्	तत्	उस को

वोचेः	वि+वोचेः, ब्रुवन्तु (पुरुषवचनव्यत्ययः)	कहें
अध	अतः	इसलिये
हिता	(दम्पत्योः) द्वन्द्वाः	(स्त्रीपुरुषोंके) जोड़े
अन्तः०	अभ्यन्तरम्	भीतर को
पश्यन्ति	पश्यन्ति	देखते हैं
रश्मिभिः	किरणैः	किरणों से
सः	सः	वह
घ	खलु	सचमुच
विदे	अनु+विदे, विज्ञा. तोऽभूत्	जाना गया है
अनु	अनु+	—
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
गोऽएष्यः	गवामेपिता	गौओं की इच्छा करने वाला

{ बन्धुचित् ऽभ्यः	बन्धुभावं प्राप्त- वद्भ्यः	बंधुभावको प्राप्त हुओं के लिये
गोऽएषणः	गवामेषिता	गौओंकी इच्छा करने वाला

संस्कृतार्थः ।

( हे इन्द्र ! ) एतत् अतिदीप्तं (हवीरूपम्) अन्नं पुरातनमिव तव (एवास्ति) यस्मिन् यज्ञे (अस्मत्पितरः) हासस्य वारणं कृतवन्तः(यतः त्वम्) ऋतसम्बन्धिनो हासस्य वारकोऽसि अतः(दम्पत्योः) द्वन्द्वाः तत् (उपर्युक्तं वचनम्) ब्रुवन्तु (ते) किरणैः अन्तः पश्यन्ति, स खलु इन्द्रः गवामेषिता विज्ञातोऽभूत् बन्धुभावं प्राप्तवद्भ्यो गवामेषिता (विज्ञातोऽभूत्) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

( हे इन्द्र ! ) यह अत्यन्त चमकता हुआ (हवीरूप) अन्न पूर्व की न्याईं आप ही का (है) जिस यज्ञ में (हमारे पूर्वजों ने) क्षय को रोक दिया ( क्योंकि ) आप ऋत सम्बन्धी क्षय के रोकने वाले हैं, इस लिये (स्त्री परुषों के ) जोड़े, उस (ऊपर



के वचन) को कहें( वे) किरणों द्वारा भीतर को देखते हैं, सचमुच वह इन्द्र गोओं की इच्छा करने वाले जाने गए हैं, बन्धुभाव को प्राप्त होने वालों के लिये गौओं की इच्छा करने वाले (जाने गए हैं) ॥३॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।१२।८

नू॒दू॒त्था॒ते॒पू॒र्व॒धा॒च॒प्र॒वा॒च्यं॒ यद॒-  
 झि॒रो॒भ्योऽव॒णो॒रप॒व्रज॒ मि॒न्द्र॒शि॒क्ष-  
 न्नप॒व्रज॒म् । ए॒भ्यः॒समा॒न्यादि॒शा  
 र॒म॒भ्यं॒जे॒षि॒योति॒सच॒ । सु॒न्वद्भ्यो॒र-  
 न्ध॒या॒क॒ञ्चि॒द॒व्र॒तं॒हृ॒णाय॒न्तं॒चि॒द॒व्र-  
 त॒म् ॥ ४ ॥

नु	इदानीम्	अव
दूत्था	इत्यम्	इस प्रकार

ते	तव	तेरा
पूर्वऽथा	पूर्वमिव (हवार्थे थाल् प्रत्ययः)	पहिले की न्याई
च	(पूरणः)	—
प्रऽवाच्यम्	प्रख्यापनीयम्	प्रख्यात करने योग्य
यत्	यत्	जो
अङ्गिरःऽभ्यः	अङ्गिरोभ्यः	अंगिरावंशियाँ के लिये
अवृणोः	अप+अवृणोः, अपावृतवानसि, उद्धाटितवानसीत्यर्थः	तूने खोल दिया
अप	+ अप	—
ब्रजम्	गोष्ठम्	गोआँ के गोठ को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

शिक्षन्	वितरन् (शिक्षतिर्दानकर्मा निघं० ३१२०)	घाँटता हुआ
अप ब्रजस्	अप+(अवृणोः) अपावृतवानसि गोष्ठम्	तूने खोल दिया गोओं के गोठ को
घा	खलु (भा० को०)	सचमुच
एभ्यः	एभ्यः	इन से
समान्या	समानथा (सा० भा०)	समान से
दिशा	रीत्या (॥)	रीति से
अस्मभ्यम्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
जेषि	जयं प्राप्नुहि (विकरणस्य ङक्)	जयको प्राप्त कर
योतिस	युध्यस्व (व्यत्ययेन परस्मैपदम्)	युद्ध कर
च	च	और

सुन्वत्ऽभ्यः	सोमाभिषवंकुर्व- द्भ्यः	सोम निचोऽने वालों के लिये
रन्धय	आयत्तीकुरु	अधीन कर
कम्	कम्	—
चित्	कम्+चित्, प्रत्येकम्	प्रत्येक को
अव्रतम्	व्रतरहितम्	नियमसे रहित को
हृणायन्तम्	क्रुध्यन्तम् (हृणीरु रोषे, ह्यस्ययेनाकारः)	क्रोध करतेहुए को
चित्	खलु	सचमुच
अव्रतम्	व्रतहीनम्	नियमसे रहित को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! इत्थं तव (कर्म) पूर्वमिव इदानीम्  
(अपि) प्रख्यापनीयम् (अस्ति) यत् (त्वम्) अङ्गिरो-  
वंशीयानामर्थं गोष्ठमुद्घाटितवान्, वितरन् (सन्)  
गोष्ठम् (उद्घाटितवान्) एभ्यः खलु समानया  
रीत्या अस्मदर्थम् (अपि) युध्यस्व, जयंच प्राप्नुहि,

प्रत्येकं व्रतरहितं सुन्वद्भ्यः आयत्तीकुरु, क्रुद्धच-  
न्तं खलु व्रतहीनम् (आयत्तीकुरु) ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! इस प्रकार आप का (कर्म) पहिले  
की न्याई अब (भी) प्रख्यात करने योग्य (है) जो  
आपने अंगिरावंशियों के लिये गौओं के गोठ को  
खोल दिया, बांटते हुए गौओं के गोठ को (खोल दिया)  
सचमुच आप इनके समान हमारे लिये भी युद्ध  
कर के जय को प्राप्त करें, प्रत्येक व्रतहीन को सोम  
निचोड़ने वालों के अधीन करें, क्रोध करते हुए  
व्रतहीन को (अधीन करें) ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

संयज्जनान्क्रतुभिः शूरैश्च यद्व-  
नेहितैतरुषन्तश्वस्यवः प्रयच्छन्त  
श्वस्यवः । तस्माच्चायुः प्रजावदिद्  
बाधे अर्चन्त्योजसा । इन्द्रोक्त्वदि-

धिषन्तधीतयो देवाँश्चच्छानधीतयः

।५।

सम्	सम्+	-
यत्	यदा	जय
जनान्	जनान्	मनुष्यों को
क्रातुऽभिः	प्रज्ञाभिः	बुद्धियों के द्वारा
शूरः	शूरः	शूरवीर
ईक्षयत्	सम्+ईक्षयत्, सनीक्षकान्करोति (लट्घे लङ्घटमाप्।)	विचारशील करता है
धने	सङ्ग्रामे	युद्ध में
हिते	स्थापिते	स्थापन होने पर
तरुषन्त	आक्रामन्ति (आ०षो०लट्घेदृङ्)	धावा करते ~

अवस्यवः	यशइच्छन्तः	यशकी इच्छा करते हुए
प्र	प्र+	-
यक्षन्त	प्र+यक्षन्त, प्रक- र्षेण यजन्ते (लङर्थे लुङि ध्वत्वयेन कृत्वा)	खूब यजनकरते हैं
अवस्यवः	यशइच्छन्तः	यश की इच्छा करते हुए
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
आयुः	जीवनम्	जीवन को
प्रजावत्	प्रजायुक्तम्	प्रजासे युक्त को
इत्	एव	ही
बाधे	विपत्तिकाले (भा०पो०)	विपत्तिके समय
अर्चन्ति	गायन्ति (मिथ० ३।१४)	गाते हैं

ओजसा	बलेन	बल से
इन्द्रे	इन्द्रे	इन्द्र में
ओक्यम्	निवासस्थानम् (स्वार्थेयत्)	रहने के स्थान को
दिधिषन्त	धारयन्ति (सा०भा०लट्थे लङ्)	धारण करते हैं
धीतयः	स्तोत्राणि (आ० को०)	स्तोत्र
देवान्	देवान्	देवताओं को
अच्छ	अभिलक्ष्य	लक्ष रखकर
न	इव	मानो
धीतयः	स्तोत्राणि	स्तोत्र

संस्कृतार्थः ।

यदा शूरः(इन्द्रः)मनुष्यान् प्रज्ञाभिः समीक्षकान्  
 करोति (तदा केचित्) यशश्छिन्तः युद्धे स्थापिते  
 (सति) आक्रामन्ति, (केचित्) यशश्छिन्तः प्रकर्षेण



श्री०मं०१ सू०१३२धं०६ ( ३१४४ )

यजन्ते, तस्माएव विपत्तिकाले प्रजायुक्तं जीवनम्  
इच्छन्तः बलेन गायन्ति, ( तेषाम् ) स्तोत्राणि इन्द्रे  
निवासस्थानं धारयन्ति, स्तोत्राणि देवानभिलक्ष्य  
( इन्द्रं प्राप्नुवन्ति ) ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

जब शूरवीर (इन्द्र) मनुष्यों को बुद्धियों द्वारा  
विवेचनशील बनाते हैं, तब (कोई) यश के चाहने  
वाले युद्ध के स्थापन होने पर धावा करते हैं (और  
कोई) यश की इच्छा करने वाले खूब यजन करते  
हैं, उसी के लिये विपत्तिकाल में प्रजा से युक्त  
जीवन की इच्छा करते हुए बल पूर्वक गाते हैं (उन  
के) स्तोत्र इन्द्र में निवास स्थान को धारण करते  
हैं, स्तोत्र मानो देवताओं को लक्ष कर के (इन्द्र  
रूप निवास स्थान को प्राप्त होते हैं) ॥ ५ ॥

इन्द्रापर्वतोदेवते, भुरिगुअत्यष्टिश्छन्दः ।

१२।१२।८।७।७।१२।८

युवंतमिन्द्रापर्वतापुरीयुधा योनः ।

पृतन्यादपृतंतमिद्धतं वज्रं गातंतमि-

द्व॒तम् । दू॒रे॒च॒त्ताय॑च्छं॒त्सद् ग॒ह॒न॒य-  
दि॒न॒क्षत् । अ॒स्माकं॑ श॒त्रून् परि॑शू॒रवि-  
प्र॒वतो॑ द॒र्मादि॑र्षी॒ष्टवि॒श्रवतः॑ ॥६॥

यु॒वम्	यु॒वम्	तुम् दोनों
तम्	तम्	उस को
इ॒न्द्रा॒पर्व॒ता	हे इन्द्रापर्वतौ ! (विमर्करात्वम्)	हे इन्द्र (और) पर्वत !
पु॒रः॒ऽयु॒धा	पुरतोयोद्धारौ (॥)	आगे लड़ने वाले
यः	यः	जो
नः	अस्माकम्	हमारा
पृ॒त॒न्यात्	योद्धुमिच्छेत्	युद्ध की इच्छा करे
अप	अप+	-

तम्ऽतम्	तंतम्	उस २ को
दूत्	अवश्यम्	अवश्य
हतम्	अप + हतम्, निरस्यतम्	दूर हटाओ
वज्रेण	वज्रेण	वज्रके द्वारा
तम्ऽतम्	तंतम्	उस २ को
दूत	(पूरणः)	—
हतम्	निरस्यतम्	दूर हटाओ
दूरे	दूरदेशे	दूर देश में
चत्ताः	गताय अततिर्गतिकर्मा निघं० २।१४)	गए हुए के लिये
छंतसत्	कामयते (निघं० २६)	कामना करता है
गहनम्	दुर्गम्	दुर्गम को
यत्	यः (विनछेहंफ)	जो

इ॒नक्ष॑त्	प्राप्नोति (नक्षगतौ, इकारोप- जनदछान्दसः)	पहुँच जाता है
अ॒स्माक॑म्	अस्माकम्	हमारे
श॒त्रून्	शत्रून्	शत्रूओं को
परि॑	परि+(दर्षीष्ट), सम्यग् दारय	खूब चीरो
शू॒र	हे शूर !	हे शूरवीर
वि॒प्रव॑तः	सर्वतः	सब ओर से
द॒र्श॑न्	दारकः (मणिन् प्रत्ययेसति इन्द्रदछान्दसः)	चीरने वाला
दर्षी॑ष्ट	दारय (लोडबॅलुड्)	चीरो
वि॒प्रव॑तः	सर्वतः	सब ओर से

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्रापर्वतो ! पुरतो योद्धारो युवा तम् ( निवार-

यतम्) योऽस्माकम् (शत्रुः) योद्धुमिच्छेत्, तंतम्  
अवश्यं निरस्यतं, तंतं वज्रेण निरस्यतं यः (वज्रः)  
दूरङ्गताय कामयते योदुर्गमम् (स्थानमपि) प्राप्नोति,  
हे शूर ! (इन्द्र ! ) अस्माकं शत्रून् सम्यग् विदारय,  
विदारकः (त्वम्) सर्वतो दारय ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र (और) पर्वत ! आगे युद्ध करने वाले  
आप उस को हटाओ, जो हम से लड़ने की इच्छा  
करे उस २ को अवश्य दूर हटाओ, उस २ को वज्र  
के द्वारा दूर हटाओ जो (वज्र) दूर गए हुए के लिये  
कामना करता है, जो दुर्गम (स्थान से भी) पहुंच  
जाता है, हे शूरवीर ( इन्द्र ! ) हमारे शत्रुओं को  
सब ओर से खूब चीरो, चीरने वाले (आप) सब ओर  
से चीरो ॥ ६ ॥

इति द्वात्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

# अ०मं०१ सू०१३३ ।

इन्द्रोदेवता परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः—

१—७ "उमेपुनामीतिपुरा रिपुष्यस्तु प्रकीर्तिताः । ताजपन्  
प्रयतो नित्यमिष्टान्कामान्समश्नुते । ताजपन् हन्ति रक्षांसि  
सपरान्द्वय नियच्छति" (अग्निय० १।२५)

६। "अवमंहः—" इत्येषा वृशरात्रस्य पठेऽहनि प्रउगशस्त्रे विनि-  
युक्ता (भा० ८।१।१२।)

७। "वनोतिहि—" इत्येषा प्रातःसवने ब्राह्मणाच्छंसिनः प्रस्थित-  
याज्यायाः पुरस्तात् प्रक्षेपणीया (भा० ८।१।२)

सूक्तका भावार्थ ।

मैं सत्य से घी और पृथिवी को पवित्र करता हूँ और द्रोह करने वालों को जलाता हूँ, साथ ही ऐसे स्वर्णों को जो इन्द्र की पूजा से रहित हैं और जहां शत्रु कुचल कर नाश किए गए हैं, जहां पर घे मरे हुए गढ़ों में सोते हैं ॥१॥ हे यज्ञी ! आप राक्षसियों के सिरों को अपने चौड़े पैर से कुचल कर तोड़ो, बहुत चौड़े पैर से कुचल कर तोड़ो ॥२॥ हे धनवान ! इन राक्षसियों के घुंको तोड़ो और उन को भीड़ों में गिराओ, खूब गहरे भीड़ों में गिराओ ॥३॥ हे इन्द्र ! जो आपने तीन पचास राक्षसों को कुचल कर नाश किया है मनुष्य आप के इस कर्म को बड़ा मानते हैं, यद्यपि आपके लिये यह छोटा सा कर्म है परन्तु मनुष्य इसको बड़ा मानने हैं ॥४॥ हे इन्द्र ! क्रोध से लाल हुए इस पिशाच को मारो और सम्पूर्ण राक्षस जाति का नाश करो ॥५॥ हे यज्ञी ! इन बड़े राक्षसों को जो चोट कर भींचे गिराओ, हे इन्द्र ! हमारी सुनवाई करो क्योंकि घी और पृथिवी

इन के भय से दुःखी हैं, हे वज्री ! वे ऐसे दुःखी हैं जैसे मनुष्य  
अग्नि में जलने के भय से दुःखी होता है, हे न बचने वाले शूरवीर !  
आप भयानक घघ करने के शस्त्रों से बलवानों के साथ युद्ध करने  
जाते हो, मनुष्यों के न मारने वाले आप राक्षसों के साथ युद्ध करने  
जाते हो, तीन सत्ते राक्षसों के साथ अकेले युद्ध करने जाते हो ॥१॥  
सचमुच सोम निचोड़ने वाला बहुतों का स्वामी बनता है, सोम  
निचोड़ने वाला शत्रुओं को मारकर हटाता है, देवताओं के शत्रुओं  
को मारकर हटाता है, सोम निचोड़ने वाला बलवान और भज्य  
होकर सद्गुणों को प्राप्ति की इच्छा करता है, सोम निचोड़ने  
वाले के लिये इन्द्र पर्याप्त धन को देते हैं, पर्याप्त धन को देते हैं ॥७

इन्द्रो देवता त्रिष्टुप् छन्दः ११११११११११

उ॒मे पु॒ना मि॒रो द॒सी च॒ट ते न॒ द्रु॒हो-

द॒हामि॒ सं स॒हीर॒ निन्द्राः । अ॒भि॒वल्-

ग्य॒य च॒ ह॒ता अ॒मि॒त्रा वै॒ल॒स्थानं॒ परि॒

तृ॒ळ्हा॒ अ॒ग्नेर॒न् ॥ १ ॥

उ॒मे०

उ॒मे

दोनों को

) पु॒ना॒मि

पु॒ना॒मि

पवित्र करता हूं

रोद॑सी०	द्यावापृथिव्यौ (निघं० (३।३०)	द्यौ (और) पृथिवी को
ऋ॒तेन॑	सत्येन	सत्य से
द्रु॒हः	द्रो॒ग्धीन्	द्रोह करनेवालोंको
द॒हामि॒	सम्+दहामि	खूब जलाता हूँ
सम्	सम्+	-
म॒हीः	भू॒प्रदेशान्	पृथिवीके प्रदेशों को
अ॒नि॒न्द्राः	इन्द्ररहितान्	इन्द्र से शून्य हुओं को
अ॒भिऽव॒ल॒ग्य॑	निष्पि॒ष्य	कुचल कर
य॒च्च॑	यत्र	जहाँ
ह॒ताः	विनाशिताः	नाश किये गए
अ॒मि॒चाः	श॒त्रवः॑	शत्रु



वैलऽस्थानम्	गर्ते (सुषामितिसप्तम्याःसुः)	गढे में
परि	परि+	-
तृळ्हाः	मारिताः (सन्तः) (वृद्ध हिसायाम्)	मारे जाकर
अशेरन्	परि+अशेरन्, परिसुप्तवन्तः	सोए

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) सत्येन उभे व्यावापृथिव्यौ पुनामि,  
द्रोग्धीन् इन्द्ररहितान् भूप्रदेशान् [च] संदहामि  
यत्र शत्रवो निष्पिप्य विनाशिताः, मारिताः (च)  
गर्ते परिसुप्तवन्तः । १ ।

भाषार्थः ।

मैं सत्य से द्यौ [और] पृथिवी को पवित्र करता  
हूँ, (और) द्रोह करने वालों (और) इन्द्र से रहित  
भूप्रदेशों को जलाता हूँ, जहाँ शत्रु कुचल कर  
नाश किये गए (और) मारे जाकर गढे में सोए ॥१॥

इन्द्रोदेवता, निचृदनुष्टुप्छन्दः । ८। ७। ८। ८

अभि०ल०ग०या०चिद०द्रिवः शीर्षा

{ म॒हाऽव-	महापृथुना	बहुत चौड़े से
टू॒रि॒या		
प॒दा	पदा	पैर से

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! (इन्द्र ! ) (त्वम् ) राक्षसीनां शीर्षाणि पृथुनापदा निष्पिष्य छिन्धि, महापृथुनापदा (निष्पिष्य छिन्धि) ।

माषार्थः ।

हे वज्रधारी (इन्द्र ! ) आप राक्षसियों के सिरों को चौड़े पैर से कुचल कर तोड़ो, बहुत चौड़े पैर से (कुचल कर तोड़ो) ॥

इन्द्रो देवता निचृदनुष्टुप्छन्दः । ८। ७। ८।

अवा॑सां॒मघ॑वन्ज॒हि श॒र्धो॑या॒तुम॑-

ती॑नाम् । वै॒ल॒स्थान॑के॒अ॒र्म॑के म॒हा-

वै॒ल॒स्थे॑अ॒र्म॑के ॥ ३ ॥

अव	अव +	—
आसाम्	आसाम्	इन के
मघऽवन्	हे धनवन् !	हे धन वा
जहि	अव + जहि, विनाशय	नाश करो
शर्धः	बलम्	बल को
{ यातुऽमती- नाम्	राक्षसीनाम्	राक्षसियों के
{ वैलऽ- स्थानके	गर्ते	गढ़े में
धर्मके	संकुचिते	भीड़े में
महाऽवैलस्थे	महागर्ते	गढ़े गढ़े में
धर्मके	संकुचिते	भीड़े में

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन् ! [इन्द्र ! त्वम्] आसां राक्षसीनां  
वलं विनाशय, (ताः)संकुचिते गर्ते (पातय,)संकुचिते  
महागर्ते [पातय] ॥ ३ ॥

माशयः ।

हे धन वाले [ इन्द्र ! ] आप इन राक्षसियों के  
वल को नाश करो, [उनको] भीड़े गढ़े में (गिराओ)  
भीड़े गहरे गढ़े में [गिराओ] ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृदनुष्टुप्छन्दः । ८।८।७।८

यासां॑ति॒स्त्रः॑पञ्चा॒शतो॑ ऽभि-  
वृ॒द्धैर॒पाव॑पः । तत्सु॑तेमनायति  
त॒कत्सु॑तेमनायति ॥ ४ ॥

यासाम्	यासाम्	जिन के
तिस्त्रः	तिस्त्रः	तीन को
पञ्चाशतः	पञ्चाशतः	पचासों को

अभिऽवलङ्गैः	निष्पेषणैः	कुचलने से
अप्रऽअवपः	विनाशितवानसि	तूने नाश किया है
तत्	तत्	वह
सु	सु+	-
ते	तव	तेरा
मनायति	सु+मनायति, सुमन्यते	बड़ा माना जाता है
तकत्	अत्यल्पम्	बहुत अल्प
सु	सु+	-
ते	तव	तेरा
मनायति	सु+मनायति, सुमन्यते	बड़ा माना जाता है

संस्कृतार्थः ।

( हे इन्द्र ! ) यासां तिस्रःपञ्चाशतः निष्पेषणैः

विनाशितवानसि तत् तव ( कर्म ) बहुमन्यते तवा-  
स्यल्पं तत् [ कर्म ] बहुमन्यते ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

[ हे इन्द्र ! ] आपने जिनके तीन पचासों को कुचल  
कर नाश किया है उस आपके [ कर्म को ] बड़ा  
माना जाता है, उस आपके छोटे से ( कामको ) घड़ा  
माना जाता है ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, गायत्रीछन्दः । ८।८।८

पि॒शङ्ग॑भृ॒ष्टि॑स॒मृ॒णं॑ पि॒शाचि॑-  
मिन्द्र॑स॒मृ॒ण । स॒र्वै॑र॒क्षो॑नि॒वर्ह्य॑ ॥५॥

{ पि॒शङ्ग॑ऽ- भृ॒ष्टि॑स्	क्रोधेनरक्तवर्णम् (श्रेयतिः कृष्यतिकर्मा निघं० २।१२ )	क्रोधसे लाल रंग वाले को
अ॒मृ॒णम्	महान्तम् (निघं० ३।३)	बड़े को
पि॒शाचि॑स्	पिशाचम्	पिशाच को

इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
सम्	सम् +	-
मृण	सम् + मृण, सम्यक् मारय	खूब मारो
सर्वम्	सर्वम्	सब को
रक्षः	राक्षसजातम्	राक्षसों को
नि	नि +	-
वर्हय	नि + वर्हय, विनाशय (बहु हिलावाम्)	नाश करो

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! (स्वम्) क्रोधेन रक्तवर्णं महान्तं पिशाचं  
सम्यग् मारय, सर्वं राक्षसजातम् (च) विनाशय । ५ ।

भाष्यार्थः ।

हे इन्द्र ! आप क्रोधसे लाल हुए महान पिशाच को  
खूब मारो (और) सम् र्ण राक्षसों का नाश करो ॥५॥

इन्द्रोदेवतानिचूद्धृतिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१५।८

अव॒र्म॒ह॒इन्द्र॑दा॒हृ॒हि॒शु॒धीनः॑ शु॒शो-  
च॒हि॒द्यौः॑ क्षान॒भीषाँ॑ अ॒द्रि॒वो घृ॒णान्न  
भीषाँ॑ अ॒द्रि॒वः । शु॒ष्मि॒न्त॑मो॒हि॒शु-  
ष्मि॒भिर्व॒धैरु॒र॒भिरी॑य॒से । अपू॒रुष-  
॒घ्नोअ॒प्रती॑तशू॒र॒स॒त्व॒भिस्त्रि॒स॒प्तैः  
शू॒र॒स॒त्व॒भिः ॥ ६ ॥

अवः

अवस्तात्  
(पूर्याधरेत्वादिनाति-  
प्रत्ययोऽबादेशश्च)

नीचेकी ओर

म॒हः

महतः

महानों को

इन्द्र

हे इन्द्र ।

हे इन्द्र



द॒ह॒हि	विदारय	चीरो
श्रु॒धि	शृणु	सुनो
नः	अस्मान्	हम को
शु॒श्रोच॑	शशोच	शोक किया है
हि	यतः	क्योंकि
द्यौः	द्युलोकः	द्युलोक ने
धाः	पृथिवी	पृथिवी
न	इव	की न्याई
भी॒षा	भीत्या ( सुतीयावाल्मुक् )	भय से
अ॒द्रिऽवः	हे वज्रिन् ।	हे वज्रधारी
घृ॒णात्	ज्वलतः	जलते हुए से
न	इव	जैसे



शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
सत्त्वऽभिः	राक्षसैः (आ०को०)	राक्षसों के साथ
त्रिऽसप्तैः	त्रिसप्तभिः	तीनसातों के साथ
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
सत्त्वऽभिः	राक्षसेः	राक्षसों से

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! इन्द्र ! (त्वम्) महतः ( राक्षसान् )  
 अवदारय, अस्मान् (च) शृणु, यतो ध्रुलोकः पृथिवीव  
 भयेन शुशोच, हे वज्रिन् ! यथा उ्वलनः (अग्नेः) भीत्या  
 (कश्चित् शोचति, तथा शुशोच) बलवत्तमः ( त्वम् )  
 बलवद्भिः (सह यद्धे) उपैरायुर्धैर्गच्छसि, हे अनाक्रा-  
 न्त ! शूर ! पुरुषाणामर्हिसकः (त्वम्) राक्षसैः (सह योद्धुं  
 गच्छसि) त्रिसप्तैः राक्षसैः (सह योद्धुं गच्छसि) ॥६॥

माषार्थः ।

हे वज्रधारी इन्द्र ! आप महान (राक्षसों) को  
 चीर कर नीचे गिराओ (और) हमारी सुनो, क्योंकि

भीषा	भीत्या (,,)	भय से
अट्टिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी
{ शुष्मिन् ऽतमः	बलवत्तमः	सब से अधिक बलवाला
हि	खलु	सचमुच
शुष्मिऽभिः	बलवद्भिः (सह)	बलवानों के (साथ)
वधैः	हननसाधनैः (आयुधैः)	शस्त्रों से
उग्रैभिः	उग्रैः	भयानकों से
ईयसे	गच्छसि (ईदृगतौ इयन्)	जाते हो
अपुरुषऽठनः	पुरुषाणामहिंसकः	पुरुषों के न मारने वाला
अप्रतिऽदूत	हे अनाक्रान्त !	हे न दबने वाले

शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
स॒त॒वऽभिः	राक्षसैः (आ०को०)	राक्षसों के साथ
त्रिऽस॒प्त॒तैः	त्रिसप्तभिः	तीनसातों के साथ
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
स॒त॒वऽभिः	राक्षसैः	राक्षसों से

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! इन्द्र ! (त्वम्) महतः ( राक्षसान् )  
 अवदारय, अस्मान् (च) शृणु, यतो धुलोकः पृथिवीव  
 भयेन शुशोच, हे वज्रिन् ! यथा ज्वलनः (अग्नेः) भीत्या  
 (कश्चित् शोचति, तथा शुशोच) बलवत्तमः ( त्वम् )  
 बलवद्भिः (सह यद्धे) उग्रैरायुधैर्गच्छसि, हे अनाक्रा-  
 न्त ! शूर ! पुरुषाणामर्हिसकः (त्वम्) राक्षसैः (सह योद्धुं  
 गच्छसि) त्रिसप्तैः राक्षसैः (सह योद्धुं गच्छसि) ॥६॥

मापार्थः ।

हे वज्रधारी इन्द्र ! आप महान (राक्षसों) को  
 चीर कर नीचे गिराओ (और) हमारी सुनो, क्योंकि

द्युलोक ने पृथिवी की न्याईं भय से शोकको प्रकट किया है, हे वज्रधारा ! जैसे जलती हुई (अग्नि) के भय से ( कोई डर कर शोक प्रकट करता है वैसे शोक प्रकट किया है) सचमुच सब से अधिक बलवान आप बलवानों के साथ ( युद्ध में ) भयानक शस्त्रों के साथ जाते हो, हे न दबने वाले शूरवीर ! पुरुषों के न मारने वाले (आप) राक्षसों के साथ ( युद्ध करने जाते हो ) तीन सत्ते राक्षसों के साथ [युद्ध करने जाते हो ] ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

व॒नोति॒हि॒सु॒न्वन्क्षयं॒परी॑णसः

सु॒न्वा॒नोहि॒ष्मा॒यज॒त्यव॒धिषो॑ दे॒वा-

नाम॒वधि॑षः । सु॒न्वा॒नइ॒त्सि॒षास॑ति

स॒हस्रा॒वाज्य॑वृ॒तः । सु॒न्वा॒नायेन्द्रो॑-

द॒दा॒त्याभु॑वं र॒यिंद॑दा॒त्याभु॑वम् । ७ ।

वनोति	लभते (आ० को०)	पाता है
हि	खलु	सचमुच
सुन्वन्	सुन्वन्	निचोड़ता हुआ
क्षयम्	ईशत्वम् (क्षयतिरैश्वर्यकर्मा) (निघं० ३।१)	स्वामित्व को
परीणसः	बहोः (निघं० ३।१)	बहुत के
सुन्वानः	सुन्वानः	निचोड़ता हुआ
हि	खलु	सचमुच
स्म	(पूरणः)	—
यजति	अष + यजति, अपसारयति	हटाता है
अव	अव +	—
द्विषः	शत्रून्	शत्रुओं को

दे॒वाना॑म्	दे॒वाना॑म्	दे॒वताओं के
अ॒व	अ॒व+(य॒जति॑), अ॒पसार॑यति	हटाता है
वि॒षः	श॒त्रून्	श॒त्रुओं को
सु॒न्वा॒नः	सु॒न्वा॒नः	निचोड़ता हुआ
इ॒त्	(पूर॑णः)	—
सि॒सा॒स॒ति	ल॒ब्धु॒मिच्छ॑ति (स॒नेःस॒नीड॑माघे॒सत्वा॒त्त्वम् ) (भा००को०)	पाने की इच्छा करता है
स॒ह॒स्रा॑	स॒ह॒स्रा॒णि (शे॒र्लोपः)	सहस्रों को
वा॒जी	ब॒ल॒वा॒न्	बल से युक्त
अ॒व॒ह॒तः	अ॒नाक्रा॑न्तः	न दबाया हुआ
स॒न्वा॒नाय॑	सु॒न्वा॒नाय॑	निचोड़ते हुए के लिये
इ॒न्द्रः	इ॒न्द्रः	इन्द्र



ददाति	ददाति	देता है
आऽभुवम्	पर्याप्तम् (आ० को०)	पर्याप्त को
रयिम्	धनम्	धन को
ददाति	ददाति	देता है
आऽभुवम्	पर्याप्तम् (आ० को०)	पर्याप्त को

संस्कृतार्थः ।

( सोमम् ) सुन्वन् बहूनां खलु ईशत्वं लभते,  
 ( सोमम् ) सुन्वन् शत्रून् खलु अपसारयति देवानां  
 शत्रून् अपसारयति, ( सोमम् ) सुन्वन् बलवान् अनाक्रान्तः  
 ( च भूत्वा ) सहस्राणि ( धनानि ) लब्धुमिच्छति,  
 ( सोमम् ) सुन्वानाय इन्द्रः पर्याप्तं ददाति, पर्याप्त  
 धनं ददाति ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

( सोम को ) निचोड़ता हुआ सचमुच बहुतों का  
 स्वामी बनता है, ( सोम को ) निचोड़ता हुआ सच-

अ० सं० १६०१३३ सं० ७ ( ३११८ )

मुच शत्रुओं को हटाता है देवताओं के शत्रुओं को  
हटाता है, [सोम को] निचोड़ता हुआ बलवान् [और]  
अजेय हो कर सहस्रों (धनों) के पाने की इच्छा करता  
है, [सोम को] निचोड़ने वाले के लिये इन्द्र पर्याप्त  
[धन] को देते हैं, पर्याप्त धन को देते हैं ॥७॥

इति त्रयस्त्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् । .

# अ० सं० १ सू० १३४

वायुदेवता, परुच्छेपश्रुतिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे वायु ! आप को वेग वाले शीघ्रगामी घोड़े हमारे सोम की-  
ओर सब से पहले पीने के लिये लावें, सब से पहले सोम पीने  
के लिये लावें, हमारी ऊपर उठी हुई स्तुति की ध्वनि आपके गुणों  
को जानती हुई आप के मन को अनुकूल हो, आप देने वाले के पास  
घोड़ों से जुड़े हुए रथ के द्वारा आवें, हे वायु ! आप यह के देने  
वाले के पास घोड़ों से जुड़े हुए रथ के द्वारा आवें ॥ १ ॥ हे  
वायु ! हमारे सुन्दर बनाए हुए यलदायक सोम की पूँछ जो  
मदकारक है और जिनकी घुलोक की ओर दृष्टि है आप को  
मद से युक्त करें, जो दूध के मिलाने से यलदायक है और  
जिनकी घुलोक की ओर दृष्टि है आप को मद से युक्त करें, जिस  
सोम से आप के घोड़े (जो इकट्ठे चलने वाले बड़े प्रभावशाली और  
मकों के रक्षक हैं) स्तुतियों के अर्पण करने वाले की ओर जाने  
के लिये घल को प्राप्त करते हैं, सद्यमुख स्तुतियों को उच्चारण  
करने वाले की ओर जाने के लिये घल को प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥  
वायु लाल रंग के घोड़ों को जोड़ते हैं, वायु सुनहरी रंग के घोड़ों  
को जोड़ते हैं, वायु रथ को चलाने के लिये धुरे में शीघ्रगामी घोड़ों को  
जोड़ते हैं, चलाने के लिये धुरे में अत्यन्त शीघ्रगामी घोड़ों को जोड़ते  
हैं, हे वायु ! पृथिवी को जगाओ जैसे जार घोड़ी सोई हुई स्त्री  
को जगाता है, हम को रथ और पृथिवी के दर्शन करामो और

उपायों को स्थिर करो, यश के लिये उपायों को स्थिर करो" ॥३॥  
हे वायु ! आप के लिये चमकती हुई उपायें किरणरूप घरों  
में शुभ वस्त्रों को फैलाती हैं, नई किरणों में नाना रंग के  
वस्त्रों को फैलाती हैं, आप के लिये अमृत को दोहने वाली गौ†  
सब धनों को दोहती है, आप ने उदर से मरुतों को उत्पन्न किया  
है, सचमुच आकाश के उदर से मरुतों को उत्पन्न किया  
है ‡ ॥ ४ ॥ हे वायु ! चमकते हुए पवित्र सोम जो वेग के देने  
वाले शोर तीव्र मद वाले हैं आप को शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं,  
ये जलों को शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं, शरण लेने योग्य आप  
को प्राप्त हो कर शत्रुओं से दुर्बल किया हुआ मनुष्य वेग के लिये  
स्तुति करता है, आप अपने नियम द्वारा सब लोकों से रक्षा करते  
हो, आप नियम द्वारा असुर के भय से रक्षा करते हो ॥ ५ ॥ हे  
वायु ! सब से पहले पीने के योग्य आप इन हमारे सोमों को सब  
से पहले पान करो, निचोड़े हुए सोमों को पान करो, ये जो नित्य  
होम करने वाली और पाप को स्वागते वाली आर्य्य प्रजा हैं इन की  
सब गौयें आप ही के लिये सोम में मिलाने को दूध देती हैं, आप  
ही के होम के लिये घी को और सोम में मिलाने के लिये दूध को  
देती है § ॥ ६ ॥

\* ऋषि इस मंत्र में वायु को सूर्यरूप से देखते हैं, क्योंकि  
ये सब कर्म सूर्य के हैं ।

† अमृत को दोहने वाली गौ घी है जो सूर्यरूपी चछड़े के  
लिये किरणरूपी दूध को देती है, इस मंत्र में भी वायु को सूर्य-  
रूप से देखा है, किरणरूपी दूध ही सब प्रकार के धनों का मूल  
होने से "सब धनों को दोहती है" ऐसा कहा गया है ।

‡ आकाश के उदर से मरुतों को उत्पन्न करने वाले भी सूर्य हैं ।

§ इसलिये आप इन आर्य्य जोगों की रक्षा करो ॥

वायुदे॒वता, अत्य॑ष्टि॒श्छन्दः॑ १२।१२।८।८।८।१२।८।

आ॒त्वा॒जु॒वो॒रा॒र॒हा॒णा॒अ॒भि॒प्र॒यो

वा॒यो॒व॒ह॒न्ति॒व॒ह॒पूर्व॑पी॒तये॑ सोम॒स्य

पूर्व॑पी॒तये॑। ऊ॒र्ध्वा॒ते॒अनु॑सू॒नृता॒ मन॑-

स्ति॒ष्ठतु॑जा॒न॒तो॒। नि॒यु॒त्वता॒र॒थेना॑-

या॒हि॒दा॒वने॑ वा॒यो॒म॒ख॒स्य॒दा॒वने॑ ॥१॥

आ	आ+	-
त्वा	त्वाम्	तुझ को
जुवः	वेगवन्तः	वेग वाले
र॒र॒हा॒णाः	शीघ्रगामिनः	शीघ्रगामी
अ॒भि	प्रति	की ओर

प्रयः	अन्नम्	अन्न
वायो०	हे वायो !	हे वायु
वहन्तु	आ+वहन्तु	लावें
इह	इह	यहाँ
पूर्वऽपीतये	पुरापानाय	पहिले पीने के लिये
सोमस्य	सोमस्य	सोम के
पूर्वऽपीतये	पुरापानाय	पहिले पीने के लिये
ऊर्ध्वा	उत्थिता	उठी हुई
ते	तव	तेरे
अनु	अनुकूलम्	अनुकूल
सूनृता	(स्तुतिरूपा) वाक्	(स्तुति रूप) वाणी

मनः	मनः	मन को
तिष्ठतु	तिष्ठतु	ठहरे
जानती	जानती	जानती हुई
नियुत्वता	नियुद्भिरश्वैर्युक्तेन	घोड़ोंसे जुड़ेहुएसे
रथेन	रथेन	रथ से
आ	आ +	-
याहि	आ+याहि	आओ
दावने	प्रदात्रे (निघं०४।१)	देने वाले के लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
मखस्य	यज्ञस्य	यज्ञ के
दावने	प्रदात्रे	देने वाले के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! त्वां वेगवन्तः शीघ्रगामिनः (च अश्वाः सोमरूपम्) अन्नं प्रति पुरापानाय अत्र आवहन्तु, सोमस्य पूर्वपानाय (आवहन्तु) उत्थिता (अस्मत्-स्तुतिरूपा) वाक् (तवगुणान्, ) जानती (सती) तव मनोऽनुकूलं तिष्ठतु, हे वायो ! (त्वम्) अश्वैर्युक्तेन रथेन प्रदात्रे (मह्यम्) आयाहि, यज्ञस्य प्रदात्रे (मह्यम्) आयाहि ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे वायु ! आप को वेग वाले (और) शीघ्रगामी घोड़े (सोमरूप) अन्न के प्रति पहले पीने के लिये यहां लावें, सोमको पहले पीने के लिये (लावें), उठी हुई (हमारी स्तुतिरूपवाणी) (आपके गुणोंको) जानती हुई आपके मन के अनुकूल हो, हे वायु ! (आप) घोड़ों से जुड़े हुए रथ के द्वारा (मुझ) देने वाले के लिये आवें, (मुझ) यज्ञ के देने वाले के लिये आवें ॥ १ ॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।१२।८-

मन्दन्तुत्वामन्दिनोवायवि-

न्दवो रमतक्राणासः सकृता अभिन्तवो



गोभिः॑क्रा॒णां॑अ॒भि॒द्यवः॑ । य॒द्वक्रा॒णा  
 इ॒र॒ध॒यै द॒र्क्ष॑स॒च॒न्त॑ऊ॒तयः॑ । स॒ध्री-  
 ची॒ना॒नियु॑तो॒दा॒वने॒धिय॑ उप॒ब्रुव॑त-  
 इ॒न्धियः॑ ॥ २ ॥

म॒न्द॒न्तु	मा॒दय॑न्तु	म॒दयु॑क्त करे
त्वा	त्वाम्	तुझ को
म॒न्दि॒नः	मा॒दयि॑तारः	म॒दयु॑क्त करनेवाले
वा॒यो०	हे वा॒यो !	हे वा॒यु
इ॒न्द॒वः	सोम॑वि॒न्दवः (आ०को०)	सोम॑ की वृंदें
अ॒स्मत्	अ॒स्माक॑म्	हमारी
क्रा॒णा॒सः	स॒प्रभा॑वाः	प्रभा॒व वालीं

सुऽकृताः	सुष्ठुकृताः	अच्छी बनी हुई
अभिऽद्यवः	दिवोऽभिमुखाः	द्यौ की ओर दृष्टि वाली
गोभिः	पयोभिः	दूध से
क्राणाः	सप्रभावाः	प्रभाव वालीं
अभिऽद्यवः	दिवोऽभिमुखाः	द्यौ की ओर दृष्टि वालीं
यत्	यतः	जिस से
ह	खलु	सचमुच
क्राणाः	सप्रभावाः	प्रभाव से युक्त
हूरध्यै	गमनाय	चलने के लिये
दक्षम्	बलम्	बल को
सचन्ते	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त करते हैं

ऊतयः	रक्षकाः	रक्षक
सध्रीचीनाः	सहगन्तारः	साथ चलने वाले
निऽयुतः	अश्वः	घोड़े
दावने	प्रदात्रे	देने वाले के लिये
धियः	स्तुतीः	स्तुतियों को
उप	उप +	-
ब्रुवते	उप + ब्रुवते, उप-	उच्चारण करने
ईम्	वक्त्रे	वाले के लिये
धियः	खलु	सचमुच
	स्तुतीः	स्तुतियों को

संस्कृतार्थः।

हे वायो ! अस्माकं सुकृताः सप्रभावाः दिवोऽभिमुखाः मादयितारः सोमविन्दवः त्वां मादयन्तु, पयोभिः सप्रभावाः (कृताः) दिवोऽभिमुखाः (सोम-

## REVIEW.

---

Messrs. R. V. PATVARDHAN, B. A., LL. B.,

A. B. KOLHATKAR, B. A., LL. B.

AND D. A. TULZAPURKAR, B. A., LL. B.

have commenced bringing out a translation of Rigveda in English, Hindi, Gujrati and Mahratti languages from July 1912. The English translation has a prose rendering of each mantra in foot-notes. The Editors have avoided the use of a commentary, so that the reader may draw his own conclusions without being biased with the personal opinion of the Editors. This a good idea but the difficulty is that many mantras are unintelligible without a commentary.

The attempt is a most laudable one and every Hindu who can afford, should consider it his duty to encourage such attempts by subscribing to the work and by inducing his friends to do so.

Apply to Manager, Srutabodh Office, 47, Kalbadevi, Road, Bombay.

FERROKPORE,

19th January, 1913.

SHIV NATH,

Editor, Rigveda Sanhita.

अंक ८१-८२]

[वैशाख-ज्येष्ठ १९७०]

# ऋग्वेद संहिता

## (वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद  
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर  
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री  
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने  
सम्पादन किया।

लाहौर

पञ्जाब एकादमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर काका  
बालमन को अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

८० अंकों का मूल्य १४॥॥)

स॒तोमि॒व । प्र॒चक्ष॒य॒रोद॑सी॒वा॒सयो॒षसः॑  
 श्र॒व॒से॒वा॒सयो॒षसः॑ ॥ ३ ॥

वा॒युः

वा॒युः

वा॒यु

यु॒ङ्क्ते

यो॒जय॑ति

जोड़॑ता है

रो॒हि॒ता

रो॒हि॒तव॑र्णो  
( विम॒क्तेरा॒त्यम् )ला॒ल रं॒ग के॒ वा॒लों  
को

वा॒युः

वा॒युः

वा॒यु

अ॒रु॒णा

पि॒ङ्ग॒लव॑र्णो

सु॒न॒हरी॑ रं॒ग वा॒लों  
को

वा॒युः

वा॒युः

वा॒यु

रथे

रथे

रथ॑ में ;

अ॒जि॒रा

शी॒घ्र॒गा॒मिनो॑

शा॒घ्र च॒लने॑ वा॒लों  
को

ध॒रि

ध॒रि

धु॒री में

बोल्हवे	वहनाय	चलाने के लिये
बहिष्ठा	अतिशयेन बोढारौ	चलाने में अत्यन्त समर्थों को
धुरि	धुरि	धुरी में
बोल्हवे	वहनाय	चलाने के लिये
प्र	प्र +	-
बोधय	प्र + बोधय	जगाओ
पुरम्ऽधिम्	पृथिवीम् (‘पुरन्धी’ इति यावापृथि- व्योर्नाम निघं० ३।३०)	पृथिवी को
जारः	जारः	जार
आ	आ +	-
ससतीम्- ऽइव	आ + ससतीमिव, ईषत्स्वपन्ती- मिव	जैसे थोड़ी सोत हुई को

प्र	प्र +	-
चक्षय	प्र+चक्षय, प्रदर्शय	दर्शन कराओ
रोदसी०	द्यावापृथिव्यौ	द्वौ (और) पृथिवी को
वासय	स्थिरीकुरु	स्थिर करो
उपसः	उपसः	उपाओं को
श्रवसे	यशोऽर्थम्	यश के लिये
वासय	स्थिरीकुरु	स्थिर करो
उपसः	उपसः	उपाओं को

संस्कृतार्थः ।

वायुः रोहितवर्णो (अश्वो) योजयति, वायुः  
पिङ्गलवर्णो (अश्वो) योजयति, वायुः रथस्य धुरि  
वहनाय शीघ्रगामिनौ (अश्वो योजयति,) धुरि वह-  
नाय अतिशयेन वहनसमर्थो (अश्वो योजयति),



अ०मं०१ सू०१३४ मं०४ ( ३६८२ )

(हे वायो ! त्वम्) 'जारः ईषत्स्वपन्तीम् (स्त्रियम्)  
इव' पृथिवीं प्रबोधय, (त्वम्) द्यावापृथिव्यौ प्रदर्शय,  
(त्वम्) उपसः स्थिरीकुरु, यशोऽर्थम् उपसः स्थिरी-  
कुरु ॥ ३ ॥

माषार्थः ।

वायु लाल रंग के (घोड़ों) को जोड़ते हैं, वायु  
सुनहरी रंग के (घोड़ों) को जोड़ते हैं वायु रथ की  
धुरी में चलाने के लिये शीघ्रगामी घोड़ों को जोड़ते-  
हैं, धुरी में चलाने के लिये अत्यन्त सामर्थ्य वाले  
(घोड़ों को जोड़ते हैं, हे वायु ! ) आप पृथिवी को जगाओ  
जैसे जार थोड़ी सोती हुई स्त्री को जगाता है, और  
द्यौ (और) पृथिवी के दर्शन कराओ, आप उषाओं को  
स्थिर करो, यश के लिये उषाओं को स्थिर करो ॥३॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिद्वन्द्वः १२।१२।८।८।८।१२।८

तुभ्यमुषासः शुचयः परावति  
भद्रावस्त्रातन्वतेदंसुरग्निमषुचिचा-  
नव्येषुरग्निमषु । तुभ्यं धेनुः सवर्द्धवा

वि॒प्रवा॒वस॑नि॒दो॒हते॑ । अ॒ज॒न॒यो॒म॒रु॒-  
तो॒व॒क्षणा॑भ्यो दि॒व॒आ॒व॒क्षणा॑भ्यः । ४ ।

तु॒भ्य॒म्	तु॒भ्य॒म्	ते॒रे लिये
उ॒ष॒सः	उ॒ष॒सः	उ॒षा॒एँ
शु॒च॒यः	दी॒प्ताः	चमकती हुई
प॒रा॒ऽव॒ति	दूर॒देशे	दूर देश में
भ॒द्रा	शु॒भानि	शु॒भ
व॒स्त्रा	व॒स्त्राणि	वस्त्रों को
त॒न्व॒ते	विस्तारयन्ति	फैलाती हैं
द॒म्॒ऽसु	गृहेषु (सा० मा०)	घरों में
र॒श्मि॒ष	र॒श्मिषु	किरणों में

चित्रा

चित्राणि

नाना रंग वालों  
को

नव्येयु

नूतनेषु

नइयों में

रश्मिषु

रश्मिषु

किरणों में

तुभ्यम्

तुभ्यम्

तेरे लिये

धेनुः

धेनुः

गौ

सर्वःऽदुघा

अमृतस्यदोग्धी

अमृत के दोहने  
वाली

विश्वानि

विश्वानि

सब को

वसूनि

धनानि

धनों को

दोहते

दुग्धे

दोहती है

अजनयः

उत्पादितवानसि

तूने उत्पन्न  
किया है

मरुतः

मरुतः

मरुतों को

वक्षणाभ्यः	कुक्षिभ्यः	उदरों से
दिवः	दिवः	द्यौ के
खा	खलु	सचमुच
वक्षणाभ्यः	कुक्षिभ्यः	उदरों से

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! तुभ्यं दीप्ता उपसो दूरदेशेशुभानि वस्त्राणि रश्मिरूपेषु गृहेषु विस्तारयन्ति, चित्राणि (वस्त्राणि) नूतनेषु रश्मिषु (विस्तारयन्ति,) तुभ्यम् अमृतस्य दोग्धी धेनुर्विश्वानि धनानि दुग्धे, (त्वम्) कुक्षिभ्यः मरुतः उत्पादितवानसि, दिवः कुक्षिभ्यः खलु उत्पादितवानसि ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे वायु ! आप के लिये चमकती हुई उपाएँ दूर देश में शुभ वस्त्रों को किरणरूप धरों में फैलाती हैं, नाना रंग के (वस्त्रों) को नई किरणों में फैलाती हैं, आप के लिये अमृत के दोहने वाली गौ सब धनों को दोहती है, आपने) मरुतों को उदरों से उत्पन्न किया है, सचमुच द्यौ के उदरों से उत्पन्न किया है ॥४॥

भा०भं०१ सू०१३४मं०५ ( ३९८६ )

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

तुभ्यं शुक्रासः शुचयस्तुरयवो

मदेषूग्राह्यणन्तभुर्वयपा मिषन्त

भुर्वणि । त्वां तसारीदसमानो भग-

मीष्टे तक्ववीथे । त्वं विश्वस्माद्भु-

वनात्पासिधर्मणा सुर्यात्पासि

धर्मणा ॥ ५ ॥

तुभ्यम्

शुक्रासः

शुचयः

तुरयवः

तुभ्यम्.

दीप्ताः

शुद्धाः

वेगवन्तः

तेरे लिये

चमकते हुए

स्वच्छ

वेग वाले

मदेषु	मदेषु	मदों में
उयाः	तीव्राः	तीव्र
दृषणन्त	प्राप्तवन्तः (रपगतौ, शस्त्रमौ हौ विकरणौ, व्यत्य- येनाऽऽमनेपदम्)	प्राप्त हुए हैं
भुर्वणि	शीघ्रतायाम् (भा०को०)	शीघ्रता में
अपाम्	अपः (द्वितीयाथे पण्डी)	जलों को
दृषन्त	प्राप्तवन्तः	प्राप्त हुए हैं
भुर्वणि	शीघ्रतायाम्	शीघ्रता में
त्वाम्	त्वाम्	तुझ को
तसारी	प्राप्तः (स्सरतिर्गतिकर्मा- निधं० २।१४)	प्राप्त हुआ २
दसमानः	उपक्षीयमाणः (दसु उपक्षये)	छीजता हुआ
भगम्	भजनीयम्	सेवन करने योग्य का

ह्वे	स्तौति	स्तुति करता है
तक्ववीथे	शीघ्रगमनाय, वेगायेत्यर्थः	वेग के लिये
त्वम्	त्वम्	तू
विप्रवस्मात्	सर्वस्मात्	सब से
भुवनात्	भुवनात्	लोक से
पासि	रक्षसि	रक्षा करते हो
धर्मणा	धर्मणा	धर्म के द्वारा
असुर्यात्	असुरसम्बन्धिनः (भयात्)	असुर के (भय) से
पासि	रक्षसि	रक्षा करते हो
धर्मणा	धर्मणा	धर्म के द्वारा

संस्कृतार्थः ।

(हे पायो ! ) तुभ्यं दीप्ताः शुद्धाः वेगवन्तः मद्देष्टु  
र्तायाः (च सोमाः) शीघ्रतया प्राप्तयन्तः, अपः शीघ्र-

तथा प्राप्तवन्तः, (शत्रुभिः) उपक्षीयमाणः (भक्तः)  
 भजनीयं त्वां प्राप्तः(सन्) वेगाय स्तौति, त्वं धर्मणा  
 सर्वस्माल्लोकाद् रक्षसि ( त्वम् ) धर्मणा असुर-  
 सम्बन्धिनः (भयाद्) रक्षसि ॥५॥

माषार्थः ।

( हे वायु ! ) आपके लिये चमकते हुए, स्वच्छ,  
 वेगवाले, (और) मंद में तीव्र (सोम) शीघ्रता से प्राप्त  
 हुए हैं, जलों को शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं (शत्रुओं के  
 द्वारा) छीजता हुआ (भक्त) सेवन करने योग्य आप  
 को प्राप्त हुआ २ वेग के लिये स्तुति करता है,  
 आप धर्म के द्वारा संपूर्ण लोकों से रक्षा करते हो,  
 आप धर्म के द्वारा असुर के (भय) से रक्षा  
 करते हो ॥ ५ ॥

वायुदेवता, अष्टिश्रृङ्गः । ११।११।८।७।७।१२।८

त्वं नो वायवे प्रामपूर्यः सोमानां

प्रथमः पीतिमर्हसि सुतानां पीतिमर्ह-

सि । उत्तो विहत्सतीनां विशां वव-



जुषीणाम् । विप्रवाद्भुत्तेधेनवोदुक्कणा-  
शिरं घृतं दक्तत आशिरम् ॥ ६ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
नः	अस्माकम्	हमारे
वायो०	हे वायो !	हे वायु
एषाम्	एषाम्	इन के
अपूर्व्यः	अपूर्वस्य (सोम पानस्य) योग्यः (मर्ह्यं यत्)	अपूर्व (सोमपान) के योग्य
सोमानाम्	सोमानाम्	सोमों के
प्रथमः	प्रथमः	पहले,
पीतिम्	पानम्	पान को
अर्हसि	अर्हसि	योग्य हो

सु॒ता॒ना॒म्	निष्पीडितानाम्	निचोड़े हुआं के
पी॒ति॒म्	पानम्	पान को
अ॒र्ह॒सि	अर्हसि	योग्य हो
उ॒तो०	अपिच	और भी
{ वि॒हृ॒त्- ती॒ना॒म्	विशेषेण होमवती नाम् (विपूर्वाज्जुहोतेः क्रियते मत्पुत्रीषु)	अत्यन्त होम करने वालिओं की
वि॒श्रा॒म्	प्रजानाम्	प्रजाओं की
व॒व॒र्जु॒षी॒णा॒म्	(पापम् ) वर्जय न्तीनाम्	(पापको) त्याग करती हुईओं की
वि॒प्र॒वाः	सर्वाः	सब
इ॒त्	एव	ही
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
धे॒न॒वः	गावः	गौएँ

दु॒क्रे	दु॒हन्ति (लोपस्त-इति तलोपः)	दोहती हैं
आ॒ऽशिर॑म्	सोममिश्रणार्थं दुग्धम्	सोममें मिलानेके लिये दूध को
घृ॒तम्	घृतम्	घी को
दु॒क्रेते	दु॒हन्ति	दोहती हैं
आ॒ऽशिर॑म्	सोममिश्रणार्थं दुग्धम्	सोम में मिलाने के लिये दूध को

सस्वतार्थः ।

हे वायो ! अपूर्वस्य (सोमपानस्य) योग्यस्त्वं  
प्रथमः (सन्) एषामस्मदीयानां सोमानां पानमर्हसि,  
निष्पोडितानाम् (एषाम्) पानमर्हसि, अपिच तुभ्यमेव  
विशेषेण होमवतीनाम् (पापंच) वर्जयन्तीनां प्रजानां  
सर्वागावः सोममिश्रणार्थं दुग्धं दुहन्ति, सोममि-  
श्रणार्थं दुग्धं घृतम् (च) दुहन्ति ॥ ६ ॥

मापार्थः ।

हे वायु ! अपूर्व (सोमपान) के योग्य आप पहले  
इन हमारे सोमों के पान के योग्य हो, निचोढ़े हुए

(इन) के पान के योग्य हो, और आप ही के लिये अत्यन्त होम करने वाली (तथा पाप को) त्याग करने वाली प्रजाओं की सब गौएँ सोममें मिलाने के लिये दूध को दोहती हैं, सोम में मिलाने के लिये दूध (और) घृत को दोहती हैं ॥ ६ ॥

इति चतुस्त्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

## चट० मं० १ सू० १३५

वायुरिन्द्रवायूच देवताः, परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः—

१-६ । माघौ सृचौ दशरात्रस्यपष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे विनियुक्तौ ।  
(भा० ८।१।१२) । शिष्टाणां लैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे वायु ! आप हविखाने के लिये हमारी बिछी हुई कुशा की ओर हजार घोड़ों के द्वारा भावें, आप सौ घोड़ों के द्वारा भावें, आप हजार और सौ घोड़ों वाले देव के लिये पहले पान करने को देवताओं ने सोम को रोक रखा है, निचोड़े हुए मीठे सोम आप के मद के लिये उपस्थित हैं आपके बल के लिये उपस्थित हैं ॥१॥  
हे वायु ! पथरों से कूट कर छाना हुआ यह सोम मनोहर तेजों को पहने हुए प्रीण कलश की ओर जाता है, घमकते हुए तेजों को पहने हुए जाता है, यह सोम जो आप का भाग है मनुष्यों से देवताओं के लिये होमा जाता है, आप घोड़ों को हांको और हमारी कामना करते हुए आभो, प्रीति करते हुए और हमारी कामना करते हुए आभो ॥ २ ॥ हे वायु ! आप सौ घोड़ों से और हजार घोड़ों से हमारे यज्ञ की ओर खाने के लिये आभो, हवियों के खाने के लिये आभो, यह उचित समय पर दिया हुआ आप का भाग, सूर्य की समान दीप्ति वाला है, हे वायु ! भगवत्पुरुषों से धारण किये हुए सोम अर्पण किये गए हैं, घमकते हुए सोम अर्पण किये गए हैं ॥ ३ ॥ हे वायु ! घोड़ों से जुड़ा हुआ रथ आप दोनों को हमारी रक्षा के लिये और सुन्दर रचे हुए अग्नियों को खाने के लिये लावे, हवियों को खाने के लिये लावे, आप दोनों मीठे सोम को पौर्वे पथों कि आप का पृथपान निश्चित हो चुका है, हे वायु ! आप घमकते हुए

धन के साथ आओ, आप और इन्द्र दोनों धन के साथ आओ ॥ ४ ॥ हे इन्द्र और वायु ! आप दोनों को हमारी स्तुतियाँ यज्ञ की ओर फेरें, ऋत्विजोंने इस वलरूप सोम को स्वच्छ किया है जैसे अति शीघ्र चलने वाले घोड़े को स्वच्छ करते हैं, हम को चाहने वाले आप उसको पीवें और हमारे पास रक्षा के लिये आवें, आप दोनों पत्थरों से निचोड़े हुए सोमों को पीवें, बल के देने वाले आप दोनों मद के लिये पीवें ॥ ५ ॥ हे वायु ! जल के साथ पीस कर निचोड़े हुए ये सोम जो अश्वर्य लोगों ने पकड़े हुए थे आ दोनों के लिये अर्पण किये गए ह, चमकते हुए सोम आप दोनों के लिये अर्पण किये गए हैं, ये शीघ्रता करने वाले सोम छानने के ऊनी घस्त्रों में से झरे हैं, आप दोनों की कामना करते हुए भेड़ की ऊन में से झरे हैं, ये सोम भेड़ की ऊन में से झरे हैं ॥ ६ ॥ हे वायु ! जो सोप हुए हैं उन सभ को उल्लास कर जहाँ सोम फूटने का पत्थर खड़कता है वहाँ आओ, आप और इन्द्र उस घर पर आओ जहाँ स्तुति की घाणी सुनाई देती है, और जहाँ घो झरता है, उस यज्ञ में आप लड़े हुए रथ के साथ आओ, आप और इन्द्र उस यज्ञ में आओ ॥ ७ ॥ हे इन्द्र और वायु ! आप उस मीठी सोम की आहुति को ग्रहण करें, जिस अश्वत्थ को जयशील सेवन करते हैं, वे जयशील हमारे हों, हे वायु ! हमारे घरों में गौएँ सू रही ह और खेतों में जो पक रहे हैं आपके लिये गोएँ नहीं सुखतीं आपके लिये गौएँ नहीं छोड़तीं ॥ ८ ॥ हे वायु ! ये जो बलवान भुजाओं वाले आपके वैल हैं, वे आपके 'नदी' रूप प्रवाह के बीच दीड़ते हैं, बहुत बढ़ते हुए आपके प्रवाह के बीच दीड़ते हैं, जो मरुस्थान में भी नहीं मरते, जो शीघ्र चलने वाले हैं जो घाणीसे नहीं रुकते, जो सूर्य की किरणों की न्याई किसी से नहीं रुकते, जो हाथोंसे नहीं रुकते ॥ ९ ॥

\* सोम को यहाँ पर अश्वत्थ कहा गया है, जैसे सोम आप-धियों का राजा है वैसे अश्वत्थ अतस्त्वितियों का ॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

स्तीर्णवर्हिरुपनोयाहिवीतये

सहस्रेणनियुतानियुत्वते शात-

नीभिर्नियुत्वते । तुभ्यंहिपूर्वपीतये

देवादेवाययेमिरे । प्रतिसुतासोमधु-

मन्तोअस्थिरन् मदायक्रतवेअस्थि-  
रन् ॥ १ ॥

स्तीर्णम्

आस्तृतम्

बिछी हुई को

वर्हिः

वर्हिः

कुशा को

उप

प्रति

की ओर

नः

अस्माकम्

हमारे,

याहि	प्राप्नुहि	प्राप्त हो
वीतये	(हविषाम्) भक्षणाय	(हवियों के) खाने के लिये
सहस्रेण	सहस्रसङ्ख्याकेन	हजार के द्वारा
नियुता	नियुत्समूहेन (जातायेकवचनम्)	घोड़ों के द्वारा
नियुत्वते	नियुद्भिर्युक्ताय	घोड़ोंसेयुक्तकेलिये
शतीनीभिः	शतसंख्योपेताभिः	सौ से
नियुत्वते	नियुद्भिर्युक्ताय	घोड़ोंसेयुक्तकेलिये
तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
हि	एव	ही
पूर्वऽपीतये	पूर्व पानार्थम्	पहिले पीने के निमित्त
देवाः	देवाः	देवताओं ने



दे॒वाय॑	दे॒वाय	देव के लिये
ये॒मिरे	य॒मितव॑न्तः	रोक रखा है
प्र	प्र +	—
ते	तव	तेरे
सु॒तासः॑	निष्पीडिताः (जसोऽसगागमः)	निचोढ़े हुए
मधु॑ऽमन्तः	माधु॒र्योपे॑ताः	मिठास से मिले हुए
अ॒स्थि॒रन्	प्र+अस्थिरन्, प्रस्थितवन्तः	चले हैं
मदा॑य	मदाय	मद के लिये
क्रा॒त्वे	वलाय	बल के लिये
अ॒स्थि॒रन्	प्रस्थितवन्तः	चले हैं

संस्कारार्थः ।

(हे वायो ! त्वम्) (हविषाम्) भक्षणाय अस्मा-  
कम् आस्तृतं घृहिः प्रति आगच्छ, सहज्जेण नियत्सम-

हेन युक्ताय शतसङ्ख्याकाभिः(नियुद्भिः)युक्ताय(च)  
 तुभ्यं देवायैव पूर्वं पानार्थं देवाः (सोमम्) यमितवन्तः,  
 निष्पीडिताः माधुर्योपेताः(सोमाः) तव मदाय प्रस्थि-  
 तवन्तः, ( तव ) वलाय प्रस्थितवन्तः॥१॥

भाषार्थः ।

( हे वायु ! ) आप ( हाव ) खाने के लिये हमारी विछी  
 हुई कुशा की ओर आवें, हजार घोड़ों से ( और ) सौ घोड़ों  
 से युक्त आप देव के लिये ही पहिले पान करने के निमित्त  
 देवताओं ने ( सोमको ) रोक रक्खा है, निचोड़े हुए  
 मीठे ( सोम ) आपके मदके लिये चले हैं, ( आप के )  
 बल के लिये चले हैं । १ ।

वायुर्देवता, अत्यष्टिशृङ्खन्दः । १२। १२। ८। ८। ८। १२। ८।

तुभ्याय सोमः परिपतो अद्रिभिः  
 स्पर्धावसानः परिकोशमर्षति शुक्रा-  
 वसानो अर्षति । तवायं भाग आयुषु  
 सोमो देवेषु हूयते । वहवायो नियुतो  
 याह्यस्मयु जुषाणीयाह्यस्मयः ॥ २ ॥

तुभ्य	तुभ्यम् (सुपामितिचतुर्थ्यालुक्)	तेरे लिये
अयम्	अयम्	यह
सोमः	सोमः	सोम
परिऽपूतः	शोधितः	शुद्ध किया हुआ
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
स्पर्धा	स्पृहणीयानि (शेर्लोपः)	कामना करने योग्यों को
वसानः	धारयन्	धारण करता हुआ
परि	प्रति (भा० को०)	की ओर
कोशम्	(द्रोण-)कलशम्	(द्रोण) कलश को
अर्पति	गच्छति (ऋपोगतौ)	जाता है
शुक्रा	शुद्धानि (शेर्लोपः)	स्वच्छों को
वसानः	धारयन्	धारण करता हुआ

अ॒र्ष॒ति

गच्छति

जाता है

तव

तव

तेरा

अ॒यम्

अयम्

यह

भा॒गः

भागः

भाग

आ॒युषु

मनुष्येषु

मनुष्यों में

सो॒मः

सोमः

सोम

दे॒वेषु

देवेषु

देवताओं में

हू॒य॒ते

हूयते

होम किया जाता है

व॒ह

प्रेरय

हों को

वा॒यो०

हे वायो ।

हे वायु

नि॒ऽयुतः

अश्वान्

घोड़ों को

याहि

आयाहि

(आओलोपः)

आओ

अस्मद्युः

अस्मान्

कामयमानः

हमारी कामना करता हुआ

जुषाणः

प्रीतिकुर्वाणः

प्रीति करता हुआ

याहि

आयाहि

”

(आओ)

अस्मद्युः

अस्मान्

कामयमानः

हमारी कामना करता हुआ

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! पापाणैः शोधितः अयं सोमः तुभ्यं स्पृहणीयानि (तेजांसि) धारयन् (सन्) द्रोणकलशं प्रति गच्छति, दीप्तानि (तेजांसि) धारयन् (सन्) गच्छति, मनुष्येषु तव भागोऽयं सोमः देवेषु हूयते, (त्वम्) अश्वान् प्रेरय, अस्मान् कामयमानः (सन्) आगच्छ, प्रीतिकुर्वाणः (त्वम्) अस्मान् कामयमानः (सन्) आगच्छ । २ ।

मापार्थः ।

हे वायो ! पत्थरों से शोधा हुआ यह सोम आपके लिये कामना करने योग्य (तेजों) को धारण करता हुआ

द्रोण कलश की ओर जाता है, प्रकाश वाले (तेजों) को धारण करता हुआ जाता है, मनुष्यों में आपका भाग यह सोम देवताओं में होमा जाता है, आप घोड़ों को हांको, हमारा कामना करते हुए आओ, प्रीति करते हुए आप हमारी कामना करते हुए आओ । २ ।  
वायुदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२ । १२ । ८ । ८ । १२ । ८ ।

आनो॑नियु॒द्धिः॑ श॒तिनी॑भि॒रध्व॑रं-

स॒हस्रि॑णीभि॒रुप॑या॒ह्वीत॑ये वा॒यो

ह॒व्यानि॑वृ॒तये॑ । तवा॒यंभा॑ग॒ञ्च॒त्वि॒वयः॑-

सर॑श्मिः॒सूर्ये॑स॒चा । अध्व॑र्युभि॒र्भर॑-

माणा॑भयंस॒त वा॒योशु॑क्रा॒भयंस॑त ॥३॥

आ  
नः

आ+

अस्माकम्

-

हमारे

नियुत्भिः	नियुद्भिः	घोड़ों के द्वारा
शतिनीभिः	शतसङ्ख्याकाभिः	सौ के द्वारा
अध्वरम्	यज्ञम्	यज्ञ को
{ सहस्रि- णीभिः	सहस्रसङ्ख्या- काभिः	हजार के द्वारा
उप	प्रति	की ओर
याहि	आ+याहि	आओ
वीतये	भक्षणार्थम्	भक्षण करने के लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
हव्यानि	हव्यानाम् (पष्ठपथे द्वितीया)	हवियों के
वीतये	भक्षणार्थम्	भक्षण करने के लिये
तव	तव	तेरा

अयम्	अयम्	यह
भागः	भागः	भाग
कृत्वि॒वयः॑	समयानुसारेण प्राप्तः	समय के अनसार प्राप्त हुआ
स॒र॒स्मिः	समानदीप्तिः	तुल्य प्रकाश वाला
सूर्ये॑	सूर्येण (चतुर्थीयां सप्तमी)	सूर्य से
स॒चा	सह	साथ
अ॒ध्व॒र्यु॒भिः॑	अध्वर्युभिः	अध्वर्युओं से
भ॒र॒माणाः॑	त्रियमाणाः	एकड़े हुए
अ॒यं॒स॒त	अर्पिताः (मा० को०)	दिये गए हैं
वा॒यो०	हे वायो !	हे वायु
शु॒क्राः	दीप्ताः	चमकते हुए
अ॒यं॒स॒त	अर्पिताः	दिये गए हैं



हे वायो ! ( त्वम् ) शतसङ्ख्याकाभिः सहस्र-  
सङ्ख्याकाभिः(च)नियुद्भिरस्मद्वयज्ञं प्रतिभक्षणार्थम्  
आगच्छ, हव्यानां भक्षणार्थम् (आगच्छ) अयंतव भागः  
समयानुसारेण प्राप्तः (सन्) सूर्येण सह समानदीप्तिः  
(अस्ति) हे वायो ! अध्वर्युभिर्भ्रियमाणाः ( सोमाः )  
अर्पिताः, दीप्ताः ( सोमाः ) अर्पिताः ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे वायु ! आप शत ( और ) सहस्र घोड़ों के द्वारा  
हमारे यज्ञ की ओर भक्षण करने के लिये आवें,  
हवियों के भक्षण करने के लिये ( आवें ) यह आपका  
भाग समय के अनुसार प्राप्त हुआ २ सूर्य के  
साथ समान प्रकाश वाला ( है ), हे वायु ! अध्वर्युओं से  
पकड़े हुए ( सोम ) अर्पण किए गए हैं, चमकते हुए  
सोम अर्पण किये गए हैं ॥ ३ ॥

इन्द्रवायूदेवते, अत्यष्टिछन्दः १२।१२।८।८।१२।८।८

आवांरथो॑नियु॒त्वान्व॑क्षदव॒सेऽभि॑प्र-  
यांसि॑सु॒धितानि॑वी॒तये॑ वायो॑ ह॒व्या-

निवीतये । पिवतंमध्वो अन्धसः  
 पर्वपेयंहिवाहितम् । वायवाचन्द्रेण  
 राधसाऽऽगत मिन्द्रश्चराधसाग-  
 तम् ॥ ४ ॥

आ	आ +	-
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
रथः	रथः	रथ
नियुत्वान्	नियुद्भिर्युक्तः	घोड़ों से जुड़ा हुआ
वक्षत्	आ + वक्षत्, आवहतु (छेदिरूपम्)	लावे
अवसे	रक्षणाय	रक्षा के लिये
अभि	प्रति	की ओर

प्रयांसि	अन्नानि	अन्नों को
सुऽधितानि	सुष्ठुस्थापितानि	सुन्दर रखे हुआँ को
वीतये	भक्षणाय	खाने के लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
हृथ्यानि	हव्यानाम् (पष्ठ्यर्धेद्वितीया)	हवियों के
वीतये	भक्षणाय	खाने के लिये
पिबतम्	पिबतम्	तुम दोनों पीओ
मध्वः	मधुरम् (द्वितीयाधेपष्ठी)	मीठे को
अन्धसः	सोमम् (॥)	सोम को
पूर्वऽपेयम्	पूर्वपानम्	पहले पान
हि	यतः	क्योंकि

वाम्	युवयोः	तुम दोनों का
हितम्	निश्चितम्	निश्चित हुआ है
वायो०	हे वायो !	हे वायु
आ	खलु	सचमुच
चन्द्रेण	भासमानेन	चमकते हुए से
राधसा	धनेन	धन से
आ	आ+	-
गतम्	अ+गतम्, आगच्छतम्	आओ
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
चः	च	और
राधसा	धनेन	धन से
आ	आ+	-
गतम्	अ+गतम्	आओ

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! नियुद्गिर्युक्कोरथो युवां सुस्थापितानि  
अन्नानि प्रति रक्षणार्थं भक्षणार्थम् ( च ) आव  
हतु, हविषां भक्षणार्थम् आवहतु, युवां मधुरं सोमं  
पिवतं यतो युवयाः पूर्वपानं निश्चितम्, हे वाया !  
( युवाम् ) भासमानेन खलु धनेन सह आगच्छतम्  
( त्वम् ) इन्द्रश्च धनेन आगच्छतम् ॥ ४ ॥

माषार्थः ।

हे वायु ! घोड़ों से जुड़ा हुआ रथ आप दोनों को  
सुन्दर रखे हुए अन्नों की ओर रक्षा के लिये ( और )  
खाने के लिये लावे, हवियों के खाने के लिये लावे,  
आप दोनों मीठे सोमको पीओ, - क्योंकि आपका  
पूर्वपान निश्चित हो चुका है, हे वायु ! ( आपदोनों )  
सचमुच चमकते हुए धन के साथ आओ ( आप )  
और इन्द्र धन के साथ आओ ॥ ४ ॥

इन्द्रवायूदेवते, निचृदत्यष्टिश्छन्दः १२।११।८।८।१२।८

आवां धियो ववत्पूरं ध्वरा उपेम-

मिन्दुं समृजन्तवाजिनं माशुमत्यं-

नवाजिनम् । तेषां पिवतमस्मयू आ-  
 नोगन्तमिहोत्था । इन्द्रवायुसुता-  
 नामद्रिभिर्युवं मदायवाजदायुवम् । ५।

आ	आ+	-
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
धियः	स्तुनयः	स्तुतियां
ववृत्युः	आ+ववृत्युः, आवतयन्तु	फेरें
अवरान	यज्ञान	यज्ञों को
उप	प्रात	की ओर
इमम्	इमम्	इस को
इन्दुम्	सोमम्	सोम का

स॒र्म॒ज॒न्त॒	स॒म॒मार्जित॑वन्तः	शुद्ध किया है
वा॒जिन॑म्	बल॑वन्तम्	बलवान को
आ॒शुम्	अति॑शीघ्रगामिनम्	अत्यन्त शीघ्र गामी को
अ॒थ॒यम्	अश्व॑म्	घोड़े को
न	इव॑,	जैसे
वा॒जिन॑म्	बल॑वन्तम्	बलवान को
ते॒षाम्	तान् (द्वितीयाशेषच्छी)	उन को
पि॒व॒त॒म्	पि॒व॒त॒म्	पीओ
अ॒स्म॒ऽयू	अस्मान् कामय॑- मानौ	हम से प्रेम करने वाले तुम दोनों >
आ	आ+	-
नः	अस्मान्	हम को

गन्तम्	आ+गन्तम्, आगच्छतम्	आओ
इह	इह	यहाँ
ऊ॒त॒या	रक्षणेन सह	रक्षा के साथ
इन्द्र॑वायू०	हे इन्द्रवायू !	हे इन्द्र और वायु
सु॒ता॒नाम्	निष्पीडितान्	निचोढ़े हुआओं को
अ॒द्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से,
य॒वम्	युवाम्	तुम दोनों
म॒दा॒य	मदाय	मद के लिये
वा॒जऽदा॒	बलस्य दातारो	बल के देने वाले
यु॒वम्	युवाम्	तुम दोनों

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्रवायू ! युवम् (अस्माकम्) स्तुतयो यज्ञान्  
प्रति आवर्तयन्तु ( ऋत्विजः ) इमं बलवन्तं सोमं



ऋ०मं०१ सू०१३५ मं०६ ( ३७१४ )

सम्मार्जितवन्तः यथा अतिशीघ्रगामिनं बलवन्तम्  
अश्वम् (सम्मार्जयन्ति) अस्मान् कामयमानौ (युवाम्)  
तान् सोमान् पिवतम्, इह ( च ) अस्मान् (प्रति)  
रक्षणेन सह आगच्छतम्, युवां पाषाणैर्निष्पीडितान्  
( सोमान् पिवतम् ) बलस्य दातारौ युवां मदाय  
( पिवतम् ) ॥ ५ ॥

भाषार्थः—

हे इन्द्र और वायु ! आप दोनों को (हमारी)  
स्तुतियाँ यज्ञ की ओर फेरें, ऋत्विजों ने इस बलवान  
सोम को स्वच्छ किया है जैसे अतिशीघ्र चलने वाले  
घोड़े को (स्वच्छ करते हैं) हम को प्यार करने वाले  
(आप) उन (सोमों) को पीवें, (और) यहाँ हमारी (और)  
रक्षा के साथ आवें, आप दोनों पथों से निचोढ़े हुए  
सोमों को (पीवें) बलके देने वाले आप दोनों मद के  
लिये (पीवें) ॥ ५ ॥

इन्द्रवायुदेवते, अत्यष्टिश्रुन्दः १२।१२।८।८।१२।८

इमेवांसोमाअप्स्वासुताइ-

हाध्वर्युभिर्भरमाणाअयंसत वायो

शुक्रा॒अयं॑सत । ए॒तेवा॑म॒भ्यसृ॑क्षत  
 ति॒रःप॒विच॑मा॒श्वः । यु॒वाय॑वोऽति॒रो-  
 मा॒ण्यव्य॑या सो॒मासो॑अत्य॒व्यया॑ ।६।

दूमे

इमे

ये

वाम्

युवाभ्याम्

तुम दोनोंके लिये

सोमाः

सोमाः

सोम

अप्ऽसु

जलेषु

जलों में

या

खलु

सचमुच

सुताः

निष्पीडिताः

निचोढ़े गए

इह

इह

यहाँ

अध्वर्युऽभिः

अध्वर्युभिः

अध्वर्युलोगों से

भरमाणाः

अभियमाणाः

पकड़े हुए

अयंसत

अर्पिताः

अर्पण किये गए

वायो०

हे वायो !

हे वायु

शुक्राः

दौष्टाः

चमकने वाले

अयंसत

अर्पिताः

अर्पण किये गए

एते

एते

ये

वाम्

युवाभ्याम्

तुम दोनों के लिये

अभि

अभि +

असृक्षत

अभि + असृक्षत,  
क्षरितवन्तः

झरे हैं

तिरः

अन्तरेण

में से

पवित्रम्

दशापवित्रम्

छानने वाले ऊनी  
'वस्त्र को

आशवः	शीघ्रकारिणः	श्री. ११५५०१
युवाऽयवः	युवां कामयमानाः	तुम दोनों को
अति	अन्तरेण	कामना करने वाले
रोमाणि	रोमाणि	में से
अव्यया	अव्ययानि	उन को
सोमासः	सोमाः	भेड़ोंवाली को
अति	अन्तरेण	सोम
अव्यया	अव्ययानि	में से
		भेड़ोंवाली का

संस्कृतायः ।

हे वायो ! जलेषु निष्पीडिताः इमे सोमाः इह  
 अध्वर्युभिर्भ्रियमाणाः युवाभ्याम् अर्पिताः ( सन्ति )  
 दीप्ताः ( सोमाः युवाभ्याम् ) अर्पिताः ( सन्ति ) प्रहेऽ  
 शीघ्रकारिणः युवाभ्यां वशापवित्रमन्तरेण क्षरितवन्तः,

श्रु० अ० १ सू० १३५ प्र० ७ सीमाप्यन्तरेण (क्षरितवन्तः)  
युवां कामयन्ताणि) अन्तरेण (क्षरितवन्तः) ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

सोमयु ! जलों में निचोड़े हुए ये सोम आप  
के लिये यहाँ अध्वर्यु लोगों से पकड़े हुए अर्पण  
किये गये हैं, चमकते हुए सोम आप दोनों के लिये  
अर्पण किये गये हैं, ये शीघ्रता करने वाले सोम छानने  
वाले ऊनी वस्त्र में से झरे हैं, आप दोनों की कामना  
करते हुए भेड़ की ऊन में से झरे हैं, (ये) सोम भेड़  
की ऊन में से झरे हैं ॥ ६ ॥

इन्द्रवायूदेवते, अष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।१२।१२।८

अतिवायोससतोयाहिशप्रवतो

यच्चग्रावावदतितच्चगच्छतं गृहमि-

न्द्रप्रचगच्छतम् । विसृताददृशे

रीयतेष्वत मापूर्णयानियुतायाथोअ-

ध्वर मिन्द्रप्रचयाथोअध्वरम् ॥ ७ ॥

अति	अतिक्रम्य	उल्लाँघ कर
वायो०	हे वायो !	हे वायु
ससतः	स्वपतः	सोते हुआं को
याहि	आगच्छ (भाओ लोपः)	आओ
शश्वतः	विश्वान् (निघं० ३१)	सब को
यत्र	यत्र	जहाँ
आवा	पाषाणः	पत्थर
वदति	शब्दं करोति	शब्द करता है
तत्र	तत्र	वहाँ
गच्छतम्	प्राप्ततम्	प्राप्त हों
गृहम्	गृहम्	घर को

इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
च	च	और
गच्छतम्	प्राप्नुतम्	प्राप्त हों
वि	वि +	—
सूनुता	(स्तुतिरूपा)वाक्	(स्तुतिरूपा)वाणी
दृष्टे	वि+दृष्टे, विशेषेण दृश्यते (लङर्थे कर्मणि लिट्)	खूब देखी जाती है
रीयते	स्वति (रीड्स्वप्ने)	झरता है
घृतम्	घृतम्	घृत
आ	आ +	—
पूर्णया	पूर्णेन (रथेन) युक्त्या	भरे हुए रथ से
नियुता	नियत् पङ्क्त्या	जुड़े हुएों के द्वारा घोड़ों के द्वारा

याथः	आर्थाथः, आगच्छतम् (लोडयें लट्)	आओ
अध्वरम्	यज्ञम्	यज्ञ को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
च	च	और
याथः	प्राप्नुतम् (लोडयें लट्)	प्राप्त हों
अध्वरम्	यज्ञम्	यज्ञ को

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! ( त्वम् ) स्वपतः सर्वान् अतिक्रम्य  
 आगच्छ ( त्वम् इन्द्रश्च ) यत्र ( सोमकुट्टनार्थः ) पापाणः  
 शब्दं करोति तत्र प्राप्नुतम् ( त्वम् ) इन्द्रश्च ( नद्- )  
 गृहं प्राप्नुतम् ( यत्रस्तु निरुपा ) वाक् संदृश्यते, घृतम्  
 ( च ) म्रवति, ( युवाम् ) पूर्णेन ( रथेन ) युक्तया नियुत्-  
 पदृक्त्या ( तम् ) यज्ञं प्राप्नुतम्, ( त्वम् ) इन्द्रश्च यज्ञं  
 प्राप्नुतम् ॥ ७ ॥



हे वायु ! आप सोते हुए सब को उल्लाँघ कर आओ, आप (और इन्द्र) जहाँ (सोम कूटने का) पत्थर खड़कता है वहाँ प्राप्त हों, आप और इन्द्र (उस) घर को प्राप्त हों, (जहाँ स्तुति की) वाणी देखी जाती है (और) घी झरता है, आप भरे हुए रथ से जुड़े हुए घोड़ों के द्वारा यज्ञ को प्राप्त हों, आप और इन्द्र यज्ञ को प्राप्त हों ॥ ७ ॥

इन्द्रवायूदेवते, अष्टिश्छन्दः १२।१२।८।१२।१२।८

अ॒चा॒ह॒त॒द्व॒हे॒यि॒म॒ध्व॒आ॒हु॒तिं॑ य॒म॒  
प्र॒व॒त्थ॒मु॒प॒ति॒ष्ठ॒न्त॒जा॒य॒वो॒ ऽस्मे॒  
ते॒स॒न्तु॒जा॒य॒वः॑ । सा॒कं॒गा॒वः॒सु॒व॒ते॒  
प॒च्य॒ते॒य॒वो॒ न॒त॒वा॒य॒उ॒प॒द॒स्य॒न्ति॒धे॒  
न॒वो॒ ना॒प॒द॒स्य॒न्ति॒धे॒न॒वः॑ ॥ ८ ॥

अच	अत्र	यहाँ
अह	खलु	सचमुच
तत्	तस्य (पठ्ठघाल्)	उस की
वहेथे०	प्राप्नुतम् (लोडयैलद्)	प्राप्त हों
मध्वः	मधुरस्य	मीठे की
आऽहुतिम्	आहूतिम्	आहुति को
यम्	यम्	जिस को
अप्रवृत्यम्	अप्रवृत्यम्	पीपल को
{ उपऽति- पठन्त	उपतिष्ठन्ति	सेवन करते हैं
जायवः	जयशीलाः	जयशील
अस्मे०	अस्माकम् (पठ्ठघाल्) (आदेशः)	हमारे

ते	ते	वे
सन्तु	सन्तु	हो
जायवः	जयशीलाः	जयशील
साकम्	युगपत् (भा० को०)	एक साथ
गावः	गावः	गौएँ
सुवते	सुवते	सूती हैं
पच्यते	पच्यते	पकता हैं
यवः	यवः	जौ
न	न	नहीं
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
उप	उप+	-

दस्यन्ति	उप + दस्यन्ति,	सूकती हैं
धेनवः	शुष्कीभवन्ति,	
न	गावः	गौएँ
अप	न	नहीं
दस्यन्ति	अप +	
धेनवः	अप + दस्यन्ति,	नष्ट होती हैं
	अपक्षीणाभवन्ति,	
	गावः	गौएँ

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्रवायु! युवाम्) अत्र खलु तस्य मधुरस्य (सोमस्य) आहुतिं प्राप्तुं यम् अश्वत्थ-रूपं सोमम्) जय-शीलाः (पुरुषाः) उपतिष्ठन्ति, ते जयशीलाः पुरुषा ) अस्माकं सन्तु, हे वायो ! गावो युगपत् सुवते, यवः (च) पच्यते, तुभ्यं गावो शुष्कीनभवन्ति (तुभ्यम्) गावः अपक्षीणा न भवन्ति ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र और वायु!) आप सचमुच यहाँ उस मीठे (सोम) की आहुति को प्राप्त हों जिस पीपल (रूप

अ.सं०१ सू०१३५मं०९ ( ३७२१ )

सोम ) को जयशील (पुरुष)सेवन करते हैं, वे जयशील  
(पुरुष)हमारे हों, हे वायु ! हमारी गौएँ सूती हैं (और)  
साथ ही जो पकता है, आपके लिये गौएँ सूकती  
नहीं (आपके लिये) गौएँ क्षीण नहीं होतीं ॥ ८ ॥

वायुदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२ । १२ । ८ । ८ । १२ ।

इ॒मे॒ये॒ते॒वा॒यो॒वा॒ह्नी॒ज॒सो॒ न्त॒र्न-  
दी॒ते॒प॒त॒य॒न्त्यु॒क्ष॒णो॒ म॒हि॒ब्रा॒ध॒न्त-  
उ॒क्ष॒णः॒ । ध॒न्व॒न्चि॒द्ये॒अ॒ना॒श॒वो॒ जी-  
रा॒ग्नि॒च॒द॒गि॒रौ॒क॒सः॒ । सू॒र्य॒स्ये॒व॒र॒प्र॒म-  
यो॒दु॒र्नि॒य॒न्त॒वो॒ ह॒स्त॒यो॒र्दु॒र्नि॒य॒न्त॒वः  
८ ॥

इ॒मे

इ॒मे

ये

ये	ये	जो
ते	तव	तेरे
सु	शोभनाः	सुन्दर
वायो०	हे वायो !	हे वायु
{ वाहुऽओ- जसः	बाहुषु बलं येषां तथोक्ताः	बलवाली भजाओं वाले
अन्तः	मण्ये	बीच
नदी०	नदी	नदी
ते	तव	तेरे
पतयन्ति	धावन्ति (पतगती, घौरादिका)	दौदते है
उक्षणाः	वृषभाः	बैल

महि	प्रभूतम्	बहुत
ब्राधन्तः	वर्धमानाः	बढ़ते हुए
उक्षणाः	वृषभाः	वैल
धन्वन्	मरुभूमौ (सप्तम्या लुक्)	मरुभूमि में
क्षित्	अप	भी
ये	ये	जो
अनाश्वः	नाशरहिताः (भा० को०)	नाश न होने वाले
जीराः	क्षिप्रगतयः (॥)	शीघ्र चलने वाले
चित्	(पूरणः)	-
{ अगिरोऽ- ओकसः	गिरावाण्या ओकः स्थानं नास्तियेषां तथोक्ताः	वर्णित होनेवाले न करने वाले

सूर्यस्यऽङ्गव	सूर्यस्येव	सूर्य की जैसे
रश्मयः	किरणाः	किरणें
{ दुःखेन नियन्त- व्याः	दुःखेन नियन्त- व्याः	कठिनता से रोके जाने वाले
{ यन्तवः		
हस्तयोः	हस्ताभ्याम्	हाथों के द्वारा
{ दुःखेन नियन्त- व्याः	दुःखेन नियन्त- व्याः	कठिनता से रोके जाने वाले
{ यन्तवः		

संस्कृतार्थः ।

(हे वायो ! ) इमे ये बाहुबलाः तव शोभताः वृषभाः सन्ति(ते) तव नदी (रूपप्रवाह) मध्ये धावन्ति, प्रभूतं वर्धमानाः वृषभाः (नवप्रवाहे) धावन्ति, ये मरुभूमौ अपि नाशरहिताः क्षिप्रगतयः वाण्यास्थितिमकुर्वाणाः सूर्यस्य किरणा इव दुःखेन नियन्तव्याः (सन्ति)हस्ताभ्यां दुःखेन नियन्तव्याः (सन्ति) ॥३॥



म०मं०१सू०१३६मं०१ ( ३७३२ )

जो हम चाहते हैं ॥४॥ जो मनुष्य मित्र और वरुण की सेवा करता है उस शत्रुरहित को वे पाप से बचाते हैं, हवि देने वाले मनुष्य को पाप से बचाते हैं, उस नियम पर चलने वाले सरल पुरुष को अर्यमा चारों ओर से रक्षा करते हैं, जो मित्र और वरुण के नियम पर चलता हुआ स्तुति पाठ करता है, और जो इन के नियम पर चलता हुआ स्तुति-क्रोराग गाता है ॥५॥ मैं महान् आकाश को, धौ और पृथिवी को, मित्र और दानी-वरुण को नमस्कार करता हूँ अत्यन्त दयालु दानी वरुण को नमस्कार करता हूँ। हे मनुष्य! इन्द्र, अग्नि, प्रकाशमय अर्यमा और भगकी स्तुति कर, हम बिरकाल तक जीते हुए सन्तान से युक्त हों, और सोम को रक्षा से युक्त हों ॥६॥ हम देवताओं की रक्षा से रक्षित हुए २. इन्द्र को अपने साथ रखते हुए, अपनी कीर्ति को अपने ऊपर निर्भर रखते हुए मरुतों के साथ रहने का अभिमान रखने वाले हों अग्नि मित्र और वरुण ने हमको शरण दी है हम और हमारी जाति के धनी अमोघ कामना को प्राप्त करें ॥ ७॥

मित्रावरुणौ देवते अत्यष्टिदुन्दः १२।१२।८।८।१२।८

प्रसुज्येष्ठं निचिराभ्यां हृहन्नमो

हृव्यं मतिं भरतामृळ्यद्भ्यां स्वादि-

ष्ठं मृळ्यद्भ्याम् । तासुमाजाघृता-

सुतो यज्ञेयज्ञोपस्तता । अथैनोः

क्षत्रं न कुतश्च न धृषे देवत्वं नूचिदा-  
धृषे ॥ १ ॥

प्र	प्र +	-
सु	सुष्ठु	अच्छी प्रकार से
ज्येष्ठम्	प्रशस्यम्	उत्तम को
{ निऽचिरा- भ्याम्	नितरांचिरकाला भ्याम्	बहुत प्राचीनों के लिखे
बृहत्	महान्तिम्	महान् को
नमः	नमस्कारम्	नमस्कार को
हव्यम्	हव्यम्	हवि को
मतिम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
भरत	प्र + भरत, सम्पादयत	संपादन करो

{ मृळयत्- ऽभ्याम्	दयावद्भ्याम्	दयावानों के लिये
स्वादिष्ठम्	स्वादुतरम्	अत्यन्त स्वादु को
{ मृळयत्- ऽभ्याम्	दयावद्भ्याम्	दयावानों के लिये
ता	तौ	वे दोनों
सम्ऽराजा	सम्राजौ	चक्रवर्ती राजा
{ घृतऽआ- सुती	घृतस्य सिञ्चतारौ	घी के सींचने वाले
यज्ञेऽयज्ञे	प्रतियज्ञे	प्रत्येक यज्ञ में
उपऽस्तुता	स्तूयमानौ	स्तुतिकियेजातेहुए
अथ	अपिच	और
एनोः	एनयोः	इन का

क्षत्रम्	राज्यबलम्	राज्यबल
न	न	नहीं
कुतः	कुतः	कहीं से
चन	अपि	भा
आऽधृषे	आधर्षितुम्	दवाने के लिये
देवऽत्वम्	देवभावः	देवपन
नु	नु+	-
चित्	नु+चित्, नकदापि	न कभी भी
आऽधृषे	आधर्षितुम्	दवाने के लिये

संस्कृतार्थः ।

( हे आर्याः ) नितरांचिरकालाभ्यांदयावद्भ्याम्  
 ( मित्रावरुणाभ्याम् ) प्रशस्यं महान्तंममस्कार हविः  
 स्तोत्रम् ( च ) सुष्ठुसम्पादयत, दयावद्भ्यां स्वादुतरम्

(हविः सम्पादयत) तौ घृतस्यसिञ्चतारौ सम्राजौ  
प्रतियजे स्तूयमानौ ( स्तः ), अपिच एनयोः राज्यवलं  
नकुतोऽपि आधर्षितुं शक्यम्, देवभावः ( च ) कदापि  
नाधर्षितम् ( शक्यम् ) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

(हे आर्य्यलोगो ! ) अत्यन्त प्राचीन, दयावान्  
( मित्र और वरुण के लिये ) उत्तम महान नमस्कार को  
हवि को ( और ) स्तोत्र को सम्पादन करो, ( उन ) दोनों  
दयावानों के लिये अत्यन्त स्वादु ( हवि को संपादन  
करो ) वे दोनों धी को सोचने वाले सम्राट् प्रत्येक यज्ञ  
में स्तुति किये ( जाते हैं ) और इन का राज्यवल कहीं  
से भी नहीं दब सकता, ( इन का ) देवपन कभी भी नहीं  
दब सकता ॥ १ ॥

मित्रावरुणौ देवते, अत्यष्टि इच्छन्दः १२।१२।८।८।१२।८

अद॑र्शि॒गा॒तु॒र॒वै॒वरी॑यसी॒पन्था॑ ।

ऋ॒तस्य॑सम॒यं॒स्तर॑श्मि॒भि॒श्च॒क्ष॒र्भ-

ग॑स्य॒र॒श्मि॒भिः॑ । द्यु॒क्षं॒मि॒त्रस्य॑सा॒दन॑ ।

मय्यङ्गोवरुणस्यच । अथादधातेवृह-

दुक्थयंश्च उपस्तुत्यंवृहद्वयः ॥ २ ॥

अदशिं

हृष्टोऽभूत्

देखा गया

गातुः

मार्गः

मार्ग

उरवे

विस्तीर्णाय

विस्तृत के लिये

वरीयसी

उरुतरः  
(ठिक्क स्पययस)

बहुत चौड़ा

पन्थाः

मार्गः

मार्ग

ऋतस्य

ऋतस्य

ऋत का

सम्

सम्+

-

अयंस्त

सम + अयंस्त.  
धारितोऽभूत्  
(मा० ष्ये०)

धारण किया गया  
है

रश्मिभिः	सूत्रैः	डोरियों से
चक्षुः	चक्षुः	नेत्र
भगस्य	भगस्य	भग का
रश्मिभिः	सूत्रैः	डोरियों से
द्युक्षम्	भास्वरम् (आ० को०)	जगमगाता हुआ
मित्रस्य	मित्रस्य	मित्र का
सदनम्	सदनम्	स्थान
अर्यम्णः	अर्यम्णः	अर्यमा का
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण का
च	च	और
अथ	ततः	वहाँ से

दधाते०	दत्तः	देते हैं
बृहत्	महत्	महान को
उक्थ्यम्	प्रशंसनीयम्	प्रशंस के योग्य को
वयः	बलम्	बल को
{ उपऽस्तु- त्यम्	स्तुत्यर्हम्	स्तुति के योग्य को
बृहत्	महान्तम्	महान को
वयः	बलम्	बल को

संस्कृतार्थः ।

विस्तीर्णाय (सूर्याय) उरुनरो मार्गो दृष्टोऽभूत्,  
(सः) मार्गः ऋनस्य सूत्रैर्धारितोऽभूत्, भगव्य चक्षुः  
सूत्रैः (धारितोऽभूत्) मित्रस्य अर्यम्णो वरुणस्य (च)  
सदनं भास्वरम् (अस्ति) ततः (तौ) प्रशंसनीयं महद्  
घलं दत्तः, स्तुत्यर्हम् महद् बलं वत्तः ॥ ३ ॥



माषाढः ।

विस्तीर्ण (सूर्य के लिये) बहुत चौड़ा मार्ग देखा गया है (वह) मार्ग नियम की डोरियों से थंभा हुआ है, भग का नेत्र डोरियों से (थंभा हुआ है), मित्र अर्यमा (और) वरुण का स्थान जगमगाता (है) वहाँ से (वे) प्रशंसा योग्य महान धूल को देते हैं, स्तुति योग्य मंहान बल को देते हैं ॥ २ ॥

मित्रावरुणौ देवते, अत्यष्टि श्रुतः १२।१२।८।८। १२।

ज्योतिष्मतीमदिति धारयन्ति क्षिति  
स्वर्वतीमासचेतेदिवेदिवे जागृवासा  
दिवेदिवे । ज्योतिष्मत्क्षमाशाते  
आदित्यादानुनस्पती । मिचस्त-  
यैर्वरुणीयातयज्जनोऽर्यमायातय-  
ज्जनः ॥ ३ ॥

{ ज्योति-	प्रकाश वतीम्	प्रकाश वाली को
{ ष्मतीम्		
अदितिम्	अदितिम्	आदति को
{ धारयत्-	पृथिव्याः धार-	पृथिवी के धारण
{ च्छितिम्	यित्रीम्	करने वाली को
स्वःऽवतीम्	द्युलोक वतीम्	द्युलोकवाली को
आ	आ +	-
स॒चे॒ते॒०	आ + स॒चे॒ते, से॒वे॒ते	सेवन करते हैं
दि॒वेऽदि॒वे	प्रतिदिनम्	प्रति दिन
जा॒गृ॒वां॒सा॒	जागरूकौ	जागने वाले
दि॒वेऽदि॒वे	प्रतिदिनम्	प्रतिदिन

ज्योतिष्मत्	तेजोयुक्तम्	तेज से युक्त को
क्षत्रम्	बलम्	बल को
आशाते०	भुञ्जतः	भोगते हैं
आदित्या	आदित्यौ	दोनों आदित्य
दानुनः	दानस्य	दान के
पती०	स्वामिनौ	स्वामी
मित्रः	मित्रः	मित्र
तयोः	तयोः	उन में से
वरुणः	वरुणः	वरुण
{ यातयत्-	जनानां प्रेरयिता	मनुष्यों का प्रेरक
{ ऽजनः		

अ॒र्य॒मा

अ॒र्य॒मा ;

अ॒र्य॒मा

{ या॒त॒य॒त्-

ज॒नानां प्रेरयिता

म॒नु॒ष्यों का प्रेरक

{ ऽज॒नः

संस्कृतार्थः-

(मित्रावरुणौ) पृथिव्याः धारयित्रीं दिवो युक्तं प्रकाशवतीम् अदिति प्रतिदिनं सेवेते, प्रतिदिनं जागरूकौ(सेवेते), दानस्य स्वामिनो आदित्यौ तेजोयुक्तं बलं भुञ्जतः, तयोर्मित्रः जनानां प्रेरयिता, वरुणः(जनानां प्रेरयिता) अर्यमा(चापि) जनानां प्रेरयिता(अस्ति) ॥३॥

भाषार्थः ।

(मित्र और वरुण) पृथिवी के धारण करनेवाली ध्रुलोक से युक्त प्रकाश वाली अदिति को प्रतिदिन सेवन करते हैं, प्रतिदिन जागते हुए (सेवन करते हैं), दान के स्वामी थे आदित्य तेज युक्त बल को भोगते हैं, उन में से मित्र मनुष्यों के प्रेरक, वरुण (मनुष्यों के प्रेरक और) अर्यमा (भी) मनुष्यों के प्रेरक हैं ॥ ३ ॥

मित्रावरुणौ देवते अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अ॒यं मि॒त्राय॒ वरु॒णाय॒ श॒न्त॒मः सोमो॑-

भू॒त्व॒व॒पा॒ने॒ष्ट॒वा॒भ॒गो॒ दे॒वो॒ दे॒वे॒ष्ट॒वा॒भ॒गः  
तं॒ दे॒वा॒सो॒ जु॒षे॒त् वि॒श्वे॒ अ॒द्य॒ स॒जो॒  
ष॒सः । त॒था॒ रा॒जा॒ना॒क॒र॒थो॒ य॒दी॒म॒ह  
ज॒ता॒वा॒ना॒य॒दी॒म॒हे ॥ ४ ॥

अ॒यम्

अ॒यम्

य॒ह

मि॒त्राय॑

मि॒त्राय॑

मि॒त्र के॑ लि॒ये

व॒रु॒णाय॑

व॒रु॒णाय॑

व॒रु॒ण के॑ लि॒ये

श॒म्भ॒त॒मः॑

सु॒ख॒त॒मः॑

अ॒त्य॒न्त॒ सु॒ख॒वा॒ला

सो॒मः॑

सो॒मः॑

सो॒म

भू॒त

भ॒वन्तु॑

हो

१ (ए॒न॒द॒सः श॒पो॒ह॒न्)

अवऽपानेषु	अवाङ्मुखैः (चमसैः) पानेषु	नीचे मुखवाले(च- मसों)द्वारा पीने में
आऽभगः	उपभोग्यः	आनन्द के देने वाला
देवः	देवः	देव
देवेषु	देवेषु	देवताओं में
आऽभगः	उपभोग्यः	आनन्द के देने वाला
तम्	तम्	उसको
देवासः	देवाः	देवता
जुषेरत	सेवन्ताम्	सेवन करें
विश्वे	सर्वे	सब
अद्य	अद्य	आज
सऽजोषसः	समानप्रीतियुक्ताः	एक जैसे प्रसन्न ,

तथा	तथा	वैसे
राजाना	हे राजानों !	हे राजाओ
करथः	कुरुतम्	करो
यत्	यत्	जो
ईमहे	कामयामहे	हम चाहते हैं
ऋतऽवाना	ऋतवन्तो	नियम वाले
यत्	यत्	जो
ईमहे	कामयामहे	हम चाहते हैं

संस्कृतार्थः ।

अयं सोमो मित्राय वरुणाय (च) सुखतमो भवतु  
 पः) चमसैः पानेषु उपभोग्यः (अस्ति) देवो देवेषु उप-  
 भोग्यः (अस्ति), तमद्य विश्वे देवाः समानप्रीतियुक्ताः  
 सेवन्ताम्, हे राजानो ! यदयं कामयामहे (यवाम्)

तथा कुरुतम्, ऋतवन्तौ (युवां तथैव कुरुतम्) यद्  
(वयम्) कामयामहे ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

यह सोम मित्र (और) वरुण के लिये खुदाई हो,  
(जो) चमसों द्वारा पाम करने में आनन्द को देले  
वाला है, देवता देवताओं में आनन्द को देने  
वाला है, उस को आज सारे देवता एक जैसे  
प्रसन्न हुए २ सेवन करें, हे राजाओ ! जो हम चाहते  
हैं (आप) वैसे ही करो, नियम वाले (आप वैसे ही  
करो) जो हम चाहते हैं ॥ ४ ॥

मित्रा वरुणौ देवते अत्यष्टिश्छन्दः१२।१२।८।८।८।१२।८

योमित्रायवरुणायविधुञ्जनी

ऽनर्वाणतंपरिपातोअंहसोदाश्वांसंम-

र्तमंहसः । तमर्यमाभिरक्षत्यृज्य-

न्तमनुव्रतम् । उक्थैर्यएनोः परिभू-

षतिव्रतम् स्तोमैराभूषतिव्रतम् ॥५॥



यः

मि॒त्राय॑

वरु॒णाय॑

अ॒वि॒धत्

ज॒नः

अ॒न॒र्वा॒णम्

तम्

प॒रि

पा॒तः

अ॒ह॒सः

दा॒श॒वांस॑म्

यः

मि॒त्राय॑

वरु॒णाय॑

प॒रि॒च॒रति॑

म॒नु॒ष्यः

श॒त्रु॒र॒हि॒तम्

तम्

प॒रि॒तः

पा॒लय॑तः

पा॒पात्

दा॒ता॒रम्

जो

मि॒त्र के॑ लिये

वरु॒ण के॑ लिये

से॒वा॒ कर॑ता है

म॒नु॒ष्य

श॒त्रु से॑ रहित को

उ॒स को॑

चा॒रों ओ॒र से॑

र॒क्षा॒ कर॑ते हैं

पा॒प से॑

दे॒ने वा॒लों को॑

मर्तम्	मरणधर्माणम्	मरणधर्मी को
अंहसः	पापात्	पाप से
तम्	तम्	उस को
अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा
अभि	अभितः	चारों ओर से
रक्षति	रक्षति	रक्षा करता है
{ ऋजुऽ- यन्तम्	आर्जवमाचरन्तम्	सरल आचार वाले को
अनु	अनुकूलम्	अनुकूल
व्रतम्	नियमम्	नियम को
उक्थैः	शस्त्रैः	स्तुतिके पाठों से

यः	यः	जो
ए॒नोः	ए॒नयोः	इन, दोनों के
प॒रिऽभूष॑ति	अलङ्क॑रोति	सजाता है
व्र॒तम्	व्र॒तम्	व्रत को
स्तो॒मैः	स्तोत्रैः	स्तुति के गीतों से
आ॒ऽभूष॑ति	अलङ्क॑रोति	सजाता है
व्र॒तम्	व्र॒तम्	व्रत को

संस्कृतार्थः ।

यो मनुष्यो मित्रावरुणाभ्यां परिचरति तं शत्रु  
रहितम् (तौ) पापात्परितःपालयतः (हविषः-) दातारं-  
मर्त्यं पापात् (पालयतः), तं नियमानुकूलं आर्जवे-  
नाचरन्तम् अर्यमा अभितो रक्षति, य ए॒नयोः व्रतं  
शस्त्रैः अलङ्क॑रोति, (य ए॒नयोः) व्रतं स्तोत्रैः अल-  
ङ्क॑रोति ॥ ५ ॥

[भाषार्थः ।

जो मनुष्य मित्र (और) वरुण की सेवा करता है, उस शत्रु रहित की (वे) पाप से रक्षा करते हैं, (हवि) देने वाले मरण धर्मा की (रक्षा करते हैं,) उस नियम के अनुयायी सरल आचार वाले को अर्यमा चारों ओर से रक्षा करते हैं, जो इन के नियम को स्तुति के पाठों से सजाता है, (जो इन के) नियम को स्तुति के गीतों से सजाता है ॥ ५ ॥

मित्रावरुणौ देवते अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

नमो॑ दि॒वे॒वृ॒ह॒ते॒रो॒द॒सी॒भ्यां॑ मि॒त्रा-

य॒वो॒चं॒ व॒रु॒णाय॑ मो॒ळ्हु॒षे॑ सु॒मृ॒ळी॒काय॑

मो॒ळ्हु॒षे॑ । इ॒न्द्र॒म॒ग्नि॒मुप॑स्तुहि

द्यु॒क्षम॑र्य॒मणं॑ भ॒गस् । ज्यो॒गजी॑वन्तः

प्र॒जया॑ स॒चेम॒हि सो॑म॒स्योती॑ स॒चेम॒हि

॥ ६ ॥

नमः

दिवे

बृहते

{ रोदसी-  
भ्याम्

मित्राय

वोचम्

वरुणाय

मीळ्छुषे

{ सुऽमृळी-  
काय

नमस्कारम्

दिवे

महते

द्यावापृथिवी-  
भ्याम्

मित्राय

ब्रवीमि

वरुणाय

वदान्याय

अतीवदय्यालवे

नमस्कार को

द्यौ के लिये

महान के लिये

द्यौ और पृथिवी  
के लिये

मित्र के लिये

में कहता हूं

वरुण के लिये

दानी के लिये

अत्यन्त दयालु  
के लिये

मी॒ळ्हु॒षे	वदान्याय	दानी के लिये
इन्द्र॑म्	इन्द्रम्	इन्द्र को
अग्नि॑म्	अग्निम्	अग्नि को
उप॑	सामीप्येन	समीप से -
स्तु॒हि	स्तुहि	स्तुति कर
द्यु॒क्षम्	दीप्तिमन्तम्	प्रकाश वाले को
अ॒र्य॒म॒णम्	अर्यमणम्	अर्यमा को -
भग॑म्	भगम्	भग को
ज्योक्	चिरकालम्	चिरकाल तक
जीव॑न्तः	जीवन्तः	जीते हुए
प्र॒जया॑	पुत्रादिना	पुत्र आदि से

स॒चे॒म॒हि	सङ्ग॒ता भू॒यास्म	हम संग॒त हों !
सो॒म॒स्य	सो॒म॒स्य	सोम की
ऊ॒ती	रक्ष॒या	रक्षा से
स॒चे॒म॒हि	सङ्ग॒ता भू॒यास्म	हम संग॒त हो

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) महतेदिवे, द्यावापृथिवीभ्यां, मित्राय, वदान्याय वरुणाय (च) नमस्कारं ब्रवीमि, अतीवदयालवेवदान्याय (वरुणाय नमस्कारं ब्रवीमि,) हे मनुष्य ! इन्द्रमग्निदीप्तिमन्तमर्यमणं भगम् (च) सामीप्येन स्तुहि (वयम्) चिरकालं जीवन्तः पुत्रादिना सङ्गता भूयास्म, सोमस्य रक्षया (च) सङ्गता भूयास्म ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

मैं महान द्यौ के लिये द्यौ (और) पृथिवी के लिये, मित्र के लिये, (और) दानी वरुण के लिये नमस्कार बोलता हूँ, अत्यन्त दयावान दानी (वरुण के लिये नमस्कार बोलता हूँ) (हे मनुष्य ! ) इन्द्र को अग्नि को प्रकाशमान अर्यमा को और भग को समीप से स्तुति

कर (हम) चिरकाल तक जाते हुए पुत्र आदि से संगत हों, (और) सोमकी रक्षा से संगत हों ॥ ६ ॥

मित्रावरुणौदेवते त्रिष्टुप्छन्दः १११११११११

ऊ॒ती॒दे॒वा॒ना॒व॒य॒मिन्द्र॑व॒न्तो मं॒सी-

महि॒स्वय॑श॒सोम॑रु॒द्भिः । अ॒ग्नि॒र्मि॒त्रो

वरु॑णः॒शर्म॑य॒सन् तद॑प्र॒याम॑म॒घवा॑नो-

व॒यंच ॥ ७ ॥

ऊ॒ती	रक्षया	रक्षा से
दे॒वा॒ना॒म्	देवानाम्	देवताओं की
व॒यम्	वयम्	हम
इन्द्र॑व॒न्तः	इन्द्रवन्तः	इन्द्र को साथ रखते हुए
मं॒सी॒महि॑	अभिमानिनोभवेम	अभिमान वाले



# ऋ० मं० १ सू० १३७ ।

मित्रावरुणौ देवते परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः ।

१-३ । इदं सूक्तं दशरात्रस्य पण्डेऽहनि प्रातःसवने प्रउगशस्त्रे विनि-  
युक्तम् (आ० ८ । १ । १२)

१-मैत्रावरुणस्य प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादाद्याप्रक्षेपणीया  
( आ० ८ । १ । १ )

## सूक्त का भावार्थ ।

हे राजाओ ! हे घुलोक को छूने वाले मित्र और वरुण ! हमने  
पाथरों से कूट कर सोम को निचोड़ा है, आप भावें, ये दूध से मिले  
हुए मदकारक सोम हैं, ये मद के करने वाले सोम हैं, हमारी रक्षा  
करने वाले आप भावें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से  
मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥ हे मित्र और वरुण !  
आप भावें, ये सोम की घुंटे हैं, ये दही से मिले हुए सोम हैं, वही  
सोम मिले हुए निचोड़े हुए सोम हैं, उषा के प्रकट होने पर और  
सूर्य की किरणों के साथ ही आप के लिये सोम निचोड़ा गया है,  
आप मित्र और आप वरुण के पीने के लिये निचोड़ा गया है,  
आप के लिये और पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है, यह  
हे मित्र और वरुण ! आर्य लोग आप दोनों के लिये सोम की पीरी  
को बहुत दूध पाली गौ की न्याह पाथरों द्वारा दोड़ते हैं, हमारे  
आर्य पीरों में यह आपके लिये निचोड़ा है, आप के पीने के लिये  
आप के लिये सोम निचोड़ा है, आप के पीने के लिये

मित्रावरुणौदेवते, अतिशक्वराछन्दः १६।८।१६।१२।८

सुषुमांयातमद्रिभिर्गोश्रीताम-

तसुरादूमे सोमासोमत्सुरादूमे ।

आराजानादिविस्पृशास्मच्चागन्त-

मुपनः । दूमेवांमित्रावरुणागवाशिरः

सोमाःशुक्राःगवाशिरः ॥ १ ॥

सुसुम	वयं सुतवन्तःस्मः	हमने निचोड़ा है
त्वा	आ+	-
यातम्	आ+यातम्	आओ
अद्रिभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
गोऽश्रीताः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए

# ऋ० मं० १ सू० १३७ ।

मित्रावरुणौ देवते परुच्छेपमृषिः ।

विनियोगः ।

१-३ । इदं सूक्तं दशरात्रस्य पण्डेऽहनि प्रातःसवने प्रउगशस्त्रे विनि-  
युक्तम् (भा० ८ । १ । १२)

१-मैत्रावरुणस्य प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादाद्याप्रक्षेपणीया  
( भा० ८ । १ । १ )

## सूक्त का भावार्थ ।

हे राजागो ! हे धुलोक को छूने वाले मित्र और वरुण ! हमने  
पाथरों से कूट कर सोम को निचोड़ा है, आप भावें, ये दूध से मिले  
हुए मदकारक सोम हैं, ये मद के करने वाले सोम हैं, हमारी रक्षा  
करने वाले आप भावें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से  
मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥ हे मित्र और वरुण !  
आप भावें, ये सोम की बूँदें हैं, ये दही से मिले हुए सोम हैं, दही  
से मिले हुए निचोड़े हुए सोम हैं, उषा के प्रकट होने पर और  
सूर्य की किरणों के साथ ही आप के लिये सोम निचोड़ा गया है,  
आप मित्र और आप वरुण के पीने के लिये निचोड़ा गया है, यज्ञ  
के लिये और पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है ॥ २ ॥  
हे मित्र और वरुण ! आर्य लोग आप दोनों के लिये सोम की पोती  
को बहुत दूध वाली गौ की ग्याह पाथरों द्वारा दोड़ते हैं, हमारे  
रक्षक आप इधर मुँह करके सोम पीने के लिये हमारी ओर भावें,  
आर्य पीर निचोड़ा है, आप के पीने के लिये

मित्रावरुणौदेवते, अतिशक्वराछन्दः १६।८।१६।१२।८

सुषुमायातमद्रिभिर्गोश्रीताम-

तसुराद्भुमे सोमासोमत्सुराद्भुमे ।

आराजानादिविस्पृशास्मत्त्रागन्त-

मुपनः । इमेवांमित्रावरुणागवाशिरः

सोमाःशुक्राःगवाशिरः ॥ १ ॥

सुसुम	वयं सुतवन्तःस्मः	हमने निचोड़ा है
आ	आ+	-
यातम्	आ+यातम्	आओ
अद्रिभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
गोऽश्रीताः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए;

स्वऽयशसः	स्वायत्तकीर्तयः	अपने अधीन कीर्ति वाले
मरुत्ऽभिः	मरुद्भिः	मरुतो के साथ
अग्निः	अग्निः	अग्नि ने
मित्रः	मित्रः	मित्र ने
वरुणः	वरुणः	वरुण ने
शर्म	शरणम्	शरण को
यंसन्	प्रयच्छन्	दिया है
तत्	तम् (वरम्)	उस (वर) व
अप्नुयाम	प्राप्नुयाम	हम पावें.
मघऽवानः	धनवन्तः	धन वाले
वयम्	वयम्	हम

च

च

और

संस्कृतार्थः ।

इन्द्रवन्तो वयं देवानारक्षया स्वायत्तकीर्तयः  
 (सन्तः) मरुद्भिः सह अभिमानिनो भवेम अग्निर्मित्रो-  
 वरुणः (चास्मभ्यम्) शरणं प्रायच्छन्, (अस्माकम्)  
 धनवन्तो वयंच तम् (अभीष्टं वरम्) प्राप्नुयाम ॥ ७ ॥

नापार्थः ।

इन्द्र को साथ रखते हुए हम देवताओं की रक्षा से  
 अपने अधीन कीर्ति वाले हुए हुए मरुतों के साथ  
 अभिमान वाले हों अग्नि, मित्र (और) वरुणने (हमें)  
 शरणे दी है, (हमारे) धनी और हम उस (अभीष्ट वर)  
 को प्राप्त करें ॥ ७ ॥

# ऋ० मं० १ सू० १३७ ।

मित्रावरुणौ देवते परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः ।

१-३ । इदं सूक्तं दशरात्रस्य पष्ठेऽहनि प्रातःसवने प्रउगशस्त्रे विनियुक्तम् (आ० ८ । १ । १२)

१-मैत्रावरुणस्य प्रस्थितयाज्यायाः परस्तादाद्याप्रक्षेपणीया ( आ० ८ । १ । १ )

## सूक्त का भावार्थ ।

हे राजाओ ! हे धुलोक को छूने वाले मित्र और वरुण ! हमने पथरों से कूट कर सोम को निचोड़ा है, आप आर्य, ये दूध से मिले हुए मदकारक सोम हैं, ये मद के करने वाले सोम हैं, हमारी रक्षा करने वाले आप आर्य, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥ हे मित्र और वरुण ! आप आर्य, ये सोम की बूँदें हैं, ये दही से मिले हुए सोम हैं, दही से मिले हुए निचोड़े हुए सोम हैं, उषा के प्रकट होने पर और सूर्य की किरणों के साथ ही आप के लिये सोम निचोड़ा गया है, आप मित्र और आप वरुण के पीने के लिये निचोड़ा गया है, यज्ञ के लिये भीर पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है ॥ २ ॥ हे मित्र और वरुण ! मार्त्य लोग आप दोनों के लिये सोम की पोती को बहुत दूध वाली गौ को न्याह पथरों द्वारा दोहते हैं, हमारे रक्षक आप इधर मुँह करके सोम पीने के लिये हमारी ओर आर्य, आर्य धीरों ने यह आपके लिये निचोड़ा है, आप के पीने के लिये यह सम्पूर्ण सोम निचोड़ा है ॥ ३ ॥

मित्रावरुणौदेवते, अतिशक्वराछन्दः १६।८।१६।१२।८

सुषुमायातमद्रिभिर्गोश्रीताम-

तसुरादूमे सोमासोमत्सुरादूमे ।

आराजानादिविस्पृशास्मच्चागन्त-

मुपनः । दूमेवांमित्रावरुणागवाशिरः

सोमाःशुक्राःगवाशिरः ॥ १ ॥

सुसुम	वयं सुतवन्तःस्मः	हमने निचोड़ा है
आ	आ+	-
यातम्	आ+यातम्	आओ
अद्रिऽभिः	पापाणैः	पत्थरों से
गोऽश्रीताः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए;



म॒त॒स॒राः	मदकारकाः	मद करने वाले
इ॒मे	इमे	ये
सो॒मा॒सः	सोमाः	सोम
म॒त॒स॒राः	मदकारकाः	मद करने वाले
इ॒मे	इमे	ये
आ	आ +	-
रा॒जा॒ना	हे राजानौ !	हे राजाओ
दि॒वि॒ऽस्पर्श॒	दिविस्पर्शयुक्तौ	द्वौ में स्पर्श करने वाले
अ॒स्म॒ऽचा	अस्मत्पालकौ	हमारे रक्षक
गन्त॑म्	आ + गन्तम्, आगच्छतम्	आओ
उ॒प	प्रति	की ओर

नः	अस्मान्	हम को
इमे	इमे	ये
वाम्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र(और)वरुण
गोऽग्निः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिलेहुए
सोमाः	सोमाः	सोम
शुक्राः	शुद्धाः	पवित्र
गोऽग्निः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए

संस्कृतार्थः ।

हे राजानो ! दिविस्पशंयुक्तो मित्रावरुणौ । वयं  
पाषाणैः (सोमम्)सुतवन्तः स्मः (युवाम्) आयातम्,  
इमे पयोभिर्मिश्रिता मदकारकाः(च सन्ति) इमे मद-  
कारकाः सोमाः (सन्ति)अस्मत्पालकौ(युवाम्)अस्मान्  
प्रति आगच्छतम्, इमे पयोभिर्मिश्रिता यधयोरर्थम्

श्र०मं०१ सू०१३अं०२ ( ३७६२ )

(विद्यन्ते) पयोभिर्मिश्रिताः शुद्धाः सोमाः (युवयोरप्यं  
विद्यन्ते) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे राजाओ ! द्युलोक में स्पर्श करने वाले मित्र  
और वरुण ! हमने पत्थरों से (सोम को) कूट कर  
निचोड़ लिया है आप दोनों आवें, ये दूध से मिले  
हुए (और) मद के करने वाले (हैं) ये मद के करने  
वाले सोम (हैं), हमारे रक्षक आप हमारी ओर  
आवें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से  
मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥

मित्रावरुणोदेवते अतिशक्री छन्दः १६।८।१६।१२।८

दूम॒त्राय॑ा॒तमि॒न्द॒वः॑ सो॒मा सो॒द॒ध्या॑-

शि॒रः सु॒ता सो॒द॒ध्या॑ शि॒रः । उ॒त

वा॒मु॒ष सो॒वु॒धिसा॑कं॒सूर्य॑स्य॒रश्मि॑भिः

सु॒तो मि॒त्राय॑व॒रुणा॑य पी॒तये॒ चारु॑र्क-

ताय॑ पी॒तये॑ ॥ २ ॥

इ॒मे	इ॒मे	ये
आ	आ +	-
या॒त॒म्	आ+या॒त॒म्	आओ
इ॒न्द्र॒वः	सोमचिन्द्रवः	सोम की वृद्धे
सो॒मा॒सः	सोमाः	सोम
{ दधिऽ-	दध्नामिश्रिताः	दही से मिले हुए
{ आशिरः		
सु॒ता॒सः	सुताः	निचोड़े हुए
{ दधिऽ-	दध्नामिश्रिताः	दही से मिले हुए
{ आशिरः		
उ॒त	अपिच	और

वा॒स्	यु॒वाभ्याम्	तुम्हा॒रे लिये
उ॒प॒सः	उ॒प॒सः	उ॒पा के
वृ॒ध्नि	जा॒गरणे	जा॒गने पर
सा॒कम्	सह	साथ
सूर्य॑स्य	सूर्य॑स्य	सूर्य॑ की
र॒श्मिऽभिः	कि॒रणैः	कि॒रणों से
सु॒तः	नि॒ष्पीडितः	नि॒चोड़ा गया
मि॒त्राय॑	मि॒त्राय	मि॒त्र के लिये
व॒रुणाय॑	व॒रुणाय	व॒रुण के लिये
पी॒तये॑	पा॒नाय	पी॒ने के लिये
चा॒रुः	म॒नोहरः	सु॒न्दर

च॒त्ताय॑	यज्ञाय	यज्ञ के लिये
पी॒तये॑	पानाय	पीने के लिये

संस्कृतार्थः ।

( हे मित्रावरुणौ ! युवाम् ) आगच्छतम्, इमे  
सोमविन्दवः (सन्ति) दध्नामिश्रिताः सोमाः (सन्ति)  
दध्नामिश्रिता निष्पीडिताः (सोमाः सन्ति) अपिच  
उषसो जागरणे (सति) सूर्यस्य किरणैः सह (एव) युवयो-  
रर्थं (सोमः) सुतः, मित्राय वरुणाय पानार्थम् (सोमः  
सुतः), यज्ञाय पानाय (च) मनोहरः (सोमः सुतः) ॥ २ ॥

भावार्थः ।

(हे मित्र और वरुण ! ) आप दोनों आवें, ये सोम  
की बूंदें (हैं) दही से मिले हुए सोम (हैं) दही से  
मिले हुए निचोड़े हुए (सोम हैं) और उषा के जांगने  
पर सूर्य की किरणों के साथ (ही) आप दोनों के लिये  
(सोम) निचोड़ा गया है, मित्र के लिये (और) वरुण  
के लिये पीने के निमित्त (सोम निचोड़ा गया है) यज्ञ  
के लिये (और) पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा  
गया है ॥ २ ॥

म०मं०१ सू०१३७मं०३ ( ३७१३ )

मित्रावरुणौदेवते, अतिशकरीछन्दः १६।८।१६।१२।८

तांवा॑ धेनुं॑ नवा॑स॒रीमं॑ शु॒दुह॑न्त्य-

द्रिभिः॑ सोमं॑ दुह॑न्त्यद्रिभिः॑ । अ॒स्म-

त्वा॑ गन्त॒मुप॑ नोऽर्वा॑ञ्चा॒सोम॑ पीतये ।

अ॒यंवा॑ मि॒त्रावरु॑णा॒नृभिः॑ सु॒तः सोम॑-

आ॒पी॒तये॑ सु॒तः ॥ ३ ॥

ताम्

ताम्

उस को

वाम्

युवाभ्याम्

तुम्हारे लिये

धेनुम्

धेनुम्

गौ को

न

इव

जैसे

वा॒स॒री॒म्	पयसाऽऽच्छादयि॑ त्रीम्, बहुक्षीरा- मित्यर्थः	बहुत दूध वाली को
अ॒ंशु॒म्	(सोम-) काण्डम्	(सोम की) डंडी को
दु॒ह॒न्ति	दुहन्ति	दोहते हैं
अ॒द्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
सोम॑म्	सोमम्	सोम को
दु॒ह॒न्ति	दुहन्ति	दोहते हैं
अ॒द्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
अ॒स्मऽचा	अस्मत्पालकौ	हमारी रक्षा करने वाले
ग॒न्त॒म्	आगच्छतम्	आओ
उ॒प	प्रति	की ओर



नः	अस्मान्	हम को
अर्वाञ्चा	अत्राभिमुखौ	इधर मुख किये
सोमऽपीतये	सोमपानाय	हुए सोम पीने के लिये
अयम्	अयम्	यह
वास	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र और वरुण
नृभिः	नरैः	नरों से
सुतः	निष्पीडितः	निचोड़ा हुआ
सोमः	सोमः	सोम
आ	आ+	-
पीतये	आ+पीतये	संपूर्ण पीने के लिये

सुतः

निष्पीडितः

निचोड़ा हुआ

संस्कृतार्थः ।

(हे मित्रावरुणौ ! आर्य्यमनुष्याः) युवयोरर्थं तां  
बहुक्षीरां धेनुमिव पाषाणैः (सोम-) काण्डं दुहन्ति,  
पाषाणैः सोमं दुहन्ति, अस्मत्पालकौ (युवाम्) अत्रा-  
भिमुखौ (सन्तौ) सोमपानार्थम् अस्मान्प्रति आग-  
च्छतम्, अयं युवयोरर्थं नररभिषुतः, सम्पूर्णपानाय  
सोमः अभिषुतः ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे मित्र (और) वरुण ! (आर्यमनुष्य) आप दोनों  
के लिये उस बहुत दूध वाली गौ की न्याईं पत्थरों  
से (सोमकी) डंडी को दोहते हैं, पत्थरों से सोम  
को दोहते हैं, हमारा रक्षा करने वाले (आप दोनों)  
इधर मुंह किये हुए सोम पीने के लिये हमारी ओर  
आवें, यह आप के लिये (आर्य्य-) वीरों ने निचोड़ा  
है, सम्पूर्ण पीने के लिये सोम को निचोड़ा है ॥ ३ ॥

इति सप्तत्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

# ऋ० मं०१ सू०१३८ ।

पूषादेवता, परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगो लैङ्गिकः ।

सूक्तका भावार्थ ।

मैं पूषादेव के महत्त्व को खदयदकर गायन करता हूँ, उस देव का बल और उसकी महिमा कमी नहीं कुमलाते, वह तत्काल रक्षा करने वाले और सुख के देने वाले हैं, जिसदेव ने सब के मनो को खेच लिया है, उसको मैं कल्याणकी इच्छासे बारंबार नमस्कार करता हूँ॥१॥ जैसे मनुष्य किसी शीघ्र दीढ़ने वाले को आर्यद्रव्यकीय कार्य के लिये मार्ग पर प्रेरण करते हैं, वैसे मैं पूषादेव को अपने स्तोत्रों द्वारा प्रेरण करता हूँ, जिससे वह हम आर्यों के शत्रुओं को हटावे और ऊँटकी न्याईं मरुस्थल के पार लंघाकर फेंक आवे, मैं मरणधर्मी मनुष्य आप कल्याण करने वाले देव को पुकारता हूँ आप हमारे स्तोत्रों को बल युक्त करें और ऐसी कृपा करें कि युद्धों में बल को बढ़ाने वाले स्तोत्र हमारे मुख से निकलें ॥ २ ॥ हे षड्रुता से स्तुति किये जाने वाले पूषादेव ! यह नई रीति है कि आपही भक्त के चित्तमें प्रकाश उत्पन्न करके उसे स्तुतिशील बनाते हैं और फिर आपही उस के भिन्न बन कर रक्षा करते हैं, इसी रीतिके अनुसार हम भी आपसे अर्थों अर्थों धनको मांगते हैं, आप हमारी वृद्धियों से क्रुद्ध न होकर हमारे समीप आवें, प्रत्येक \* संग्राम में

\* प्रत्येक संग्राम जो जोघन में नित्य होता रहता है कभी भीतर के और कभी बाहर के शत्रुओं के साथ ।

हमारे समीप आकर रक्षा करें ॥ ३ ॥ \* हे अजाश्व ! दान शील आप क्रोध न करते हुए हमारे समीपवर्ती हों जिस से हम अपनी कामनाओं को प्राप्त करें, आप हमारे समीप हों जिससे हम यश को प्राप्त करें, आप के कर्म आश्चर्य्ययुक्त हैं, हम चाहते हैं कि हमारे स्तोत्र निर्दोष हों, जिस से आप हमारी तरफ लौटें, हे अत्यन्त प्रकाश धाले ! मैं कदापि आपका भनादर नहीं करूंगा, आपने जो मेरे साथ मित्रता की है उसके लिये मैं छतछन नहीं बनूंगा ॥ ४ ॥

पूषादेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

प्रप्र॑पू॒ष्णस्तु॑वि॒जात॑स्य॒शस्य॑ते  
महि॒तव॑मस्यत॒वसो॑नत॒न्दते॑ स्तो-  
त्रम॑स्य॒नत॑न्दते । अर्चा॑मिसु॒म्नय-  
न्न॒ह म॑न्त्यू॒तिम॑योभुवम् । विप्र॑व-  
स्य॒योम॑न॒आयु॑यवे॒मखो॑ दे॒वआ॑यु॒युवे॑  
मखः ॥ १ ॥

\* अज अर्थात् बकरा पूषा का वाहन है, शतपथ ब्राह्मण में बकरे को प्रजापति और सव पशुओं का रूप माना है, अज सूर्य को उत्पादन शक्ति के स्थानीय है, इसलिये पूषा का वाहन कहा गया है, पूषा भी सूर्य का ही एक विशेष नाम है ॥

प्र०	अग्नेऽग्ने	आगे आगे
पू०	पू०	पू० का
{ तुवि० जा- तस्य	वहूनामर्थमु- त्पन्नस्य	वहुतों के लिये उत्पन्न हुए का
शस्यते	स्तूयते	स्तुति किया जाता है
महि० त्वम्	महत्त्वम्	महत्त्व
अस्य	अस्य	इस के
तवसः	बलस्य	बल का
न	न	नहीं
तन्दते	म्लायते	कुमलाता
स्तोत्रम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र

अस्य

अस्य

इस का

न

न

नहीं

तन्दते

म्लायते

कुमलाता

अर्चामि

नमस्करोमि

मैं नमस्कार  
करता हूँ

सुमनस्यन्

कल्याणमिच्छन्

कल्याण की  
इच्छा करता हुआ

अहम्

अहम्

मैं

{ अन्तिऽ-

आसन्नरक्षणम्

तत्काल रक्षा  
करने वाले को

{ ऊतिम्

मयऽभुवम्

सुखस्यभाव-  
यितारम्सुख के करने  
वाले को

विष्वस्य

सर्वस्य

सब के

यः

यः

जिस ने

मनः	मनः	मन को
आऽयुयुवे	आकर्षितवान्	खेंचलिया
मखः	पूज्यः (मा०को०)	पूज्य ने
देवः	देवः	देव ने
आऽयुयुवे	आकर्षितवान्	खेंचलिया
मखः	पूज्यः	पूज्य ने

सस्कृतार्थः ।

बहुनामर्थमुत्पन्नस्य पूज्यो महत्त्वम् अधिकमधिकं  
स्तूयते, अस्य बलम्य (महत्त्वम्) न म्लायते, अस्य  
स्तोत्रं न म्लायते, कल्याणमिच्छन् हं आसन्नरक्षणं  
सुखस्य भावयितारम् (चतम्) नमस्करोमि, यः पूज्यः  
सर्वस्य मन आकर्षितवान्, पूज्यो देवः (सर्वस्य मनः)  
आकर्षितवान् ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

बहुतों के लिये उत्पन्न हुए २ पूजा का महत्त्व  
बढ़ चढ़ कर स्तुति किया जाता है उसके बलका

# विज्ञापन ।

---

कई कारणों से हम प्रतिमास दो अंक नहीं निकाल सके जैसे सातवें वर्ष के आरम्भ में हमने प्रतिज्ञा की थी, माघ फाल्गुन और चैत्र में कोई अंक नहीं निकला । और भाद्रपद से पौष तक आठ अंक निकल चुके थे । इसलिये यह ८१-८२ अंक वैशाख और ज्येष्ठ के समझने चाहिये आगे की पूर्वको, न्याहें दो महीने में ही दो अंक निकला करेंगे ।

मुन्शी जयराम,  
मैनजर ऋग्वेद संहिता  
फ़ीरोज़पुर ।



अंक ८३-८४]

[आषाढ़-श्रावण १९७०]

# ऋग्वेद संहिता

## (वैदिक जीवन व्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद  
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर  
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलतान निवासी पं० शङ्कर दत्त शास्त्री  
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने  
सम्पादन किया।

लाहौर

पञ्जाब एकाग्रीमीकाल ग्रन्थालय में प्रिण्टर आका  
लासमन के अधिकार से छपा।

[१ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

८४ अंकों का मूल्य १५॥)

(महत्त्व) नहीं कुमलाता, उसका स्तोत्र नहीं कुमलाता, मैं कल्याण की इच्छा करता हुआ ( उस ) तत्काल रक्षा करने वाले और सुख के उत्पन्न करने वाले को नमस्कार करता हूँ जिस पूज्यने सबके मन को खेंच लिया है, पूज्यदेव ने (सब के मनको) खेंच लिया है ॥ १ ॥

पूषादेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।१२।८

प्र॒हित्वा॑प॒षन्न॑जि॒रंन॑याम॒नि

स्तो॑मेभिः॒क्ष॒णव॑क्ष॒णवो॑य॒था॒मृ॒ध उ-

ष्ठो॑नपी॒परो॑मृ॒धः । हु॒वेय॑त्त्वा॒मयो-

भु॒वं दे॒वस॑ख्याय॒मर्त्यः॑ । अ॒स्माक॑-

माङ्ग॑षा॒द्यु॒ग्मि॒न॒न॒स्का॒धि वा॑जै॒षद्यु॒-

ग्मि॒न॒न॒स्का॒धि ॥ २ ॥

प्र	प्र+	-
हि	खलु	सचमुच
त्वा	त्वाम्	तुझ को
पूषन्	हे पूषन् !	हे पूषा
अजिरम्	शीघ्रगामिनम्	शीघ्रगामी को
न	इव	जैसे
यामनि	मार्गे	मार्ग में
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
कृण्वे	प्र+कृण्वे, प्रेरयामि	में प्रेरण करता हूं
ऋणवः	निर्गमयेः (ऋणगतीरेटघटागमा, सपसर्गलोपश्च)	तू हंटावे
यथा	यथा	जैसे

मृधः	शत्रून्	शत्रुओं को
उष्ट्रः	उष्ट्रः	ऊँट
न	इव	जैसे
पीपरः	पारंकुर्याः	पार करे
मृधः	शत्रून्	शत्रुओं को
बुवे	आह्वयामि	मैं बुलाता हूँ
यत्	यत्	जो
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मयःऽभुवम्	सुखस्य भाव- यितारम्	सुख के करने वाले को
देवम्	देवम्	देव को
सुख्याय	सख्याय	मित्रता के लिये
मर्त्यः	मरणधर्मा	मरणधर्मी

अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
आङ्गमान्	स्तोमान्	स्तोत्रों को
दुम्निनः	वलयुक्तान् (आ०को०)	बल वालों को
कृधि	कुरु	कर
वाजेषु	सङ्ग्रामेषु	युद्धों में
दुम्निनः	वलयुक्तान्	बल वालों को
कृधि	कुरु	कर

संस्कृतार्थः ।

हे पूषन् ! (अहम्) मार्गे शीघ्रगामिनम् (मनु-  
प्यम्) इव त्वां स्तोत्रैः प्रेरयामि येन (त्वमस्माकम्)  
शत्रून् निर्गमयेः, उष्ट्र इव (च) शत्रून् पारंकुर्याः,  
यन्मर्त्यः (अहम्) सुखस्यभावयितारं देवं त्वां सख्याय  
आह्वयामि, (नत् त्वम्) अस्माकं स्तोमान् वल-  
युक्तान् कुरु, सङ्ग्रामेषु वलयुक्तान् कुरु ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे पूषा ! मैं आपको स्तोत्रों से प्रेरण करता हूँ जैसे शीघ्र चलने वाले मनुष्य को मार्ग में (प्रेरण करते हैं) जिस से (आप हमारे) शत्रुओं को हटावें ऊंटकी न्याईं शत्रुओं को पार करें (और) जो मरणधर्मी मैं सुख के उत्पन्न करने वाले आप देवता को मित्रता के लिये बुलाता हूँ ( वह ) आप हमारे स्तोत्रों को बलयुक्त करें, युद्धों में (हमारे स्तोत्रों को) बल युक्त करें ॥ २ ॥

पूषादेवता, भुरिगत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१३।८

यस्यतेपषन्तसुख्येविपन्यवः

क्रतवाचित्सन्तोऽवसावुभुजिर इति-

क्रतवावुभुजिरे । तामनुत्वानवीयसी

नियुतरायईमहे । अहेळमानउरु-

शंससरीभव वाजेवाजेसरीभव ॥ ३ ॥

यस्य	यस्य	जिस की
ते	तव	तेरी
पूषन्	हे पूषन् !	हे पूषा
सख्ये	मित्रतायाम्	मित्रता में
विपन्यवः	विशेषेणस्तुति- शीलाः	बहुत स्तुति
क्रत्वा	प्रबोधनेन	करने वाले प्रबोधन से
चित्	एव	ही
सन्तः	सन्तः	हुए २
अवसा	रक्षया	रक्षा से
बुभुक्षिरे	सम्पेदिरे	संपन्न हुए
इति	एवमेव	इसी प्रकार

क्रत्वा	ज्ञानेन	ज्ञान से
बुभुजिरे	सम्पेदिरे	संपन्न हुए
ताम्	ताम्	उस को
अनु	अनु-(सृत्य)	अनुसरण करके
त्वा	त्वाम्	तुझ को
नवीयसीम्	नवतराम्	अत्यन्त नई को
निऽयुतम्	शताब्दम् (भा०को०)	सौ अरब
रायः	धनम्	धन को
इमहे	याचामहे	हम माँगते ह
अहेळमानः	अक्रुध्यन्	न क्रोध करता हुआ
उरुऽग्रं॒स	हेवहुमिःस्तुत्य !	हे वहुतों से स्तुति किये गए



सरी	समीपगामी	समीप जाने वाला
भव	भव	हो
वाजेऽवाजे	प्रतिसङ्ग्रामे	प्रत्येक संग्राम में
सरी	समीपगामी	समीप जाने वाला
भव	भव	हो

संस्कृतायः ।

हे पूषन् ! यस्यतव मित्रतायां स्तुतिशीलाः  
 (मनुष्यास्तव) एव प्रबोधनेन (युक्ताः) सन्तो रक्षया  
 सम्पेदिरे, एवमेव ज्ञानेन सम्पेदिरे, तां नवतराम्  
 (रीतिम्) अनुसृत्य (वयम्) त्वां शतार्घुदधनं याचा  
 महे, हे बहुभिः स्तुत्य ! (त्वम्) अकुर्वन् (सन्) स-  
 मीपगामी भव, प्रतिसङ्ग्रामे समीपगामी भव ॥३॥

माषार्थः ।

हे पूषा ! जिस आपकी मित्रता में स्तुति शील  
 (मनुष्य आप) ही के प्रबोधन से (युक्त) होकर रक्षा  
 से संपन्न हुए हैं, इसी प्रकार ज्ञान से संपन्न हुए

हैं, उस अत्यन्त नई (रीति) के अनुसार (हम) आप से  
सौ अरब धनको माँगते हैं, हे बहुतों से स्तुति किये  
गए! (आप) क्रोध न करते हुए समीप आवें, प्रत्येक  
संग्राम में समीप आवें ॥ ३ ॥

पूषादेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अस्याऊषूणउपसातयेभुवोऽहं-  
लमानोररिवाँअजाश्रवश्रवस्यताम-  
जाश्रव।ओषुत्वाववृतीमहिस्तोमे-  
भिर्दस्मसाधुभिः।नहित्वापूषन्न-  
तिमन्यआघृणेनतेसख्यमपन्हुवे॥४॥

अस्याः	अस्याः	इसकी
ऊ०	(पूरणः)	-
सु	सुष्ठु	खूब

नः	अस्माकम्	हमारे
उप	समीपम्	समीप
सातये	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये
भुवः	भव	तू हो
अहेळमानः	अकुध्यन्	न क्रोध करता हुआ
ररिऽवान्	दानशीलः	दानशील
अजऽअश्व	अजाएव अश्व- स्थानीयायस्य तत्सम्बुद्धौ	हे बकरे रूपी घोड़ों वाले
श्रवस्यताम्	यशइच्छताम्	यश की कामना करने वालों के
अजऽअश्व	हे अजाश्व !	हे बकरे रूपी घोड़ों वाले
ओ०	हे !	हे

सु	सुतराम्	अच्छी तरह
त्वा	त्वाम्	तुझ को
ववृतीमहि	वर्तयेमहि (अन्तर्मा- वितर्णयर्थात् शपःश्लुः)	हम लौटावें
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
दस्म	हे अद्भुतकर्मन् !	हे अद्भुत कर्म वाले
साधुऽभिः	साधुभिः	निर्दोषों से
नहि	नहि	नहीं
त्वा	त्वाम्	तुझ को
पूषन्	हे पूषन् !	हे पूषा
अतिऽमन्ये	अवमन्ये	अनादर करता हूँ
आघृणे	हे विभ्राजमान !	हे अत्यन्त दीप्ति वाले
न	न	नहीं

ते	तव	तेरी
सख्यम्	सख्यम्	मित्रता को
अपऽन्हुवे	अपलपामि	मैं निषेध करता हूँ

संस्कृतार्थः ।

हे अजाइव पूषन् ! दानशीलः (त्वम्) ! अक्रुध्यन् (सन्) अस्याः (कामनायाः) प्राप्तये अस्माकं सुष्ठु-समीपे भव, हेअजाइव! यशइच्छताम् (अस्माकंसुष्ठु समीपेभव) हे अद्भुतकर्मन् ! (वयम्) त्वां साधुभिः स्तोत्रैः सुतरां वर्तयेमहि, हे विभ्राजमान ! (अहम्) त्वां नावमन्ये, (अहम्) तवसख्यं न अपलपामि ॥४॥

भाषार्थः ।

हे वकरेरूपी घोड़ोंवाले पूषादेव ! दानशील (आप) क्रोध न करते हुए इस (कामना) की प्राप्ति के लिये हमारे खूब समीप हों, हे वकरे रूपी घोड़ोंवाले ! आप हम यश की इच्छा करने वालों के (खूब समीप हों), हे अद्भुत कर्म वाले ! (हम) आप को निर्दोष स्तोत्रों द्वारा पूरी तरह से (अपनी ओर) लौटावें, हे अत्यन्त दीप्तिवाले ! मैं आपका अनादर नहीं करता (मैं) आप की मित्रता को नहीं निषेध करता ॥ ४ ॥

इत्यष्टात्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

# ऋ०मं०१ सू० १३६ ।

दैवोदासिः परुच्छेपश्रुषिः, विश्वेदेवादेवताः  
विनियोगः—

- १—दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे माघा विनियुक्ता (आ०८।१।१२)  
३—५ पृष्ठघस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे युष्वास्तोमेभिरित्याश्विन-  
स्तुतः । (आ०८।१।१२)  
४—पृष्ठघस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रस्यैन्द्रेस्तुते तृतीयैषा (आ०८।१।१२)  
तत्रैवसवने प्रस्थितायाज्यानां पुरस्तादन्या ऋचः प्रक्षिप्योभयीनिर्यं  
ष्टव्यंतत्र होतुः प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादपा प्रक्षेपणीया । आ०८।१।१२  
७—दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रातःसवनेष्टुः प्रस्थितयाज्यायाः पुर-  
स्तादेषावपनीया ( आ०८।१।१२ ) तत्रैवसवने प्रउगशस्त्रे द्वितीया ।  
(आ०८।१।१२)  
८—पृष्ठघस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे एषा प्रस्थितयाज्या (आ०८।१।१२)  
९—पृष्ठघस्य षष्ठेऽहनि अच्छावाकस्य प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्ता  
देपा । (आ०८।१।१२)  
११—दशरात्रे षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे वैश्वदेवस्यस्तुतस्य द्वितीयैषा ।  
(आ०८।१।१२)

## सूक्त का भावार्थ ।

स्तुतिर्षो की सुनाई हो, सब से पहले मेरा ध्यान अग्नि की  
स्तुति में लगा है, फिर हम मरुद्गण को बुलाते हैं, इन्द्र और  
घायु को बुलाते हैं, जो सब से नई स्तुति है वह सूर्य के केन्द्र में  
लगी है अब हमारे ध्यान शून्य जोर से देवताओं में लगे ॥ १ ॥  
हे मित्र और वरुण ! जो आप अपने सच्चे रूप को छिपा कर  
मनोबल द्वारा छत्रिमरूप को धारण करते हो, वह सुनहरी रूप  
हमने मन द्वारा ध्यान से और अपने नत्रों से भी देख लिया है जो

विश्वेदेवादेवताः अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।१२।८

अस्तु॑ श्रौ॒षट्॑ पुरो॒ अग्नि॑ न॒ धिया॑ दध

आनु॑ तच्छ्रु॒र्धो॑ दि॒व्यं वृ॑णीम॒ह इन्द्र॑ वा-

यू॒ वृणी॑म॒हे । य॒ज्ञ॒क्रा॒णा वि॒वस्व॑ति

नाभा॑ सं॒दायि॑ न॒व्यसी॑ । अ॒ध॒प्र॒सून-

उ॒प॒यन्तु॑ धी॒तयो॑ दे॒वा अ॒च्छा॒न॒ धी॒तयः॑

॥ १ ॥

अस्तु॑

भवतु॑

हो

श्रौ॒षट्॑

श्रवणम्॑

सुनाई

पुरः॑

अग्ने॑

आगे

अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
धिया	ध्यानेन	ध्यान से
दधे	धारितवानस्मि	मैंने धारण किया है
आ	आ+	—
नु	इदानीम्	अब
तत्	तम्	उस को
ग्रधः	गणम् (आ० को०)	गण को
दिव्यम्	दिव्यम्	दिव्य को
वृणीमहे	आ+वृणीमहे	हम धरते हैं
इन्द्रवायू०	इन्द्रवायू	इन्द्र और वायु को
वृणीमहे	वृणीमहे	हम धरते हैं



नेत्र सोम ने हमको दिये हैं ॥ २ ॥ हे अश्विनो ! देवमत्त मनुष्यों की स्तुति की गूंज आपको हवि ग्रहण करने के लिये आने को प्रेरण करती है, सब लक्ष्मी और अन्न आपके अधोन हैं जब आप आते हैं तो आप के सुनहरी रथ को धाराएँ घी टपकानी हुई चलती हैं ॥ ३ ॥ हे तेजस्वी अश्विनो ! यह प्रसिद्ध है कि आप ही सुलोक को खोलते हो, आपके निपुण सारथि हमारे यशों में आप को लाने के लिये आपके रथ में घोड़ों को जोड़ते हैं, हमने स्तुति द्वारा आप का सुनहरी रथ की पोठपर बिठा दिया है अब आप अन्तरिक्ष को आज्ञा करते हुए सीधे मार्ग से हमारी ओर पधारें ॥ ४ ॥ हे बल रूपी धन वाले अश्विनो ! आप हम को दिन रात अपने बल में से दान करो, आप का दान हम पर कभी कम न हो, दूसरों पर हमारा दान नो कमो कम न हो ॥ ५ ॥ हे वीर इन्द्र ! वीरों के पीने योग्य सोम की बूँद पथरों से निचुड़ कर आपके लिये प्रकट हुई हैं, उनके पान से आप हमको बड़े २ नाना प्रकारके धनों को देने के लिये उत्साहित हों, हे यहुतों से स्तुति किये गये ! आप हमारी स्तुतिओं से आर्षे, अत्यन्त कृपालु आप हमारे पास आर्षे ॥ ६ ॥ हे अग्नि ! हमसे स्तुति किये जाकर आप हमारी बातको सुनो, और पूजनीय देवताओं से जो हमारे राजा हैं हम पर कृपा करने के लिये कहो, हे देवताओ ! जय आपने सूर्य रूपी कामधेनु को अक्षिराओं के तारि दिया, तब अर्यमा ने उनके साथ मिलकर उसको अन्तरिक्ष रूप में माना प्रकार से दोहन किया, अर्यमा उसको जानते हैं और मैं भी जानता हूँ ॥ ७ ॥ हे मरुतो ! आप के घोरता के कर्म जो प्राचीन

\*—मित्र और वरुण का सखा रूप जो सूर्य का आत्मा है वह मन द्वारा ध्यान से देखा जा सकता है, और सोमपानद्वारा मन को उत्तम अवस्था में शारीरिक नेत्रों से भी देखा जा सकता है ।

†—अर्थात् आप के आने से सब दारिद्र्य नाश हो जाते हैं ।

‡—नाना प्रकार से दोहन किया—अर्थात् सूर्य से प्रकाश,

काल में हमारे बड़ों के लिये होते थे वे अब भी हमारे लिये हों, आपके यश हमारे जीते जी क्षीण न हों, जो आप का नित नया अद्भुत और न छोड़ने वाला कर्म युग युग में गूँजता है वह हम में धारण करो, जो दुःख से सम्पाद्य है वह हम को प्राप्त हो, जो कठिनाई है वह हमारे लिये सहल हो ॥ ८ ॥ मेरे पूर्वज दध्यङ्, धक्षिरा, प्रियमेध, कण्व, अत्रि और मनु मूँक्षको अपनी सन्तान जानते हैं, उनका देवताओं के साथ सम्यन्ध है, और हमारा उनके साथ संयन्ध है, इसलिये देवता हम पर कृपा करेंगे, मैं उन महापुरुषों के गौरव को स्मरण करता हुआ नमस्कार करता हूँ, मैं इन्द्र और अग्नि को, स्तुति के साथ नमस्कार करता हूँ ॥ ९ ॥ सृष्टिवश में सूर्यरूपी होता अग्नि व्याज्या पड़ते हैं, हृदिके डालने वाले देवता सूर्य किरणरूपी हृदि को डालते हैं, बृहस्पति चन्द्रकिरण रूपी सोम द्वारा यज्ञ करते हैं, विजली की गरल रूपी सोम कूटने के पत्थर का शब्द दूर से हम अपने कानों से सुनते हैं, सुन्दर कर्म करने वाले बृहस्पति रूप यजमान ने मनुष्यों के लिये वृष्टिरूप जलों को पाया है बृहस्पति ने बहुत जलों को पाया है, ॥ १० ॥ हे देवताओं ! आप जो ग्यारह ध्रुलोक में हो, ग्यारह पृथिवी पर और ग्यारह अन्तरिक्ष में हो, वे सब आप मेरे इस यज्ञ को स्वीकार ँकरो ॥ ११ ॥

उष्णता, विद्युत, वर्षा, नाना रंग और रूप इत्यादि अनेक धन को अन्तरिक्ष में दोहन किया, उस कामधेनु को अर्यमादेव अर्थात् सूर्य का आत्मा और मैं अर्थात् मेरा आत्मा दोनों जानते हैं क्योंकि दोनों एक हैं ।

• व्याज्याये स्तुतिके मन्त्र हैं जिनको पढ़कर हृदि डाली जाती है ।

† 'ग्यारह' एक पल्पित संख्या है, ध्रुलोक के रहने वाले देवता जैसे अश्विन, उषा, त्वष्टा, सविता, भग, पूषा, विष्णु, यदण, यम, और सूर्य आदि हैं, पृथिवी के रहने वाले देवता जैसे पृथिवी मापः, नद्यः, मल्ल, ओषधयः, पर्वत, रात्रि, अग्नि इत्यादि, अन्तरिक्ष में रहने वाले देवता जैसे, वायु, इन्द्र, बृहस्पति, विद्यकमां, सोम, चन्द्रमा मरुत, वसु, पर्जन्य, इत्यादि ।

न०प्र०१सू०१३९ मं०१ ( ३७९० )

विश्वेदेवादेवताः अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अस्तु॑ श्रौष॑ट् पुरो॑ अग्नि॑नं धिया॑ दध॑  
आनु॑त च॒क्षुर्धो॑ दि॒व्यं वृ॑णीम॒ह इन्द्र॑वा-  
यू॒वृणी॑म॒हे । य॒ज्ञ॒क्रा॒णा वि॒वस्व॑ति  
नाभा॑सं॒दायि॑नव्य॒सी । अध॑प्रसू॒न-  
उप॑यन्तु॒धीत॑यो दे॒वा अ॒च्छा॒नधी॑तयः॒

॥ १ ॥

अस्तु॑	भवतु	हो
श्रौष॑ट्	धवणम्	सुनाई
पुरः	अग्ने	आगे

अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
धिया	ध्यानेन	ध्यान से
दधे	धारितवानस्मि	मैंने धारण किया है
आ	आ+	-
नु	इदानीम्	अब
तत्	तम्	उस को
शर्धः	गणम् (आ० को०)	गण को
दिव्यम्	दिव्यम्	दिव्य को
वृणीमहे	आ+वृणीमहे	हम घरते हैं
इन्द्रवायू०	इन्द्रवायू	इन्द्र और वायु को
वृणीमहे	वृणीमहे	हम घरते हैं

भाषार्थः ।

( हमारी स्तुतियों की ) सुनाई हो, मैंने पहिले  
अग्नि को ध्यान से धारण किया है, अब ( हम ) उस  
दिव्य ( मरुद्- ) गण को बरते हैं ( हम ) इन्द्र ( और )  
वायु को बरते हैं, जो सचमुच ( हमारी ) सब से नई  
स्तुति ( है वह ) सूर्य के केन्द्र में लगी है, अब हमारे  
ध्यान खूब जोर से समीप जावें, हमारे ध्यान मानो  
देवताओं को लक्ष रखकर समीप जावें ॥ १ ॥

मित्रावरुणोदेवते, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

यद्दत्यन्मिचावरुणावृतादध्या

ददाधेन्नृतंस्वेनमन्युना दक्षस्य

स्वेनमन्युना । युवोरित्थाधिसस्रस्व-

पश्यामहिरण्ययम् । धीभिश्चनम-

नसास्वेभिरक्षभिः सोमस्यस्वेभि-

रक्षभिः ॥ २ ॥

यत्	यत्	जो
ह	खल	सचमुच
तयत्	तम्	उस को
मि॒त्रा॒व॒रु॒णौ	हे मित्रावरुणौ!	हे मित्र (और) वरुण
ऋ॒तात्	सत्यात्+अधि	सत्य से
अधि॑	+अधि	—
आ॒द॒दा॒थे०	आदधाथे	लेकर धारण
अ॒नृ॒तम्	अनृतम्	करते हो झूठ को
स्वे॒न	स्वकीयेन	अपने से
म॒न्यु॒ना	तेजसा	तेजसे
द॒क्ष॒स्य	मनोबलस्य	मनोबल के

यत्	यत्	जो
ह	खलु	सच मुच
क्राणा	स्तुतिः	स्तुति
विवस्वति	विवस्वति	सूर्य में
नाभा	नाभौ	केन्द्र में
सम्ऽदायि	सम्बद्धाऽभूत्	लग गई
नव्यसी	नवतरा	अत्यन्त, नई
अध	अनन्तरम्	पीछे
प्र	प्रकर्षेण	जोर से
स	सृष्टु	खूब
नः	अस्माकम्	हमारे

उप	उप+	-
यन्तु	उप+यन्तु	समीप जावें
धोतयः	ध्यानानि	ध्यान
देवान्	देवान	देवताओं को
अच्छ	अभिलक्ष्य	लक्ष रख कर
न	इव	न्याई
धोतयः	ध्यानानि	ध्यान

संस्कृतार्थः ।

(अस्माकंस्तुत्याः)श्रवणंभवतु (अहम्) अग्रे अग्नि  
 ध्यानेन धारितवानस्मि, इदानीम् ( वयम् ) तं दिव्यं  
 (मारुतम्) गणं वृणीमहे, (वयम्) इन्द्रवायू वृणीमहे,  
 याखलु(अस्माकम्)नवतरास्तृतिः(अस्तिसा)त्रिवस्वनः  
 केन्द्रे सम्बद्धाऽभूत्, अनन्तरमस्माकं ध्यानानि सुष्ठु  
 प्रकर्षेण उपयन्तु(अस्माकम्)ध्यानानि देवानभिलक्ष्य  
 इव उपयन्तु ॥ १ ॥



स्वेन	स्वकीयेन	अपने से
मन्युना	तेजसा	तेज से
युवोः	युवयोः	तुम दोनों के
इत्था	एवम् (आ० को० )	इस तरह
अधि	अधि+	-
सन्नऽसु	अधि+सन्नसु	स्थानों में
अपश्याम	अपश्याम	हमने देखा है
हिरण्ययम्	स्वर्णमयम्	सुनहरी को
धीभिः	ध्यानैः	ध्यानों से
चन	अपि	भी
मनसा	मनसा	मन से
स्वेभिः	स्वकीयैः	अपनियों से

अक्षऽभिः	चक्षुर्भिः	आँखों से
सोमस्य	सोमस्य	सोम की
स्वेभिः	स्वकीयैः	अपनियों से
अक्षऽभिः	चक्षुर्भिः	आँखों से

संस्कृतार्थः ।

हे मित्रावरुणौ ! यत् (युवाम्) स्वकीयेन तेजसा सत्यात् अनृतम् खलु आदधाथे, स्वकीयमनोबलस्य तेजसा (आदधाथे) एवम् (वयम्) युवयोः स्थानेषु स्वर्णमयम् (रूपम्) मनसा ध्यानेः (च) स्वकीयैः चक्षुर्भिरपि अपश्याम, स्वकीयैः सोमस्यचक्षुर्भिः अपश्याम ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे मित्र (और) वरुण ! जो आप अपने तेज द्वारा सचमुच सत्य से झूठ को धारण करते हो, अपने मनोबल के तेज द्वारा धारण करते हो, इस प्रकार हमने आपके स्थानों में सुनहरी (रूप) को मन (और) ध्यान से (और) अपने नेत्रों से भी देखा है, अपने सोम के नेत्रों से देखा है ॥ २ ॥

सं० ०१ सू० ११ प्र० ०३ ( ३७९८ )

अश्विनौदेवते निचृदत्यष्टिश्छन्दः १२।११।८।८।८।१२।८

युवां॑ स्तोमे॑भिर्दे॒वयन्तो॑ अ॒श्विना  
आ॒वयन्त॑ दू॒वप्र॑ लो॒कमा॒यवो॑ युवा॒ ह॒व्या  
भ्या॒श्ववः॑ । यु॒वोर्वि॒प्रवा॒अधि॒श्रियः॑  
पृ॒क्षप्र॑ च वि॒प्रव॑ वे॒दसा । पु॒षा॒यन्ते॑ वां  
प॒वयो॑ हि॒रण्य॑ये रथे॑ द॒स्त्राहि॒रण्य॑ये  
॥ ३ ॥

युवाम्

युवाम्

तुम दोनों को

स्तोमेभिः

स्तोत्रैः

स्तोत्रों से

देवयन्तः

देवभक्ताः

देवभक्त

अ॒श्वि॒व॒ना	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो !
{ आ॒श्र॒व॒य॒- न्तः॑ऽइ॒व	सर्वतः॑ आ॒व॒य॒न्त इ॒व	मानो सब ओर से सुनाते हुए
प्र॒ल॒ोक॒म्	स्तुति॑मन्त्रम्	स्तुति के मन्त्र को
आ॒य॒वः॑	मनु॑ष्याः	मनुष्य
यु॒वा॒म्	यु॒वा॒म्	तुम दोनों को
हृ॒व्या	ह॒व्यानि	हवियों को
अ॒भि	प्रति	कौ ओर
आ॒य॒वः॑	मनु॑ष्याः	मनुष्य
यु॒वोः॑	यु॒व॒योः॑	तुम दोनों में
वि॒प्र॒वाः॑	सर्वाः॑	सब

अधि	अधि-(श्रिताः)	आश्रित हैं
श्रियः	लक्ष्म्यः	लक्ष्मियां
पृक्षः	अन्नम्	अन्न
च	च	और
{ विप्रवः- वेदसा	हे सर्वधनौ !	हे सब धनों के स्वामी
प्रुषायन्ते	स्त्रावयन्ति	टपकाता हैं
वाम्	युवयोः	तुम दोनों के
पवयः	नेमयः (निघ० ५।५ )	पहिये की धाराएं (हाल)
हिरण्यय	हिरण्मये	सुनहरी में
रथे	रथे	रथ में

दस्त्रा

हे उग्रौ !

हे भयानको

हिरण्यये

हिरणमये

सुनहरी में

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! देवभक्ताः मनुष्याः युवां स्तोत्रैः  
 (प्रेरयन्ति) मनुष्याः स्तुतिमन्त्रं सर्वतः श्रावयन्त इव  
 युवाम् (प्रेरयन्ति) मनुष्याः हवींषिप्रति युवां (प्रेरयन्ति)  
 हे सर्वधनौ ! सर्वाः लक्ष्म्यः अन्नं च युवयोरधि-  
 (श्रिताः सन्ति) युवयोः हिरणमये (लग्नाः) नेमयः  
 (घृतम्) स्त्रावयन्ति, हे उग्रौ ! हिरणमये रथे लग्नाः  
 नेमयः (घृतं स्त्रावयन्ति) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! देवभक्त मनुष्य आप को स्तोत्रों  
 से ( प्रेरण करते हैं ) स्तुतिके मन्त्र को मानो सब  
 ओर से सुनाते हुए आप को ( प्रेरण करते हैं ),  
 मनुष्य हवियों के प्रति (आप को प्रेरण करते हैं),  
 हे सब धनों के स्वामी ! सब लक्ष्मियां और अन्न  
 आप के आश्रित हैं, आप के सुनहरी में (लगी हुई)  
 पहिये की धाराएं (घी) टपकाती हैं, हे भयानक देवो !  
 सुनहरी रथ में लगी हुई पहिये की धाराएं (घी  
 टपकाती हैं) ॥ ३ ॥

क्र०मं०१ सू०१३९मं०४ ( ३८०२ )

अ॒श्विनो॑दे॒वते, अ॒त्य॒ष्टि॒श्रु॒न्वः १२।१२।८।८।८।१२।८

अ॒चे॒ति॒द॒स्त्रा॒व्यू॒नाक॑मृ॒णव॑थी॒

यु॒ज्ज॒ते॒वां॒रथ॑यु॒जो॒दि॒वि॒ष्टि॒ष्व॒ध्व॒-

स्मा॒नो॒दि॒वि॒ष्टि॒षु । अ॒धि॒वां॒स्था॒म॒-

व॒न्ध॒रे॒ रथे॑द॒स्त्रा॒हि॒र॒ण॒य॒ये । प॒थे॒व॒य॒-

न्ता॒व॒नु॒शा॒स॒ता॒र॒जो॑ ज्ज॒सा॒शा॒स॒ता॒-

र॒जः ॥ ४ ॥

अ॒चे॒ति	ज्ञा॒त॒म॒भू॒त्	जा॒ना॒ ग॒या॒ है
द॒स्त्रा	हे॒ उ॒ग्रौ !	हे॒ ते॒ज॒वा॒लो !
वि	वि॒+	-
ऊ॒म्	ए॒व	ही

ना॒क॒म्	धु॒लोक॒म्	धु॒लोक को
च॒ट॒य॒व॒थः	वि+अणवथः, उद्घाटयथः	खोलते हो
यु॒ञ्ज॒ते	योजयन्ति	जोड़ते हैं
वा॒म्	यु॒व॒यो॒रर्थ॒म्	तुम्हारे लिये
र॒थ॒ऽयु॒जः	रथस्ययोजयितारः	सारथि
दि॒वि॒ष्टि॒षु	यज्ञेषु	यज्ञों में
अ॒ध्व॒स्मा॒नः	अध्यवमानाः	न चूकने वाले
दि॒वि॒ष्टि॒षु	यज्ञेषु	यज्ञों में
अ॒धि	उपरि	ऊपर
वा॒म्	यु॒वा॒म्	तुम दोनों को
स्था॒म्	अस्थापयाम (उज्ज्वल माणः)	हमने स्थापित किया है



वन्धुरे	पीठे	पीढ़ी पर
रथे	रथे	रथ में
दस्त्रा	हे उग्रौ !	हे तेज वालो
हिरण्यये	हिरण्मये	सुनहरी में
पथाऽङ्गव	मार्गेणेव	मानो रस्ते से
यन्तौ	गन्तारौ	जाने वाले
अनुऽशासता	आज्ञापयन्तौ	आज्ञा करते हुए
रजः	अन्तरिक्षम्	अन्तरिक्ष को
अञ्जसा	ऋजुना	सीधे से
शासता	शासतौ	राज्य करते हुए
रजः	अन्तरिक्षम्	अन्तरिक्ष को

संस्कृतार्थः ।

हे उग्रौ ! ( अश्विनौ ! ) ( इदमस्माभिः ) ज्ञातम्  
 ( यत् ) युवामेव द्युलोक मुद्घाटयथः, सारथयो युव-  
 योरर्थं यज्ञेषु ( अश्वान् ) योजयन्ति, अच्यवमानाः  
 ( सारथयः यज्ञेषु अश्वान् योजयन्ति ), हे भीषणौ !  
 ( वयम् ) युवां स्वर्णमये रथपीठे अस्थापयाम, ( युवाम् )  
 अन्तरिक्षम् आज्ञापयन्तौ मार्गेणैव गन्तारौ ( स्थः ),  
 अन्तरिक्षं शासतौ ( सन्तौ ) ऋजुना मार्गेण आंग-  
 च्छथः ॥ ४ ॥

मापार्थ ।

हे तेज वाले ( अश्विनो ! ) ( यह हमको ) मालूम  
 है, ( कि ) आपही द्युलोक को खोलते हो, सारथि आप  
 के लिये यज्ञों में, ( घोड़ों को ) जोड़ते हैं, न चूकने वाले  
 सारथि यज्ञों में ( घोड़ों को जोड़ते हैं ), हे भयानक  
 ( देवो ! ) हमने आपको सुनहरी रथ की पीढ़ी पर  
 बिठाया है, आप अन्तरिक्ष को आज्ञा करते हुए  
 मानो रस्ते से चलते हो, अन्तरिक्ष पर राज्य करते  
 हुए सीधे ( रस्ते ) से आते हो ॥ ४ ॥

अश्विनौ देवते बृहती छन्दः ८।८।१२।८

शचीभिर्नः शचीवसू दिवानत्तः

दशस्यतम् । मावांरातिरुपदसत्  
कदाचना स्मद्रातिःकदाचन ॥ ५ ॥

शचीभिः	बलैः	बलों से
नः	अस्मान्	हम को
शचीवसू०	हे बलधनौ !	हे बल रूप धन वालो !
दिवा	दिवा	दिन में
नक्तम्	रात्रौ	रात्रि में
दशस्यतम्	ददेयाम् (दशस्यतिर्दानार्थः)	दो
मा	न	नहीं
वाम्	युवयोः	तुम दोनों का
रातिः	वानम्	दान

उप	उप+	
दसत्	उप+दसत्, उपक्षीणंभवतु (लोडयेंलुङ्)	कमः हो
कदा	कदा	कभी
चन	अपि	भी
अस्मत्	अस्माकम्	हमारा
रातिः	दानम्	दान
कदा	कदा	कभी
चन	अपि	भी

संस्कृतार्थः ।

हे बलधनौ ! (युवाम्) अस्मान् (निज-) बलैः  
दिवसे रात्रौ (च) ददेयाम्, युवयोर्दानं कदापि उपक्षीणं  
न भवतु अस्माकं दानं कदापि उपक्षीणं न भवतु ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे बलरूपी धनवालो ! (आप दोनों) हमको (अपने) बलों से दिन रात दान करो, आपका दान कभी भी कम न हो, हमारा दान कभी भी कम न हो ॥५॥

इन्द्रोद्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।१२।८।

वृष॑न्निन्द्र॑वृष॑पा॒णासु॑न्द्र॒देव॑ इ॒मे

सु॒ताअ॒द्रि॑ पु॒तास॑उ॒द्भिद॑स्तु॒भ्यंसु॒ता-

स॑उ॒द्भिदः॑ । ते॒त्वा॑म॒न्दन्तु॑दा॒वने॑

म॒हे॒षि॒चा॒य॒राध॑से । गी॒र्भिर्गी॑र्वा॒हः

स्त॒व॒मा॒न॒आ॒ग॒हि॑ सु॒मृ॒ळी॒को॒न॒आ-

ग॒हि॑ ॥ ६ ॥

वृष॑न्

हे वीर्य॑वन् !

हे वीर्य॑वान्

इन्द्र

हे इन्द्र !

हे इन्द्र

वृषऽपानासः

वीरैर्पातव्याः

वीरों के पीने योग्य

इन्द्रवः

सोमविन्दवः

सोम की धूँ

इमे

इमे

ये

सुताः

निष्पीडिताः

निचोड़ी गईं

{ अद्रिऽ-

पाषाणैर्नि-  
ष्पीडिताःपत्थरों से निचोड़ी  
गईं

{ सुतासः

उत्ऽभिदः

प्रकटिताः (सन्ति)

प्रकट हुईं (हैं)

तुभ्यम्

तुभ्यम्

तेरे लिये

सुतासः

निष्पीडिताः

निचोड़ी हुईं

उत्ऽभिदः

प्रकटिताः (सन्ति)

प्रकट हुईं (हैं)

ते	ते	वे
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मन्दन्तु	हर्षयन्तु	हर्षित करें
दावने	दानार्थम्	दान के लिये
महे	महते	महान के लिये
वित्राय	नाना विधाय	अनेक प्रकारके
राधसे	धनाय	लिये
गीऽभिः	स्तुतिभिः	धन के लिये
गिर्वाहः	हे स्तुतीनां वोढः	स्तुतियों से
स्तवमानः	स्तवमानः	हे स्तुतियों के
आ	आ +	ढोने वाले
		स्तुति किया जाता
		हुआ

गहि	आ+गहि, आगच्छ	आओ
सुऽमृच्छीकः	सुकृपालुः	अत्यन्त कृपालु
नः	अस्मान्	हम को
आ	आ+	-
गहि	आ+गहि, आगच्छ	आओ

संस्कृतार्थः ।

हे वीर्यवन् ! इन्द्र ! वीरैर्पातव्याः इमे निष्पीडिताः  
पाषाणैर्निष्पीडिताः सोमविन्दवः प्रकटिताः (सन्ति),  
तुभ्यम् निष्पीडिताः प्रकटिताः सन्ति, तत्त्वां महतो-  
नानाविधस्य (च) धनस्य दानाय हर्षयन्तु, हे स्तुतीनां  
बोढः ! स्तुतिभिः स्तवमानः, ( त्वम् ) आगच्छ,  
सुकृपालुः त्वमस्मान् (प्रति) आगच्छ ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे वीर्यवान् इन्द्र ! वीरों के पीने योग्य ये निचोड़ी  
हुई पत्थरों से निचोड़ी हुई सोम की बूंदें प्रकट हुई  
( हैं ) आपके लिये निचुड़ कर प्रकट हुई ( हैं ) वे आप



म०म०१ वृ०१३९म०७ ( ३८१२ )

को महान (और) नाना प्रकार के धन के देने लिये  
हर्षित करें, हे स्तुतियों के होने वाले ! स्तुतियों  
से स्तुति किये गए (आप) आवें, अत्यन्त कृपालु आप  
हमारी (ओर) आवें ॥ ६ ॥

मरुतोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

ओषूणो॑ अग्ने॑ शु॒णु॒हि॒त्त्व॒मी॒ळि॒तो  
दे॒वे॒भ्यो॑ ब्र॒व॒सि॒य॒ज्ञि॒ये॒भ्यो॑ रा॒ज॒भ्यो॑  
य॒ज्ञि॒ये॒भ्यः॑ । य॒ज्ञ॒त्या॒म॒ङ्गि॒रो॒भ्यो॑  
धे॒नु॒दे॒वा॒ अ॒द॒त्त॒न । वि॒तां॒दु॒क्के॒ अ॒र्य॒मा  
क॒र्त॒री॒ स॒चा॑ ए॒ष॒तां॒ वि॒द॒मे॒ स॒चा॑ ॥ ७ ॥

ओ०

हे

हे

सु

संष्टु

अच्छी प्रकार

नः	अस्मान्	हम को
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्निः
शृणुहि	शृणु	सुन
तवम्	त्वम्	तू
ईळितः	स्तुतः	स्तुति किया गया
देवेभ्यः	देवेभ्यः	देवताओं के ताई
ब्रवसि	ब्रूहि (खेटडागमः)	घोल
यज्ञियेभ्यः	यज्ञार्हेभ्यः	पूजा के योग्यों के ताई
राजभ्यः	राजभ्यः	राजाओं के ताई
यज्ञियेभ्यः	यज्ञार्हेभ्यः	पूजा के योग्यों के ताई
यत्	यदा	जब

ह	खलु	सचमुच
तयाम्	ताम्	उस को
अङ्गिरःऽभ्यः	अङ्गिरोभ्यः	अंगिराओं के
धेनुम्	धेनुम्	लिये गौ को
देवाः	हे देवाः !	हे देवताओ
अदत्तन	यूयं दत्तवन्तः	आपने दी
वि	विविधम्	नाना प्रकार से
ताम्	ताम्	उस को
दुःक्रे	दुग्धवान्	दोहा
अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा ने
कर्तारि	कूपे (निघं० १।२३)	कूप में
सचा	सह	साथ

ए॒षः	ए॒षः	यह
ताम्	ताम्	उस को
वे॒द	जानाति	जानता है
मे	मया (तृतीयार्थे पष्ठो)	मेरे से
स॒चा	सह	साथ

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! स्तुतः त्वमस्मान् सुष्ठुशृणु, यज्ञार्हेभ्यो देवेभ्यश्च ब्रूहि, यज्ञार्हेभ्यो राजभ्यः ( ब्रूहि ) हे देवाः ! यदा ( यूयम् ) तां धेनुमङ्गिरोभ्यः खलु दत्तवन्तः ( तदा ) अर्यमा ( तैः ) सह तां विविधं कूपे दुग्धवान्, एषः ( अर्यमा ) तां मया सह जानाति ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! स्तुति किये गए आप हम को अच्छी प्रकार सुनो, (और) पूजनीय देवताओं के ताई बोलो, पूजनीय राजाओं के ताई (बोलो), हे देवताओ ! सच-मुच जब ( आप ने ) उस गौ को अंगिराओं के ताई

क्र०मं०१ सू०१३९ मं०८ ( ३८१६ )

दिया ( तब ) अर्घ्यमा ने (उनके) साथ उसको नाना  
प्रकार से कूप में दोहन किया, वह (अर्घ्यमा) मेरे साथ  
उसको जानते हैं ॥ ७ ॥

मरुतोदेवताः, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।१२।८

मोषुवो॑अ॒स्मद॒भितानि॒प्रौ॒स्या

सना॑भूवन्द्दु॒र्नानि॒मोत॑जारिषु रस्म-

त्पु॒रोत॑जारिषुः । यद्व॑प्तिच॒चं यु॒गे

यु॒गे न॒व्यंघो॒षाद॑म॒र्त्यम् । अ॒स्मा-

सु॒तन्म॑रतो॒ यच्च॑दु॒ष्टरं॑ दिधृ॒ताय-

च॒चदु॑ष्टरम् ॥ ८ ॥

मो०

मा

नहीं

सु

(पूर्णः)

-

वः	युष्माकम्	तुम्हारे
अस्मत्	अस्मत्+अभि, अस्मान्प्रति	हमारी ओर
अभि	+अभि	—
तानि	तानि	वे
पौस्या	वीरकर्माणि	वीरकर्म
सना	जीर्णानि	पुराने
भवन्	भवन्तु	हों
दुम्नानि	यशांति	यश
मा	मा	नहीं
उत	च	ओर
जारिषुः	क्षीणानि भवन्तु	क्षीण हों

अ॒स्मत्	अस्मत्	हमारे
प॒रा	पुरा	पहले
उ॒त	च	और
जा॒रि॒षुः	क्षीणानि भवन्तु	क्षीण हों
यत्	यत्	जो
वः	युष्माकम्	तुम्हारा
वि॒च॒स्	विविच्रम्	विचित्र
यु॒गेऽयु॒गे	युगे युगे	प्रत्येक युग में
न॒व्य॒म्	नूतनम्	नया
घो॒पात्	घोषति (नेटपाटागना)	गूँजना है
अ॒म॒र्त्य॒म्	अमरणधर्मकम्	न मरने वाला

अस्मासु	अस्मासु	हम में
तत्	तत्	वह
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
यत्	यत्	जो
च	च	और
दुस्तरम्	दुःखेन सम्पादनीयम्	कठिनाईसे मिलने योग्य को
दिधृत	धारयत	धारण करो
यत्	यत्	जो
च	च	और
दुस्तरम्	दुःखेन तरणीयम्	दुःख से तिरने योग्य को

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! अस्मान् प्रति तानि युष्मदीयानि वीरकाम



णि जीर्णानि मा भवन्तु यशांसि च क्षीणानि मा भवन्तु  
अस्मत्-(कालात्) पूर्वक्षीणानि मा भवन्तु, यद्युष्माकं  
विचित्रं नूतनम् अमर्त्यम् (च कर्म) युगे युगे घोषति,  
तदस्मासु धारयत, यच्च दुःखेन सम्पादनीयम् (अस्ति)  
(तदपि धारयत), यच्च दुःखेन तरणीयम् (अस्ति तद्-  
धारयत) ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(हे मरुतो ! ) वे आपके वीरकर्म हमारे लिये  
पुराने न हों, और यश क्षीण न हों, हमारे (काल से)  
पहिले क्षीण न हों, जो आपका विचित्र नया (और)  
न मरने वाला (कर्म) युग युग में गूँजता है, वह हम  
में धारण करो, जो दुःख से मिलने योग्य है (वह हम  
को दो) जो दुःख से तिरने योग्य है (वह हमारे लिये  
सहल हो) ॥ ८ ॥

इन्द्राग्नीदेवते, अत्यष्टिश्छन्दः । १२ । १२ । ८ । ८ । १२ । ८

दृ॒ष्ट्य॒ङ् ह॒मे॒ज॒नु॒षं॒पूर्वो॒ष॒ङ्गि॒राः

प्रि॒यमे॒धः॒ क॒ण्वो॒ष॒चि॒र्म॒नु॒र्वि॒दु स्ते-  
मे॒पूर्वे॒म॒नु॒र्वि॒दुः । ते॒षां॒दे॒वेष्व॒वाय॑ति-

र॒स्मा॒कं॒ते॒षु॒ना॒भयः॑ । तै॒षा॒प॒दे॒न॒म-  
ह्या॒न॒मे॒गि॒रे॒न्द्रा॒ग्नी॒ध्या॒न॒मे॒गि॒रा । ६।

द॒ध्य॒ङ्	द॒ध्य॒ङ्	द॒ध्य॒ङ्
ह	खलु	सचमुच
मे	मम	मेरे
ज॒नु॒ष॒म्	जन्म	जन्म को
पूर्वः॑	पुरातनः	प्राचीन
अ॒ङ्गि॒राः	अङ्गिराः	अङ्गिरा
प्रि॒य॒ऽमे॒धः	प्रियमेधः	प्रियमेध
क॒ण॒वः	कणवः	कणव
अ॒चिः॑	अत्रिः	अत्रि

मनुः	मनुः	मनु
विदुः	जानन्ति	जानते हैं
ते	ते	वे
मे	मम	मेरे
पूर्व	पूर्वजाः	पूर्वज
मनुः	मनुः	मनु
विदुः	जानन्ति	जानते हैं
तेषाम्	तेषाम्	उन का
देवेषु	देवेषु	देवताओं में
आश्रयतिः	सम्बन्धः (भा० को०)	संबंध
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारा

तेषु	तेषु	उन में
नाभयः	सनाभिताः	पैतृक संबंध
तेषाम्	तान् (द्वितीयार्थे पण्डो)	उन को
पदेन	गौरवेण	गौरव के कारण
महि	महता	बड़े के कारण
आ	आ+	—
नमे	आ+नमे, प्रणमामि	प्रणाम करता हूँ
गिरा	स्तुत्या	स्तुति से
इन्द्राग्नी०	इन्द्राग्नी	इन्द्र (और) अग्नि को
आ	आ+	—
नमे	आ+नमे, प्रणमामि	प्रणाम करता हूँ
गिरा	स्तुत्या	स्तुति से

संस्कृतार्थः ।

पुरातनोदध्यङ्, अङ्गिराः, प्रियमेधः, कण्वः, अत्रिः,  
मनुः(च) मम जन्म खलु जानन्ति, ते ममपूर्वजाः मनुः  
(च) जानन्ति, तेषां देवेषु सम्बन्धः (अस्ति) अस्माकं  
तेषु सनाभिनाः (वर्तन्ते) तेषां महता गौरवेण स्तुत्या  
तान् प्रणमामि, इन्द्राग्नी स्तुत्या प्रणमामि ॥९॥

भाषार्थः ।

प्राचीन दध्यङ्, अङ्गिरा, प्रियमेध, कण्व, अत्रि,  
(और) मनु मेरे जन्म को सचमुच जानते हैं, वे मेरे  
पूर्वज(और) मनु जानते हैं, उनका देवताओं में सम्बन्ध  
(है,) हमारा उनके साथ पैतृक संबंध (है,) उनके  
महान गौरव के कारण मैं स्तुति के साथ उनको  
प्रणाम करता हूँ, मैं इन्द्र (और) अग्नि को स्तुति के  
साथ प्रणाम करता हूँ ॥ ९ ॥

बृहस्पतिर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

होतायच्च॒निनी॒वन्त॒वायँ॒ बृह-

स्पतिर्य॑जति॒वेन॒उ॒क्षभिः॑ पुरु॒वा-

रेभि॑रु॒क्षभिः॑ । जगृ॒भ्मादूर॑ आदि॒र्श

प्र॒लोक॑म॒द्रेर॒ध॒त्मना॑ । अ॒धारा॑यद॒र-  
 रि॒न्दानि॑सु॒क्रतुः॑ पु॒रु॒षस॒न्धानि॑सु-  
 क्र॒तुः ॥ १० ॥

हो॒ता	हो॒ता	हो॒ता
य॒ज॒त्	याज्यां पठति (लड्येलेट्)	याज्या को पढ़ता है
व॒निनः॑	(हविषः) समर्पकाः (भा०को०)	(हवि) देने वाले
व॒न्त	समर्पयन्ति (भा०को० लड्येलेट्)	देते हैं
वा॒र्यम्	वरणीयम् (हविः)	उत्तम (हवि) को
बृ॒ह॒स्पतिः॑	बृहस्पतिः	बृहस्पति
य॒ज॒ति	यागं करोति	यज्ञ करता है
वे॒नः	कान्तः	प्यारा

उच्चऽभिः	सेचकैः (सोमैः)	सींचने वाले (सोमों) से
पुरुऽवारिभिः	बहुभिर्वरणीयेः	बहुतों से कामना करने योग्यों से
उच्चऽभिः	सेचकैः (सोमैः)	सींचने वाले (सोमों) से
जगभूम	एक्रीमः	हम ग्रहण करते हैं
{ टरेऽआ- - दिशम्	दूरे आज्ञापयन्तम्	दूर में बोलने वाले को
श्लोकम्	शब्दम्	शब्द को
अद्रेः	पाषाणस्य	पत्थर के
अध	इदानीम्	अब
त्मना	स्वेन (आकारलोपः)	अपने से
अधारयत्	धारितवान्	धारण किया है
अरिन्दानि	उदकानि (निघं० १। १२)	जलों को

सुऽक्रतुः	सुकर्मा	सुन्दर कर्म वाले ने
प्रु	बहूनि	बहुतों को
सद्धानि	जलानि (निघं० १।१२)	जलों को
सुऽक्रतुः	सुकर्मा	सुन्दर कर्म वाले ने

संस्कृतार्थः ।

होता(अग्निः) याज्यां पठति, हविषः समर्पकाः (देवाः) वरणीयम् (हविः) समर्पयन्ति, कान्तो बृहस्पतिः सेचकैः (सोमैः) यागं करोति, बहुभिर्वरणीयैः सोमैः यागं करोति, इदानीम् (वयम्) दूरे आज्ञापयन्तं पाषाणस्य शब्दं निज कर्णैः पृच्छीमः, सुकर्मा (बृहस्पतिः) उदकानि धारितवान्, सुकर्मा बृहस्पतिः बहूनि जलानि धारितवान् ॥१०॥

भाषार्थः ।

होता ( अग्नि ) याज्या पढ़ते हैं, हवि, के डालने वाले (देवता) उच्चम हवि को डालते हैं, प्यारे बृहस्पति सींचने वाले सोमों द्वारा याग को करते हैं, बहुतों से कामना करने योग्य सोमों द्वारा याग को करते हैं, अब हम दूर बोलने वाले पत्थर के शब्द को अपने



म०मं०१००१३१मं०११ ( ३८२८ )

(कानों) से सुनते हैं, सुकर्मा (बृहस्पति) ने जलों को धारण किया है, सुकर्मा (बृहस्पति) ने बहुत जलों को धारण किया है ॥ १० ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टप्लन्दः ११।११।११।११

ये देवासो दिव्येकादशस्य पृथि-

व्यामध्येकादशस्य । अप्सु क्षितो म-

हि नैकादशस्य ते देवा सो यज्ञमिमं-

जुषध्वम् ॥ ११ ॥

ये	ये	जो
देवासः	हे देवाः !	हे देवताओ
दिवि	ध्रुलोके	ध्रुलोक में
एकादश	एकादश संख्या- काः	ग्यारह

स्थ	स्थ	तुम हो
पृथिव्याम्	पृथिव्याम्	पृथिवी में
अधि	उपरि	ऊपर
एकादश	एकादश संख्या	ग्यारह
स्थ	काः	तुम हो
अप्सुऽक्षितः	अन्तरिक्षवासिनः	अन्तरिक्ष में
महिना	महत्त्वेन	रहने वाले
एकादश	एकादशसंख्या-	महत्त्व से
स्थ	काः	ग्यारह
ते	स्थ	तुम हो
देवासः	ते	वे
यज्ञम्	हे देवाः ।	हे ऋषताओ
	यज्ञम्	यज्ञ को

इमम्

इमम्

इसको

जुषध्वम्

संभजध्वम्

सेवन करो

संस्कृतार्थः ।

हे देवाः! ये (यूयम्) द्युलोके एकादशसंख्याकाः स्थ, पृथिव्यामुपरि एकादश संख्याकाः स्थ, अन्तरिक्षवासिनः (च) महत्त्वेन एकादश संख्याकाः स्थ, हे देवाः ! ( ते यूयम् ) इमं यज्ञं संभजध्वम् ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

(हे देवताओ!) जो (आप) द्युलोक में ग्यारह हो, पृथिवी के ऊपर ग्यारह हो, (और) महत्त्व के कारण अन्तरिक्ष में रहने वाले ग्यारह हो, हे देवताओ! वे आप इस यज्ञ को सेवन करो ॥ ११ ॥

इत्येकोनचत्वारिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

# अ० मं० १ सू० १४० ।

अग्निदेवता, उचथ्यपुत्रोदीर्घतमाऋषिः ।

विनयोगः—

१—१३ । इदं सूक्तं प्रातरनुवाकस्याग्नेये क्रतौ जागते छन्दसि आदिव-  
नशास्त्रञ्च धिनियुक्तम् (आ० ४।१३।७)

सूक्त का भावार्थ ।

जैसे मनुष्य के लिये अन्न तैय्यार करते हैं वैसे घेदी में बैठने के स्वभाव वाले स्थानप्रिय अग्निदेव के लिये स्थान को तैय्यार करो, और जैसे मनुष्य को वस्त्र पहनाते हैं वैसे बन्धकार के नाश करने वाले पवित्र अग्नि को स्तोत्र से आच्छादन करो ॥ १ ॥ द्विजन्मामग्नि तोन प्रकार के अन्न को सेवन करते हैं और याव हृद को साल में फिर बढ़ा देते हैं, यह घैल के मुख से घाल भादि को और हस्ती के मुख से घन के घृक्षों को खाते हैं ॥ २ ॥ उसकी दोनों माताएँ जो इपट्टी रहती हैं और काली पद्मगई हैं काँप कर बालक को शीघ्र गर्भ से छोड़ती हैं, यह बालक आगे की जीम निकालता हुआ और नाश करता हुआ शीघ्रता से छूटता है, यह पास रहकर सेवा करने योग्य और रक्षा करने योग्य है, यह यजमान-रूप अपने पिता की वृद्धि करनेवाला है ॥ ३ ॥ उग्र मनुष्य के दितके

\* “तीन प्रकार अन्न को” अर्थात् आद्यधीय रूप से दधि की, जठराग्नि रूप से अन्नादि को और दायाग्नि रूप से घना को, ये तीनों प्रकार के अन्न प्रतिवर्ष फिर उत्पन्न होते हैं “द्विजन्मा” इसलिये कि भरणी में एक जन्म और माघान संस्कार से दूसरा जन्म, जैसे मनुष्य का माता से एक जन्म और उपनयन से दूसरा जन्म होता है ॥

† “दोनों माताएँ” अर्थात् अधरारणि और उत्तरारणि ॥

लिये धनों को जलाने के निमित्त अग्निदेव चलते हैं,\* तो उनके लिये घेगवान, घोघगामी, नानारंग वाले, हलके दौड़ने वाले, वायु से प्रेरित होकर सड़क से निकल जाने वाले, स्वच्छन्द चलने की इच्छा वाले और रस्ते को काला करने वाले घोड़े जोड़े जाते हैं । ४॥ अथ अग्निदेव भूमिको छूते हुए श्वास लेते हुए और गरजते हुए चलते हैं तो उनकी ज्वालाएँ बड़े रूपको धारण करती हुई और बड़े शरीर वाले अंधकार को सड़क से नाश करती हुई चलती हैं ॥ ५॥ अग्निदेव पीले रंग-वाली घूटियोंको मानो आच्छादन करते हुए झुकते हैं और अत्यन्त धाड़ते हुए ऐसे चलते हैं जैसे बैल पत्तियों की ओर जाता है, वह बलको दिखाते हुए अपने शरीरोंको प्रकाशित करते हैं और भयंकर बैल की म्याहँ किसी से न पकड़े जाते हुए साँगों को दिलाते हैं । ६॥ अग्निदेव छिप कर और प्रकट होकर ओषधियों को आलिंगन करते हैं और जानते हुए उन जानने वालियों में नित्य शयन करते हैं, वे ओषधियाँ फिर बढ़ती हैं और दिव्यरूप को धारण करती हैं, सूर्य-रूप अग्नि और ओषधियाँ मिलकर बसंत में धो और पृथिवी रूप माता पिता के रूप को बदल देती हैं ॥ ७॥ लंबे बालों वाली ज्वालारूपी कुमारियाँ अग्निदेव को पकड़ लेती हैं और मर कर उस जीवित दावाग्नि के लिये फिर उठ खड़ी होती हैं, अग्नि उनकी जरावस्था को छुड़ाते हुए और प्राण बल तथा जीवन की शक्ति को धारण करते हुए क्षूण गरजते हुए चलते हैं ॥ ८॥ अग्निदेव पृथिवी रूपी माता को मोढ़नी को घाटते हुए जयको प्राप्त करते हुए और जीवों को मगाते हुए चलते हैं, घड़ दो पैरों वाले और चार पैरों वाले जीवों को बल देते हुए सब ओर सफाई करते हुए चलते हैं और इनके पीछे २ मार्ग काला होता जाता है ॥ ९॥ घर को प्यार करने वाला छिह करता

\* ४ से ९वें मंत्र तक दावाग्नि का वर्णन है, जो धनों का जलाकर मनुष्यों के लिये रहने के योग्य स्थान को बनाती है ॥

हुआ अग्नि रूपी बैल हमारे धनवानों के घर में पूजा के लिये सदा प्रदीप्त हो, और जैसे युवा वीर बालक के घरों को त्यागकर युद्ध में कवच पहन कर चारों ओर से शत्रु के धन को जीतता है वैसे अग्निदेव हमारे धनवानों के लिये धन को जीते ॥ १० ॥ हे अग्नि ! भक्ति पूर्वक निवेदन किया हुआ यह स्तोत्र उस स्तोत्र से जो प्रिय है परन्तु घुरी तरह से निवेदन किया गया है आप को अधिक प्रिय हो, जो आपका चमकता हुआ शरीर है उस से हमारे लिये रमणीय धन की कामना करो ॥ ११ ॥ हे अग्नि ! आप हमारे घर के मनुष्यों के लिये और गुरुवर्य योधामों के लिये ऐसी नाव को दें जिस के चपे सदा चलते रहें और जो आश्रय देनेमें समर्थ हो, जो हमारे वीर और धनवानों को पार लंघावे और शरण रूप हो ॥ १२ ॥ हे अग्नि ! स्तोत्र रचने में हमारा उत्साह बढ़ाओ, घौ और पृथिवी तथा स्वयं चलने वाली नदियाँ हम को गौ आदि पशु जौ आदि भन्न और लंबी आयु को दें, उपाएँ हमारे लिये बल को और कामना के योग्य पदार्थों को करें ॥ १३ ॥

अग्निदेवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

वे॒दि॒ष॒दे॒प्रि॒य॒धा॒मा॒य॒सु॒दु॒ते॒ धा॒सि॒-  
मि॒व॒प्र॒भ॒रा॒यो॒नि॒म॒ग्न॒ये॒। व॒स्त्वे॒णे॒व॒वा॒-  
स॒या॒म॒न्म॒ना॒शु॒चि॒ज्यो॒ती॒र॒थं शु॒क्र॒-  
व॒र्ण॑त॒मो॒ह॒न॒म् ॥ १ ॥

वे॒दिऽस॒दे	वेद्यांसदनशीलाय	वेदी में बैठने वाले के लिये
प्रि॒यऽधा॒माय	प्रियस्थानाय	जिसको स्थान प्यारा है ऐसे के लिये
सु॒द्यु॒ते	अतीवद्योतमानाय	अत्यन्त प्रकाश- मान के लिये
धा॒सिस्ऽद्व॒व	अन्नमिव (निघं० २।७)	अन्न की न्याई
प्र	प्र +	-
भ॒र	प्र + भर, सम्पादय	सम्पादन कर
यो॒निस्	स्थानम्	स्थान को
अ॒ग्नये	अग्नये	अग्नि के लिये
वस्त्रे॑णऽद्व॒व	वस्त्रेणेव	वस्त्र से जैसे
वा॒स॒य	आच्छादय	ढक
स॒न्म॒ना	स्तोत्रेण	स्तोत्र से

शुचिम्	पवित्रम्	पवित्र को
{ ज्योतिः रथम्	ज्योतीरथम्	ज्योति रूप रथ वाले को
शुक्रऽवर्णम्	शुक्रवर्णम्	उज्ज्वल रंग वाले को
तमःऽहन्तम्	तमसोहन्तारम्	अंधेरे के नाश करने वाले को

संस्कृतार्थः ।

(हे मनुष्य) ! वेद्य। सदनशीलाय, प्रियस्थाना, यअतीव  
द्योतमानाय (च) अग्नये अन्नमिव स्थानं सम्पादय,  
(तम्) पवित्रं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमसोहन्तारम्  
(चाऽग्निम्) वस्त्रेणेव स्तोत्रेणाऽऽच्छादय ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

( हे मनुष्य ! ) वेदी में बैठने वाले, स्थान को  
प्यार करने वाले (और) अस्यन्त प्रकाश वाले अग्नि  
के लिये अन्न की न्याईं स्थान को सम्पादन कर,  
उस पवित्र, ज्योति रूप रथ वाले, उज्ज्वल रंग वाले  
(और) अंधेरे के नाश करने वाले ( अग्नि ) को वस्त्र  
का न्याईं स्तोत्र से ढक ॥ १ ॥



अग्निर्देवता जगतीछन्दः। १२।१२।१२।१२।

अभि॒द्विजन्मा॑चि॒वदन्न॑मृज्यते सं-  
वत्स॒रेवा॑वधेज॒ग्धमी॒पुनः॑। अन्यस्या-  
साजि॒ह्वया॑जेन्यो॒वषा॑न्य॒न्येन॑वनि-  
मोमृ॒ष्टवा॒रुणः॑ ॥ २ ॥

अभि	अभि +	-
द्विजन्मा	द्विजन्मा	दो बार जन्मने
चि॒वदत्	त्रिप्रकारम्	वाला तीन प्रकार वाले
अन्नम्	अन्नम्	को अन्न को
मृज्यते	अभि+मृज्यते, प्राप्नोति	पाता है
संवत्सरे	सम्बत्सरे	साल में

वृद्धे	वर्धयति (मन्तर्भावित्यर्थः)	बढ़ाता है
जग्धम्	भक्षितम्	खाए हुए को
दूम्०	(पूरणः)	-
पुनः०	पुनः	फिर
अन्यस्य	अन्यस्य	एक के
आसा	मुखेन	मुख से
जिह्वया	जिह्वया	जिह्वा से
जेन्यः	जयशीलः (मा० को०)	जयशील
वृषा	वृषः	घैल
नि	नि+	-
अन्येन	अन्येन	दूसरे से

वनिनः	वनसम्बन्धिनो वृक्षान्	वनके वृक्षों को
मृष्ट	नि+मृष्ट, निमा- ष्टि, निःशेषो- करोति	निःशेष करता है
वारणः	गजः	हस्ती

संस्कृतार्थः ।

द्विजन्मा (अग्निः) त्रिप्रकारम् अन्नं प्राप्नोति,  
भक्षितम् (च) संवत्सरे पुनर्वर्धयति, (मः) जयशीलो  
वृषः अन्यस्य मुखेन जिह्वा (च) भक्षयति सः) गजः  
अन्येन (मुखेन) वनवृक्षान् निःशेषीकरोति ॥२॥

भाषार्थः ।

दोवार जन्मने वाले ( अग्नि ) तीन प्रकार के  
अन्न को पाते हैं (और) वाए हुए को साल भर में  
फिर बढ़ा देते हैं, वह जयशील बैल एक के मुख  
(और) जिह्वा से खाता है और वह) हस्ती दूसरे  
(मुख) से वन के वृक्षों को निःशेष करता है ॥ २ ॥

\* प्रयोजन यह है कि बैल की चराने की शक्ति और हाथी की  
वृक्षों के बरसा देने की शक्ति रूपान्तर में अग्नि की ही शक्ति है ।

अग्निदेवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२

कृ॒ष्ण॒प्र॒तौ॑ वे॒वि॒जे॒अ॒स्य॒स॒क्षि॒ता॑  
 उ॒भा॒त॒रे॒ते॑ अ॒भि॒मा॒त॒रा॒शि॒शु॒म् । प्रा॒-  
 चा॒जि॒ह्वं॑ ध॒व॒स॒य॒न्तं॑ तृ॒षु॒च्यु॒त॒ मा॒सा॒-  
 च्यं॑ कु॒प॒यं॑ व॒र्ध॒नं॑ पि॒तुः ॥ ३ ॥

कृ॒ष्ण॒ऽप्र॒तौ॑	कृष्णवर्णतां प्राप्नवत्यौ	काली हुई हुई
वे॒वि॒जे॒०	कम्पेते ( कडधैलिद् )	कौपती हैं
अ॒स्य॒	अस्य	इस की
स॒ऽक्षि॒तौ॑	गमाननिवासे	इकट्ठी रहने वालों
उ॒भा॒	उभे	दोनों

तरेते०	अभि+तरेते, मोचयतः (आ० को०)	छोड़ती हैं
अभि	अभि+	—
मातरा	मातरौ	माताएँ
शिशुम्	बालकम्	बालक को
{ प्राचाऽ- जिह्वम्	अग्रजिह्वम्	आगे जीभ निकाले हुए को
धवसयन्तम्	नाशयन्तम्	नाश करते हुए को
तप्पुऽच्युतम्	क्षिप्रंप्रादुर्भवि- तारम्	शीघ्र प्रकट होने वाले को
आ	आ+	—
साच्यम्	आ+साच्यम्, उपसेवितव्यम्	पास रहकर सेवा करनेयोग्य कां

कुपयम्	गोपनीयम्	रक्षा करने योग्य
वर्धनम्	वर्धयितारम्	को
पितुः	पितुः	बढ़ाने वाले को
		पिता के

संस्कृतार्थः ।

कृष्णावर्णतांश्राप्तवत्यौ समाननिवासे अस्य उभे मातरौ कम्पेते, अग्नजिह्वम् (तमः) नाशयन्तं क्षिप्रप्रादुर्भवितारम् उपसेवितव्यं गापनायं पितुः वर्धयितारम् (च) बालकम् (गर्भान्) मोचयतः ॥३॥

भाषार्थः ।

काली हुई हुई इकट्ठी रहने वाली इसकी दोनों माताएँ काँपती हैं (और) आगे जीभ निकाले हुए, (अंधरे को) नाश करते हुए, शीघ्र प्रकट होने वाले, पास रह कर सेवा करने योग्य, रक्षा करने योग्य (और) पिता के बढ़ाने वाले बालक को (गर्भ से) छोड़ती हैं ॥ ३ ॥

अग्निदेवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

सुम॑द्वो॑श्मन॑वे॒मानव॑स्य॒तेर॑घु-

द्रुवः कृष्णसीतासञ्जुवः । असमना  
अजिरासोरघुष्यदो वातजूताउप-  
युज्यन्तआशवः ॥ ४ ॥

मुमुक्षुवः	स्वाच्छन्द्य- मिच्छन्तः	स्वच्छन्दता की इच्छा वाले
मनवे	मनवे	मनु के लिये
मानवस्यते	मानवानिच्छते	मनुष्यों को चाहने वाले के लिये
रघुऽद्रुवः	लघुधावनयुक्ताः	हलके दौड़ने वाले
{ कृष्णऽसी- तासः	कृष्णमार्गाः	काले रस्ते वाले
ऊम्०	(पूरणः)	—
जुवः	वेगवन्तः	वेगवान

असमनाः	भिन्नवर्णाः (आ० को०)	भिन्न रंगों वाले
अजिरासः	शीघ्रगामिनः	तेज चलने वाले
रघुऽस्यदः	लघुसर्पन्तः	सहज से सटकने वाले
वातऽजूताः	वातेन प्रेरिताः	वायु से प्रेरण किये हुए
उप	उप+	-
युज्यन्ते	उप+युज्यन्ते	जोड़े जाते हैं
अश्वः	अश्वः (आ० को०)	घोड़े

संस्कृतार्थः ।

मानवानिच्छते मनवे स्वाच्छन्त्यमिच्छन्तो लघुधावन्तः कृष्णमार्गाः वेगवन्तो भिन्नवर्णाः शीघ्रगामिनो लघुसर्पन्तो वातप्रेरिताः (च) अश्वः उप-युज्यन्ते ॥ ४ ॥

माध्यायः ।

मनुष्यों को चाहने वाले मनु० के लिये स्वच्छ-



न्दता की डच्छा करने वाले, हलके दौड़ने वाले, काले रस्ते वाले, वेगवान, भिन्न रंगों वाले, तेज चलने वाले, सहज से सटकने वाले, (और) वायु से प्रेरण किए हुए घोड़े जोड़े जाते हैं ॥ ४ ॥

अग्निदेवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

आदस्यतेध्वसयन्तीवृथैरते

कृष्णमभ्वंमहिवर्पःकरिक्कतः।यत्सी

महीमवनिंप्राभिसमृश दभिप्रव-

सन्तस्तनयन्नेतिनानदत् ॥ ५ ॥

आत्

अस्य

ते

तदा

(मा० को०)

अस्य

ते

तव

इस के

वे

ध्वसयन्तः	नाशयन्तः	नाश करते हुए
वृथा	अनायासेन	सहज से
दूरते	गच्छन्ति	जाते हैं
कुष्ठणम्	अन्धकारम्	अन्धकार को
अभवम्	बृहत्कायम्	बड़े शरीर वाले को
महि	महत्	बड़ा
वर्षः	रूपम्	रूप
करिक्कतः	अत्यर्थकूर्वन्तः	अत्यन्त करते हुए
यत्	यदा	जब
सीम्	(पूरणः)	—
मुहीम्	महतीम्	बड़ी को

अ॒व॒नि॒स्	पृथि॒वीप्	पृथि॒वी को
प्र	प्रकर्षेण	अत्यन्त
अ॒भि	अभि+	—
म॒र्म॒श॒त्	अभि+म॒र्म॒श॒त्, अ॒भि॒तः स्पर्श॑ति (लङ्घ्ये लङ्घ्यदभावः)	चारों ओर से स्पर्श करता है
{ अ॒भिऽप्र॒व॒- सन्	सर्वतः॑श्वासन्	सब ओर से श्वास लेता हुआ
स्त॒न॒यन्	गर्जन्	गरजता हुआ
ए॒ति	गच्छति	जाता है
ना॒न॒द॒त्	अतिशब्दं॑कुर्वन्	अत्यन्त शब्द करता हुआ

संस्कारार्थः।

यदा (अग्निः) महतीं पृथिवीम् अभितः स्पर्शति,

सर्वतःश्वसन् गर्जन् अतिशब्दं कुर्वन् (च) गच्छति तदा  
 अस्य ते (स्फुलिङ्गाः) अत्यर्थं महारूपं कुर्वन्तः बृहत्कायम्  
 अन्धकारम् (च) अनायासेन नाशयन्तो गच्छन्ति । ५।

भाषार्थः ।

जब (अग्निदेव) बड़ी पृथिवी को चारों ओर से  
 छूते हैं (और ) सब ओर श्वास लेते हुए गरजते हुए  
 तथा अत्यन्त शब्द करते हुए चलते हैं तब उसके वे  
 (चिंगारे) अत्यन्त बड़े रूपको करते हुए और बड़े शरीर  
 वाले अन्धकार को सहजसे नाश करते हुए चलते हैं ५

अग्निदेवता जगतोच्छन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

भूषन्नयोऽधिवभ्रूषुनमनते वृषे-  
 वपत्नीरभ्येतिरोरुवत् । ओजाय-  
 मानस्तन्वश्चशुम्भते भीमोनशु-  
 द्धादविधावदुर्गृभिः ॥ ६ ॥

भूषन्	आच्छादयन् (मा० को०)	ढकता हुआ
न	इव	जैसे
यः	यः	जो
अधि	अधि +	-
वभ्रूषु	अधि + वभ्रूषु, वभ्रुवर्णासु	पीले रंग वालियों में
नमन्ते	नमति	झुकता है
वृषाऽइव	वृषभ इव	बैल की न्याह
पत्नीः	पत्नीः	पत्नियों को
अभि	प्रति	की ओर
एति	गच्छति	जाता है
रोरुवत्	अत्यर्थं गर्जन्	अत्यन्त गरजता हुआ

प्रोवायमानः	बलंप्रकटयन्	बल को प्रकट
तन्वः	शरीराङ्गानि (द्वितीयाद्यै प्रथमा)	करता हुआ शरीर के अंगों को
व	व	और
प्रभृभते	भूषयति (अन्तर्भावितव्यर्थः)	सिगारता है
भीमः	भयङ्करः	भयानक
न	इव	की न्याई
शृङ्गा	शृङ्गाणि (श्लोषः)	सींगों को
दविधाव	अत्यर्थधूनयति (लहयैलिट्)	अत्यन्त हिलाता है
दुःसृभिः	प्रहीतुमशक्यः	न पकड़ि जाने वाला
	संस्कृतार्थः।	

यः(अग्निः) आच्छादयन्निव वभ्रवर्णासु(ओष  
धासु) नमति, वृषभइव अत्यर्थं गर्जनं पत्नीः प्रा

सं० सं० १ सू० १४० मं० ७ ( ३८५० )

गच्छति, बलं प्रकटयन् (च) शरीराङ्गानि भूषयति (सः)  
ग्रहीतुमशक्यः (सन्) भयङ्करः (वृषभः) इव शृङ्गाणि  
अत्यर्थं धूनयति ॥ ६ ॥

मापार्थः ।

जो (अग्नि) ढकते हुए की न्याई पीले रंग वाली  
(वृष्टियों) में झुकते हैं, बैल की न्याई अत्यन्त गरजते  
हुए पत्नियों की ओर जाते हैं (और) बल को प्रकट  
करते हुए शरीर के अंगों को चमकाते हैं (वह) न  
पकड़े जाने वाले भयंकर (बैल) की न्याई सींगों को  
हिलाते हैं ॥ ६ ॥

अग्निर्दधता जगती छन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

स॒सं॒स्ति॒रो॒वि॒ष्टि॒रः॒संग्र॑भायति

जा॒न॒न्ने॒व जा॒न॒तो॒र्नि॒त्यं॒आ॒श्रये॑ । पु-

न॒र्व॒र्ध॒न्ते॒अपि॑यन्ति॒दे॒व्यं॑ स॒न्य॒द्वर्षः॑

पि॒चोः॑ कृ॒णव॑ते॒सचा॑ ॥ ७ ॥

सः	सः	वह
सम्स्तितरः	आच्छन्नः	छिपा हुआ
विस्तितरः	प्रकटः	प्रकट
सम्	सम् +	—
गृभायति	सम्+गृभायति, संगृह्णाति, आलिङ्गतीत्यर्थः	आलिङ्गन करता है
जानन्	जानन्	जानता हुआ
एव	एव	ही
जानतीः	जानतीः	जाननेवा लियोंको
नित्यः	नित्यः	नित्य
आ	आ +	—



शये	आ+शये, आशेते (ओपस्तमात्मने- पदेष्वितितलोपः)	सोता है
पुनः	पुनः	फिर
वर्धन्ते	वर्धन्ते	बढ़ते हैं
अपि	अपि +	-
यन्ति	अपि+यन्ति, प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होते हैं
देव्यम्	देवभावम्	देवभाव को
अन्यत्	अन्यत्	दूसरे को
वर्षः	रूपम्	रूप को
पित्रोः	पित्रोः	माता पिता के
कृण्वते	कुर्वन्ति	करते हैं
सचा	सम्भूय	मिल कर

कस्तुतार्यः ।

सः नित्यः (अग्निः) आच्छन्नः प्रकटः ( च ) सन्  
 (ओषधीः) आलिङ्ग्यत, जानन्नेव (च तासु) जानतीषु  
 शेते, (ताओषधयः) पुनर्वर्धन्ते देवभावम् (च) प्राप्नु-  
 वन्ति, (अग्निरोषधश्च) सम्भूय पित्रोरूपम् अन्यत्  
 कुर्वन्ति ॥ ७ ॥

माषार्थः ।

वह नित्य (अग्नि) छिपे हुए (और) प्रकट हुए (ओष-  
 धियों को) आलिङ्गन करते हैं, (और) जानते हुए (उन)  
 जानने वालियों में शयन करते हैं, (वे ओषधियाँ)  
 फिर बढ़ती हैं, (और) देवभाव को प्राप्त होती हैं (अग्नि  
 और ओषधियाँ) मिल कर माता पिता के रूप को  
 दूसरा कर देते हैं ॥ ७ ॥

अग्निदेवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

तमद्युवः केशिनीः संहिरेभिर ऊ-

ध्वास्तस्थुर्मन्त्रुषीः प्रायवेपुनः । ता-

सांजरां प्रमुञ्चन्नेतिमानददसुपरं

# जनयञ्जीवमस्तृतम् ॥ ८ ॥

तम्	तम्	उस को
अग्रुवः	कुमार्यः (भा० को०)	कुमारियाँ
केशिनीः	लम्बकेशयुक्ताः	लम्बे बालों वाली
सम्	सम्	-
हि	खलु	सचमुच
रेभिरे	सम्+रेभिरे, ग्रहन्ति (लट्थेलिट्)	पकड़ती हैं
ऊर्ध्वाः	उन्नताः	ऊंची
तस्थुः	प्र + तस्थुः, प्रतिष्ठन्ति (लट्थेलिट्)	चलती हैं
ममृषीः	मृनाः (पूर्णवर्णदोषः)	मरी हुई

प्र	प्र +	-
आयवे	जीवते	जीते हुए के लिये
पनः०	पुनः	फिर
तासाम्	तासाम्	उन की
जराम्	जरावस्थाम्	जरावस्था को
प्रमुञ्चन्	मोचयन्	छुड़ाता हुआ
एति	गच्छति	चलता है
नानदत्	अत्यर्थं गजन्	अत्यन्त गरजता हुआ
असुम्	प्राणम्	प्राण को
परम्	परम्	उत्तम को
जनयन्	उत्पादयन्	उत्पन्न करना हुआ

जीवम्	जीवम्	जीव को
अस्तृतम्	अनाच्छादितम्	न दबने वाले को

संस्कृतार्थः ।

तं लम्बकेशयुक्ताः कुमार्यः खलु संगृह्णन्ति (ताः) मृताः जीविते (अग्नये) पुनः उन्नताः (सत्यः) प्रतिष्ठन्ति (सः) तासां जरावस्थां मोचयन् पं प्राणं अनाच्छादितं जीव--(धारणसामर्थ्यं च) उत्पादयन् अत्यर्थं गर्जन् च) गच्छति । ८ ।

भाषार्थः ।

सचमुच उसको लम्बे बालों वाली कुमारियाँ पकड़ती हैं (वे) मरी हुई जीते हुए (अग्नि)के लिये फिर उठ खड़ी (होकर, चलती हैं (वह) उनकी जरावस्था को छुड़ाते हुए उत्तम प्राण (और) न दबने वाली जीव(धारण की शक्ति को) उत्पन्न करते हुए और अत्यन्त गरजते हुए चलते हैं ॥ ८ ॥

अग्निर्वेशता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

अधीवासंपरिमातूरिहन्नह

तुवि॒ग्रेभिः॑ स॒त्त्वभि॑र्या॒तिविज॑यः । व-  
 यो॒दध॑त्प॒द्मते॑रेरि॒हृत्स॒दा न॒श्येनी॑  
 स॒चते॑व॒र्तनो॑रि॒ह ॥ ६ ॥

अ॒धी॒वा॒सम्	उपरिधार्यमाणं वस्त्रम्	ओढ़नी को
परि॑	परितः	चारों ओर से
मा॒तुः	मातुः	माता की
रि॒हन्	लिहन्	चाटना हुआ
अ॒ह	इतिप्रसिद्धम्	यह प्रसिद्ध है
तुवि॒ग्रेभिः॑	प्रभूतगमनेः	बहुत चलने वालों से
स॒त्त्वभिः॑	जीवैः	जीवों से
या॒ति	वि+याति, दृ० गच्छति	दूर जाता है

वि	वि +	-
ज॒यः	जयं प्राप्नुवन् (भा० को०)	जयको प्राप्त करता हुआ
व॒यः	वलम्	वल को
द॒धत्	प्रयच्छन्	देता हुआ
प॒त्स्वते	पादवते	पैरोंवाले के लिये
रेरि॑हत्	अत्यर्थं लिहन्	अत्यन्त चाटता हुआ
स॒दा	सदा	सदा
अ॒नु	पश्चात्	पीछे
प्र॒येनी	श्यामवर्णः	काले रंग वा
स॒च॒ते	सेवते	सेवन करता है
व॒र्त॒निः	मार्गः	मार्ग

अह

इतिप्रसिद्धम्

यह प्रसिद्ध है

संस्कृतार्थः ।

(अग्निः) मातुरुत्तरीयं परितोलिहन् जयंप्राप्नुवन्  
(च) प्रभूतगमनैः जीवैः सह दूरं गच्छति इति प्रसिद्धम्  
(सः) पादवते घलं प्रयच्छन् सदा अत्यर्थं लिहन्  
(गच्छति) इयामवर्णो मार्गः (च) तमनुसेवते  
(एतदपि) प्रसिद्धम् ॥ ९ ॥

मापार्थः ।

(अग्नि) माता की ओठनी को सब ओर से चाटते  
हुए (और) जय को प्राप्त करते हुए बहुत चलने वाले  
जीवों के साथ दूर तक जाते हैं यह प्रसिद्ध है, दुपाये  
और चौपाये के लिये घल को देते हुए सदा अत्यन्त  
चाटते हुए (चलते हैं और) काले रंग का सारा उनके  
पीछे २ चलता है यह भी प्रसिद्ध है ॥ ९ ॥

अग्निदेवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

अस्माकमग्नेमधवत्सुदीर्घ-

ह्यध्रुवसीवान्वपभोदमूनाः । अवा-



स्या॒ग्नि॒शु॒मती॒रदी॒दे॒र्व॒मै॒वयु॒तसु॒परि॒-

ज॒र्भुरा॑णः ॥ १० ॥

अ॒स्माक॑म्	अस्माकम्	हमारे
अ॒ग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
म॒धव॑त्सु	धनवत्सु	धनवानों में
दी॒दि॒हि	दीप्यस्व	चमको
अ॒ध	इदानीम्	अब
श्र॒वसी॑वान्	श्रवसनवान्	श्रवास लेता हुआ
वृ॒षभः	वृषभः	घैल
द॒मूनाः	दममनाः (दमविशुद्धनाम निर्घ० ३१४)	घर को प्यार करने वाला

अवऽअस्य	परित्यज्य	स्याग कर
शिशुऽमतीः	शिशुसम्बन्धिनीः (लीलाः)	बचपन की (लीलाओं)को
अदीदेः	भृशंदीप्यस्व	खूब चमको
वर्मऽद्वव	कवचमिव	कवच को मानो
युतऽसु	युद्धेषु	युद्धों में
{ परिऽजर्भु- राणः	परिवृहन् (भा० को०)	पहनता हुआ

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! गृहमताःश्वसन् वृषभः (त्वम्) इदानीम्  
अस्माकं धनवत्सु दीप्यस्व, (त्वम्) शिशुसम्बन्धिनीः  
(लीलाः) त्यक्त्वा युद्धेषु कवचमिव परितो वृहन् भृशं  
दीप्यस्व ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! घर को प्यार करने वाले, श्वास लेते  
हुए वंल (आप) अब हमारे धनवानों में चमकें आप

क०मं०१५०१४०मं०११ ( ३८१२ )

वचपन की (लीलाओं) को त्याग कर युद्ध में कवच को  
मानो पहनते हुए खूब चमकें ॥ १० ॥

अग्निदेवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

इ॒दम॑ग्ने॒सु॒धितं॑द॒र्धिता॑दधि॒ प्रे-

यादु॑चिन्सन्मनः॒प्रेयो॑अस्तुते । यत्त॑

शुक्रा॑न्त॒न्वो॑श्च॒रोच॑तेशुचि॒ तेना॒स्मभ्य॑

वन॑से॒रत्न॒सात्व॑म् ॥ ११ ॥

इ॒दम्

इ॒दम्

यह

अ॒ग्ने

हे अग्ने!

हे अग्नि

सु॒धित॑म्

सु॒धुनि॑वेदितम्

भली प्रकार निवे-  
दन किया हुआ

दुः॒धिता॑त्

दु॒धुनि॑वेदितात्

बुरी प्रकार निवेदन  
किये हुए से

अधि	+अधि	-
प्रियात्	प्रियात्	प्रिय से
ऊम्०	खलु	सचमुच
चित्	अपि	भी
मन्मनः	स्तोत्रात्	स्तोत्र से
प्रेयः	प्रियतरम्	अधिकप्रिय
अस्तु	अस्तु	हो
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
यत्	यत्	जो
ते	तव	तेरा
शुक्लम्	दीप्तम्	प्रकाशमान

तन्वः	शरीरम् (प्रथमार्थे पण्ठी)	शरीर
रोचते	रोचते	चमकता है
शुचि	निर्मल	निर्मल
तेन	तेन	उससे
अस्मभ्यम्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
वनसे	आ+वनसे, सर्वतः कामयस्व	सब ओर से, कामना कर
रत्नम्	रमणीयं धनम्	रमणीय धन को
आ	आ +	-
त्वम्	त्वम्	तू

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! इदं सुनिवेदितम् ( स्तोत्रम् ) खलु  
प्रियादपि सुनिवेदितात् स्तोत्रात् तुभ्यम् प्रियतरम्  
अस्तु, यत् तव दीप्तं शरीरं निर्मलं रोचते तेन त्वम्  
अस्मभ्यं रमणायं धनं सर्वतः कामयस्व ॥ ११ ॥

मापार्यः ।

हे अग्नि ! यह भली प्रकार निवेदन किया हुआ ( स्तोत्र ) बुरी तरह निवेदन किये हुए प्रिय स्तोत्र से भी आप के लिये अधिक प्रिय हो, जो आप का प्रकाशमान शरीर निर्मल चमकताहूँ उससे आप हमारे लिये रमणीय धन को सब ओर से कामना करें ॥ ११ ॥

अग्निर्देवता त्रिष्टुप्छन्दः ११११११११

रथाय॑ नाव॑मु॒तनो॑गृ॒हाय॑ नित्या-  
 रिचा॑प॒द्वती॑रास्यग्ने । अ॒स्माकं॑ वी॒रा-  
 उ॒तनो॑म॒घो॒नो ज॒नांश्च॒यापा॒रया-  
 च्छ॒र्म॒याच॑ ॥ १२ ॥

रथाय	रथिने (मा०को०)	रथ वाले के लिये
नावम्	नावम्	नाव को

उ॒त	च	और
नः	अस्माकम्	हमारे
गृ॒हाय	एहजनाय	घर के मनुष्यों के
{ नित्यऽअ- रि॒त्राम्	नित्यमुदकाकर्षण काष्ठोपेताम्	लिये सदा चप्पे वाली को
प॒त्ऽवतीम्	पादोपेताम्	पैरों वाली को
रा॒सि	देहि	दे
अ॒ग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
अ॒स्माकम्	अस्माकम्	हमारे
वी॒रान्	वीरान्	वीरों को
उ॒त	अपि	भी

नः	अस्माकम्	हमारे
म॒घो॒नः	ध॒न॒व॒तः	ध॒न॒वा॒नों को
ज॒ना॒न्	म॒नु॒ष्या॒न्	म॒नु॒ष्यों को
च	च	और
या	या	जो
पा॒र॒या॒त्	पा॒र॒ये॒त्	पा॒र करे
श॒र्म	श॒रण॒म्	श॒रण॒को
या	या	जो
च	च	और

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! (त्वम् ) अस्माकं गृहजनाय रथिनेच  
नित्यारित्रां पादोपेताम् (च) नावंदेहि या अस्माकं वी-  
रान् अस्माकं धनवतो मनुष्याश्चापि पारयेत्, या च  
शरणरूपा (स्यात्) ॥ १२ ॥



भाषार्थः ।

हे अग्नि ! (आप) हमारे घरके मनुष्यों के लिये और रथीयोधा के लिये ऐसी नाव को दें जिस के चप्पे सदा चलते रहें और जो पैरों वाली हो, हमारे धीरों को और हमारे धनी मनुष्यों को भी पारलंघावे और जो शरण रूप (हो) ॥ १२ ॥

अग्निदेवता त्रिष्टुप् छन्दः १११११११११

अ॒भी॒नो॒अ॒ग्न॒उ॒क्थ॒मि॒ज्जु॒गु॒र्या॒

द्या॒वा॒क्षा॒मा॒सि॒न्ध॒व॒प्र॒च॒स्व॒गू॒ताः ।

ग॒व्यं॒य॒व्यं॒यन्तो॒दी॒र्घा॒हि॒षं॒वर॒म॒रु॒य॒यो

वर॒न्त ॥ १३ ॥

अ॒भि	अ॒भि+	-
नः	अ॒स्मा॒कम्	ह॒मा॒रे
अ॒ग्ने	हे अ॒ग्ने !	हे अ॒ग्नि

उक्थम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
इत्	(पूरणः)	—
जुगुर्याः	अभि+जुगुर्याः, प्रोत्साहय	खूबउत्साहितकरो
द्यावाक्षामा	द्यावापृथिव्यौ	द्यौ और पृथिवी
सिन्धवः	नद्यः	नदियाँ
च	च	और
स्वऽगूर्ताः	स्वयमेवगामिन्यः	स्वयं चलने वाली
गव्यम्	गवादिपशुम्	गौ आदि पशु को
यव्यम्	यवादिधान्यम्	जौ आदि धान्यक
यन्तः	प्रापयन्त्यः	प्राप्त कराती हुई
दीर्घा	दीर्घाणि	लंबे

अ॒ह्ना	अ॒हानि	दि॒नों को
इ॒ष॒म्	ब॒ल॒म्	ब॒ल को
व॒र॒म्	व॒र॒णी॒य॒म्	उ॒त्त॒म को
अ॒रु॒ण॒यः	उ॒ष॒सः	उ॒षा॒एँ
व॒र॒न्त	वृ॒ण॒व॒न्तु	व॒रें

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! अस्माकं स्तोत्रं प्रोत्साहय, यावापृथिव्यो-  
स्वयंगामिन्योनद्यश्च (अस्मान्) गवादिपशुं यवादि-  
धान्यं दीर्घायुः (च) प्रापयन्तु, उषसः (अस्मदर्थम्)  
घलं वरणीयम् (पदार्थं च) वृण्वन्तु ॥ १३ ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! हमारे स्तोत्र को उत्साहित करो, यावा-  
पृथिवी और स्वयं चलने वाली नदियाँ (हम को) गौ  
आदि पशु, यव आदि अनाज और लम्बा आयु प्राप्त  
करावें, उषाएँ (हमारे लिये) घल को (और) घरने योग्य  
(पदार्थ) को घरें ॥ १३ ॥

इति ऋत्वारिशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।